गीता और क़ुरान

सुन्दरलाल

विश्ववाणी कार्यालय, इलाहाबाद
१९४४

एक बात

पण्डित सुन्दरलाल जी ने गीता धर्म पर सन् १९४१ की 'विश्ववाणी' में एक लेख माला लिखी थी। पाठकों को वह बहुत पसन्द आई। सैकड़ों दोस्तों ने यह ख़्वाहिश ज़ाहिर की कि .कुरान की तालीम पर भी पण्डित जी अपने विचार लिखें। पण्डित जी ने .कुरान की तालीम पर अपने ये विचार उसी समय लिख डाले। .कुरान की आयतों का तर्जुमा उन्होंने मौलाना अबुल कलाम आज़ाद को भी सुना लिया था जो उन्होंने बहुत पसन्द किया। यह विचार भी उन्हें बहुत पसन्द आया कि गीता और .कुरान दोनों की शिक्षा को एक साथ किताब की शकल में छाप दिया जावे। सन् १९४२ में ही यह किताब छपनी शुरू हो गई थी और आधी से ज़्यादा छप भी गई थी; लेकिन इसी बीच हम सब गिरिफ़्तार होकर नज़रबन्द कर दिये गये और यह किताब अधूरी छपी हुई दो बरस तक पड़ी रही। हमें अफ़सोस है कि दोस्तों को एक लम्बे अरसे तक इस किताब के लिये रास्ता देखना पड़ा।

'हज़रत मुहम्मद और इसलाम' की तरह इसकी बोली भी आसान रखी गई है कि सब समझ सकें। काग़ज़ मिलते ही इसे उर्दू लिखावट में भी छापने का इन्तज़ाम किया जायगा।

साउथ मलाका
इलाहाबाद

विश्वम्भरनाथ

ठीक करके पढ़िये

भूमिका

पृष्ठ ९, लाइन ४ में (८-७; ७४-३०) की जगह (२-१५४, २६१; ९-६०)

,, ,, ,, १५ ,, (२-१, १५) ,, ,, (२-११५)

,, ,, ,, १७ ,, (३२-६२) ,, ,, (२२-६२)

,, १२ ,, ११ ,, (३-४८) ,, ,, (३-४३)

,, १५ ,, २ ,, मच्छ्रद्धः ,, ,, यच्छ्रद्धः

,, ,, ,, १२ ,, (७-२३) ,, ,, (१४-२६)

,, १७ ,, १० ,, (१०-११) ,, ,, (१५-१५ वग़ैरह)

,, १८ ,, १२ ,, दिल ,, ,, मेरे दिल

,, २३ ,, १९ ,, शुबह ,, ,, सुबह

मूल पुस्तक

पृष्ठ ४३ ,, २१ ,, शक़्ले ,, ,, शक्ले

,, ६२ ,, १३ ,, (१०-४०, ४३) ,, ,, (१-४०, ४३)

,, ६५ ,, १३ ,, (३-२६, २९९) ,, ,, (३-२६, २९)

,, ६९ ,, ७ ,, ६-२६) ,, ,, ६-२९)

,, ७४ ,, ३ ,, मज़मुये ,, ,, मजमूए

,, ८१ ,, १८ ,, मेहमानवाज़ी ,, ,, मेह्मॉनवाज़ी

,, ९१ ,, १० ,, (२२-८२) ,, ,, (२०-८२)

पृष्ठ		लाइन		में		की जगह
पृष्ठ	९३	लाइन	४	में ज्ञान	की जगह	इनसान
,,	९७	,,	४	,, (२-४५, ४६)	,, ,,	(२९-४५, ४६)
,,	११७	,,	२०	,, (२-११६)	,, ,,	(२-२१६)
,,	११९	,,	२१	,, (९८	,, ,,	(८
,,	१३१	,,	१५	,, (२०-२६७)	,, ,,	(२-२६७)
,,	१४०	,,	२१	,, 192	,, ,,	1192
,,	१४५	,,	९	,, वह ही तुम्हें	,, ,,	(वह ही तुम्हें मौत देगा। फिर वह ही तुम्हें
,,	१४८	,,	७	,, हो सकतीं	,, ,,	हो सकतीं) उनके दिलों को घेर लेगी
,,	१५०	,,	४	,, (६७-२०)	,, ,,	(५७-२०)
,,	१५९	,,	१३	,, ठीक ठीक	,, ,,	ठीक ठाक
,,	१६१	,,	१८	,, ग़ैर शादी शुदा	,, ,,	शादी शुदा
,,	१६८	,,	४	,, अच्छे बड़े	,, ,,	अच्छे बुरे
,,	,,	,,	२१	,, कंजुल-अम्माल	,, ,,	कंज़ुल-अम्माल
,,	७०१	,,	४	,, "तसलीम"	,, ,,	"तमसील"

भूमिका

दुनिया के सैकड़ों छोटे बड़े धर्मों, मज़हबों, या मतमतान्तरों में छै ख़ास माने जाते हैं--हिन्दू धर्म, यहूदी धर्म, ज़रथुस्त्री यानी पारसी धर्म, बौद्ध धर्म; ईसाई धर्म और इसलाम। इनमें जहां तक पता चलता है हिन्दू धर्म सब से पुराना और इसलाम सब से हाल का है। इसलाम को जन्म लिए साढ़े तेरह सौ वर्ष के क़रीब हुए। इसके मानने वालों की तादाद आज सारी दुनिया में क़रीब तीस करोड़ है। हिन्दू धर्म के मानने वाले सिवाय हिन्दुस्तान के बाक़ी दुनिया में नहीं के बराबर हैं। दुनिया में सब से ज़्यादह तादाद ईसाइयों और बौद्धों की है।

इन छै बड़े बड़े धर्मों की ख़ास किताबों, ऋग्वेद, तौरेत, ज़ेन्द अवस्ता, त्रिपिटक, इंजील और क़ुरान को अगर बराबर बराबर रख कर ध्यान से पढ़ा जावे तो इन सब के बुनियादी उसूल एक से नज़र आते हैं, और इनकी रिवायतें, कथा कहानियें और कहीं कहीं फ़िक़रे के फ़िक़रे मिलते चले जाते हैं। इन्हें इस तरह मिलाकर पढ़ने वाले को इस बात में ज़रा सा भी शक नहीं रह जाता कि ये सब धर्म एक ही जड़ से निकले हैं, और एक ही बड़े पेड़ की दूर दूर तक फैली हुई टहनियां हैं, और हर टहनी अपनी अपनी जगह सच्चाई की खोज करने वाली करोड़ों दुखी आत्माओं को छाँह और शान्ति देती रही है, और अब भी दे रही है।

क़ुरान के "सूरे अन्नूर" में ईश्वर की क़ुदरत और उसकी हम्द (स्तुति) को पढ़कर फ़ौरन् ऋग्वेद की ऋचाओं की याद आने लगती है। क़ुरान में ईश्वर का सब सब से बड़ा नाम 'अल्लाह' है, ऋग्वेद में ईश्वर के नामों में से एक नाम 'इला' है, जो संस्कृत 'इल' धातु से निकला और है जिसके माइने 'स्तुति करना' या 'पूजा करना' है। ऋग्वेद का एक पूरा सूक्त 'इला' के नाम पर है। क़ुरान का 'रब्ब' ऋग्वेद का सारी दुनिया को पालने वाला 'रै' है। क़ुरान की सब से शुरू की दुआ 'एहदेनस्सेरातल् मुस्तक़ीम'—'हमें सीधे रास्ते पर ले चल'—और ऋग्वेद का 'अग्ने नय सुपथा' दोनों एक दूसरे का लफ़्ज़ी तरजुमा हैं। वेदों का 'एकमेवाद्वितीयम्' और इसलाम का 'वहदहूलाशरीक लहू' दोनों के ठीक एक ही माइने हैं—'वह एक है, उस जैसा कोई दूसरा नहीं।'

यही हालत दूसरे सब मज़हबों की किताबों की है। क़ुरान का 'ला इलाह इल्लाहू' या जिस शक्ल में यह जुमला कलमे के अन्दर आया है यानी 'ला इलाह इल्लल्लाह' और ज़ेन्द अवस्ता का 'नेस्त ऐज़िद मगर यज़दान' दोनों एक दूसरे का लफ़्ज़ी तरजुमा हैं। क़ुरान में 'बिसमिल्लाहहिर्रहमानिर्रहीम' ठीक ११४ दफ़े आया है, जिसका मतलब है—"साथ नाम उस अल्लाह के जो रहम करने वाला और दयावान है।" ईरान के ज़रथुश्ती विद्वान सब अपनी किताबों को "बनाम यज़दान बख़्शिशगीर दादार" से शुरू करते थे। दोनों का ठीक एक ही मतलब है।

भगवत् गीता और क़ुरान मजीद में किसी भी प्रेमी और खोजी

को जगह जगह एक सी और मिलती हुई चीज़ें दिखाई देंगी। जिस तरह गीता में बार बार सब काम 'ईश्वरार्पण' करने की आज्ञा दी गई है उसी तरह क़ुरान में बार बार हर काम 'फ़ी सबीलिल्लाह' (८-७;७४-३०) यानी अल्लाह की राह में या अल्लाह के लिये करने का हुकुम है। जिस तरह गीता में ईश्वर को जगह जगह 'ज्योतिषामपि तज्ज्योतिः' (१३-१७) यानी रोशनिओं की रोशनी और 'प्रभास्मि शशिसूर्ययोः' (७-८) यानी चाँद और सूरज की रोशनी कहा गया है, उसी तरह क़ुरान में अल्लाह को बार बार 'नूरुन अला नूर' यानी रोशनी पर रोशनी (२४-३५) और 'नूरुस्स-मावाते वल अर्ज़' यानी आसमानों और ज़मीन की रोशनी कहा गया है।

जिस तरह गीता मे ईश्वर को 'विश्वतोमुखम्' (११-११;१०-३३) सब तरफ़ मुँह वाला, कहा गया है उसी तरह क़ुरान में कहा गया है 'फ़एनमा तवल्लू फ़सम्म वजहुल्लाह' यानी जिधर को भी तुम मुड़ो उधर ही अल्लाह का मुँह है (२-१,१५)। गीता में ईश्वर को 'सत्य' कहा गया है। क़ुरान में लिखा है 'अल्लाहो वल हक़्क़ो' (२२-६२) यानी ईश्वर सत्य है।

न सिर्फ़ गीता के श्लोकों और क़ुरान की आयतों में ही हमें यह साम्य दिखाई देता है बल्कि गीता की बातों का अगर हम मशहूर मुसलमान सूफ़ी सन्तों की कही हुई चीज़ों के साथ मुक़ाबला करें तो दोनों में हमें वही यकरंगी और वही तसवीर नज़र आती है।

गीता के पहले अध्याय के आख़ीर में अर्जुन ने कहा है 'अग र

मुझ निहत्ये को और सामना न करने वाले को ये हथियार बन्द धृतराष्ट्र के बेटे लड़ाई में मार डालें तो मेरे लिये और भी अच्छा हो।' इस भावना (जज़बे) को एक मुसलमान सूफ़ी इन लफ़्ज़ों में अदा करता है—

कुजा ख़ुद शुक्र ईं नेमत गुज़ारम
कि ज़ोरे मर्दुम आज़ारी नदारम

यानी मैं इस नेमत का कहाँ तक शुक्र अदा करूँ कि मुझमें किसी इनसान को दुख पहुँचाने की ताक़त नहीं है।

गीता में लिखा है कि 'सब प्राणी शुरू में अव्यक्त थे, बीच की हालत में व्यक्त होते हैं और अन्त में फिर अव्यक्त हो जाते हैं, इस-लिये क्या चिन्ता है।' (२-२८)। ठीक यही बात एक मुसलमान सन्त ने कही है—

दर अदम बूदेमो आख़िर दर अदम ख़ाहेम रफ़्त
ईं तमाशाए जहाँरा मुफ़्त मी बीनेम मा।

यानी हम अव्यक्त थे और आख़ीर में फिर अव्यक्त ही होंगे। यह बीच का तमाशा हम मुफ़्त में देख रहे हैं। मौलाना रूम ने लिखा है—

सूरत अज़ बेसूरती आमद बुरूँ
बाज़ शुद किन्ना एलयहे राजेऊन।

यानी सब सूरतें बेसूरती से निकली हैं और फिर सब उसी अल्लाह में जाकर मिल जाती हैं।

गीता में बार बार अपने अन्दर ईश्वर को देखने का उपदेश दिया गया है। एक मुसलिम सूफ़ी इस पर कहता है—

ग़ाफ़िल तू किधर भटके है, कुछ दिल की ख़बर ले
शीशा जो बग़ल में है, उसी में तो परी है।

गीता में कहा गया है "सब जानदारों के लिये जो रात है मुनि उसमें जागता है और जिस समय और सब जागते हैं वह देखने वाले मुनि के लिये रात है" (२-६९)। इस पर एक मुसलिम सूफ़ी कहता है—

वो जागते हैं जो दुनिया को ख़्वाब समझे हैं

और,

हरके वेदारस्त ऊ दर ख़ाबतर
हस्त वेदारीश अज़ ख़ाबश बतर।

यानी कि जो शख़्श समझता है कि वह जगा हुआ है वह हक़ीक़त में सो रहा है, उसका जागना उसके सोने से बदतर है।

गीता में स्थित प्रज्ञ होना यानी बुद्धि का क़ायम होना और दिल का निस्संग यानी बेलाग होना सबसे ऊँची चीज़ बताई गई हैं। मुहम्मद साहब की एक मशहूर हदीस है जिसमें उन्होंने कहा है कि—

"अच्छा काम वह है जिससे आदमी की रूह को सकून यानी स्थिरता मिलती है और दिल में इतमीनान पैदा होता है और गुनाह वह है जिससे न रूह को सकून होता है न दिल में इतमीनान।"

गीता में कहा गया है कि "अक़्लमन्द आदमी को चाहिये कि जो कम समझ आदमी अच्छे कामों में लगे हुए हैं उनकी बुद्धि को

डाँवाडोल न करे।" (३-२६)। मुहम्मद साहब ने कहा है—"लोगों से उनकी अक़्लों के मुताबिक़ बात करो।"

गीता का कहना है कि—"काम और क्रोध जो दोनों रजो गुण से पैदा होते हैं सबको खा जाने वाले और पाप की सबसे बड़ी जड़ हैं, यही दुनियाँ में आदमी के दुश्मन हैं।" (३-३७)।

मौलाना रूम कहते हैं —

ख़श्मो शहवत मर्दरा अहवल कुनद
ज़िस्त क़ामत मर्दरा मबदल कुनद।

यानी काम और क्रोध आदमी को अन्धा बना देते हैं और उसकी ठीक जगह से आदमी को डाँवाडोल कर देते हैं।

गीता में ईश्वर को 'बुद्धि से परे' (३-४८) और अनिर्वचनीय बताया गया है। एक मुसलमान सूफ़ी के शब्दों में

ख़ारिज अज़ अक़्लो क़यासो फ़हम जुमला ख़ासो आम
दूर अज़ हद्दे के बाशद हीतये अज़कारेमा।

यानी ईश्वर हम सब की अक़्ल, हमारे अन्दाज़े और हमारी समझ से बाहर है। जहाँ तक हम बात-चीत कर सकते हैं उस हद से वह बाहर है।

गीता में श्रीकृष्ण ने कहा है—

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः। (४-११)।

यानी जो लोग जिस तरह मुझे ढूंढ़ते हैं मैं उसी तरह उनको मिलता हूँ, लोग सब तरफ़ से चलकर मुझ तक ही पहुँचते हैं।

एक सूफ़ी का कहना है—

हमाकस तालिबे यारन्द चे हुशियार चे मस्त
हमा जा ख़ानए इशक़स्त चे मसजिद चे कनिश्त

यानी सब लोग उसी प्रीतम को खोज रहे हैं, क्या हुशियार और क्या मस्त; सब उसी के प्रेम के घर हैं, क्या मसजिद और क्या मन्दिर।

गीता में कहा गया है—"हवन की सामग्री भी ब्रह्म है, घी भी ब्रह्म है, आग भी ब्रह्म है, हवन करने वाला भी ब्रह्म है, और जो आदमी इस ब्रह्म-कर्म में लगा हुआ है वह ब्रह्म तक ही पहुंचता है।" (४-२४)।

सूफ़ी का कहना है—

ख़ुद कूज़ाओ ख़ुद कूज़ागरो ख़ुद गिले कूज़ा ख़ुद रिन्द सबूकश
ख़ुद बरसरे आँ कूज़ा ख़रीदार बरामद बिशकस्तो रवाँ शुद।

यानी वह आप ही प्याला है, आप ही कुम्हार है, आप ही प्याले की मिट्टी है और आप ही उस प्याले से पीने वाला है। वह ख़ुद आकर प्याला ख़रीदता है और आप ही प्याले को तोड़कर चल देता है।

गीता का कहना है—"जिसने अपनी आत्मा को जान लिया उसने परमात्मा को जान लिया, असली ज्ञान वह है जिससे आदमी सब जानदारों को अपने अन्दर और सबको ईश्वर के अन्दर देख सके।" (४-३५)।

हदीस में लिखा है—

'मन अरफ़ नफ़्सहू फ़क़द अरफ़ रब्ब हू'

यानी जिसने अपने आप को पहचान लिया उसने अपने रब्ब को पहचान लिया।

गीता में लिखा है—"अपने सब कामों को ईश्वर के ऊपर छोड़ कर जो बेलाग होकर (अपनी ख़ुदी को अलग रख कर) काम करता है उसे पाप नहीं लगता" (५-१०)। क़ुरान में लिखा है—"जो अल्लाह पर तवक्कुल (निर्भर) करता है उसके लिए अल्लाह काफ़ी है।"

गीता में लिखा है—"जो आदमी अपनी ख़ाहिशों के बस में होकर फल की तरफ़ लगा रहता है वही कर्मों के बन्धन में फँसता है।" (५-१२)। मौलाना रूम की मशहूर मसनवी में लिखा है—

आफ़ते ईं दर हवाओ शहवत अस्त
वर्ना ईंजा शरबत अन्दर शरबत अस्त।

यानी सारी आफ़त इच्छा और काम में है, नहीं तो इस दुनियाँ में शरबत ही शरबत है।

गीता में लिखा है कि ब्रह्म निर्वाण यानी निजात उन लोगों के लिये है जिन्होंने अपने आप को जान और पहचान लिया है (५-२६)। मौलाना रूम की मसनवी में है—

हरके नफ़्से ख़ेश रा दीदो शनाख़्त
अन्दर इस्तिकमाले ख़ुद दो अस्पताख़्त।

यानी जिस किसी ने अपने आप को देख लिया और पहचान लिया वह फिर अपनी आत्मा के कमाल की तरफ़ तेज़ी से दौड़ने लगता है।

गीता में लिखा है कि—

श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः। (१७-३)।

यानी मनुष्य श्रद्धामय है, जिस किसी की जैसी श्रद्धा है वैसा ही वह ख़ुद होता है।

ईरान के मशहूर सन्त शम्स तबरेज़ का कहना है कि "हर ज़र्रा अपने से मिलने की तरफ़ हरकत करता है। जिस आदमी का जैसा भीतर से रुझान होता है वैसा ही वह बन जाता है।"

गीता में, क़ुरान में और सूफ़ियों और सन्तों के शब्दों में बार बार संतोष (कनाअत) और अपनी आत्मा (नफ़्स) पर क़ाबू-इन दो चीज़ों पर सबसे ज़्यादा ज़ोर दिया गया है।

गीता में लिखा है कि "मेरे भक्त मुझी में लीन हो जाते हैं।" (७-२३) इत्यादि।

सन्त फ़ैज़ी के अनुसार ईश्वर कहता है कि—

हर श्राँकस बमन आशना मी शवद,
ख़ुदावन्द हरदो सरा मी शवद।

यानी जिस किसी ने मुझसे प्रेम किया और मुझे पहचान लिया दोनों जहान का मालिक हो गया।

गीता कहती है कि "सब इन्द्रियों के दरवाज़ों को बन्द करके, मन को अपने अन्दर रोक कर ही आदमी परमगति को प्राप्त कर सकता है।" (८-१२, १३)।

मौलाना रूम ने लिखा है—

चश्म बन्दो लब्बे बन्दो गोशबन्द
गर न बीनी नूरे हक़ बरमन बेख़न्द।

यानी अपनी आँख, ओठ और कान तीनों को बन्द करले। फिर अगर तुझे अल्लाह का नूर दिखाई न दे तो हम पर हँसना।

गीता में ईश्वर को बार बार 'अव्यक्त' कहा गया है। मुसलमान सूफ़ी उसे 'बे निशान' कहते हैं। दोनो का एक ही मतलब है।

गीता में लिखा है कि "ये सारा जगत मुझसे ही व्याप्त है और सब प्राणी मेरे ही अन्दर रहते हैं।" (९-४)।

क़ुरान में लिखा है—

"वल्लाहो बेकुल्ले शअइम्मुहीत"

यानी अल्लाह हर चीज़ को घेरे हुए है।

मुसलमान सूफ़ी कहता है—

काबे में, कलीसा में हमने तो जहाँ देखा
ए क़स्रे वफ़ा तेरी तामीर नज़र आई।

गीता की आज्ञा है—

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्,
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्॥

(९-२७)।

यानी हे अर्जुन! तू जो कुछ करे, जो कुछ खावे, जो कुछ यज्ञ करे, जो कुछ दान दे, जो कुछ तप करे सब ईश्वर के लिये ही कर।

क़ुरान में लिखा है—

"क़ुल इन्ना सलाती व नुसोकी व मेहयाया व ममाति लिल्लाहे रब्बिल आलमीन।"

यानी कहो कि मेरी नमाज़, मेरी पूजा, मेरी ज़िन्दगी और मेरी

गीत सब उस अल्लाह के लिये हैं जो सब दुनियाओं का पालने वाला है।

गीता में लिखा है कि "जो मेरी भक्ति करते हैं वे मुझमें रहते हैं और मैं उनमें रहता हूँ।" (९-२९)।

सूफ़ी कहता है—

क दरदिले मनस्त व दिलेमन वदस्तेक
चू आइना वदस्ते मनो मन दर आइना।

यानी वह मेरे दिल में है और मेरा दिल उसके हाथ में है जिस तरह शीशा मेरे हाथ में है और मैं शीशे में हूँ।

गीता में कई बार आया है "ईश्वर भक्तों के हृदय में वास करते हैं।" (१०-११) मसनवी में लिखा है कि—"मुहम्मद साहब ने कहा है कि ईश्वर कहता है कि मैं ऊपर या नीचे, ज़मीन में या आसमान में या अर्श पर कहीं नहीं समा सकता, लेकिन मैं विश्वास रखने वाले (मोमिन) के दिल में रहता हूँ। जो मुझे ढूँढ़ना चाहे वहीं ढूँढ़ ले।"

गीता में लिखा है कि "मैं सब प्राणियों का शुरू, बीच और आख़ीर हूं।" (१०-२०)।

क़ुरान में लिखा है—

"होवल अव्वल वल आख़िर वज़् ज़ाहिर वल बातिन"

यानी वह ईश्वर ही शुरू है, अव्वल है, वही आख़ीर है, वही ज़ाहिर है और वही छिपा हुआ है।

गीता में लिखा है "कि आसमान में एक हज़ार सूरज अगर एक साथ चमक उठें तो भी ईश्वर की चमक को नहीं पहुंच सकते।" (११-१२)।

शम्स तबरेज़ का कहना है कि—

"ऐ मेरी आँख, मेरी अक़्ल और मेरी जान, तीनों की रोशनी मेरे दिल के तख़्त के ऊपर तू ही सुल्तान है। जिस तरह लाखों चाँद और सूरज बिना आसमान के चमक रहे हों ऐसी तेरी रोशनी है। तू ही स्थिर है और तू ही हरकत में है। तू एक रस है, और तू ही हज़ारों रूप वाला है। तू ही नीचे है और तू ही ऊपर है। तू ही तन है और तू ही जान है।"

गीता में लिखा है—"हे विष्णु! तेरी जला डालने वाली लपटों से सारी सृष्टि जल रही है।" (११-३०)। शम्स तबरेज़ ने लिखा है—"ईश्वर यानी सत्य ने एक आग लगा रक्खी है। असत्य उसमें जल रहा है। वह आग दिल को जला डालती है। ईश्वर करे वह आग दिल में लग जाये।"

निर्गुण और सगुण उपासना के फ़रक़ को बताते हुए गीता में लिखा है कि "जो ईश्वर के अव्यक्त रूप में अपने दिल को लगाते हैं उन्हें कठिनाई अधिक होती है।" (१२-५)।

इसलामी दर्शन की मशहूर किताब 'गुलशने राज़' में लिखा है—

बुतई जा मज़हरे इश्क़ अस्तो वहदत
बुअद ज़ुन्नार बस्तन अक़्दे ख़िदमत।

चुँ अशिया हस्त हस्ती रा मज़ाहिर
अज़ाँ जुमला बुत हम यक बाशद आख़िर।

मुसलमाँ गर बेदानिस्ते कि बुत चीस्त
बेदानिस्ते कि दीं दर बुत परस्तीस्त।

अगर मुशरिक ज़ बुत आगाह गश्ते
कुजा दर दीन ख़ुद गुमराह गश्ते।

वु हम गर ज़ न बीनी हक़्क़े पिनहाँ
बे बायद् के न गोयनदत मुसलमाँ।

यानी मूर्ति इस दुनियाँ में प्रेम की और ईश्वर की एकता की निशानी है। जनेऊ पहनना ईश्वर की सेवा के लिए कमर कसना है। जब कि इस संसार की सब चीज़ें उसी परमात्मा के रूप हैं तो मूर्ति भी आख़िर उन्हीं में से एक है। मुसलमान अगर यह जान लेता कि मूर्ति क्या चीज़ है तो यह भी समझ जाता कि मूर्ति-पूजा में ही दीन है। इसी तरह अगर मूर्तिपूजक अपनी मूर्ति के पीछे छिपी हुई असलियत को जान लेता तो अपने धर्म में कभी गुमराह न होता। तू भी अगर जल्दी से मूर्ति में छिपे हुए ईश्वर को नहीं देख सकता तो तू मुसलमान कहलाने का हक़दार नहीं है।

गीता में ईश्वर के अन्दर अपने मन और बुद्धि दोनों को पूरी तरह लगा देने का उपदेश दिया गया है। (१२-८)। सूफ़ी का कहना है—

'तू ज़ख़ुद गुम शो विसाल ई' नस्तो बस'

यानी तू अपनी ख़ुदी को मिटा दे यही ईश्वर को पाना है।

गीता में सब प्राणियों पर मित्र भाव रखने, सब पर दया करने और किसी से दुश्मनी न करने का उपदेश दिया गया है (१२-१३)।

सूफ़ी कहता है—

'दिल बदस्त आवर के हज्जे अकबरस्त
अज़ हज़ारों काबा यक दिल बेहतरस्त।

यानी दूसरों का दिल अपने हाथ में रख यही सबसे बड़ी हज्ज है। हज़ारों काबों से एक दिल बढ़कर है।

गीता के १३ वें अध्याय में ईश्वर ही को जानने की चीज़ (क्षेत्र) और उसी को जानने वाला 'क्षेत्रज्ञ' बताया गया है। गुलशने राज़ में लिखा है कि, मारूफ़ और आरिफ़ यानी जानने की चीज़ और जानने वाला दोनों एक ही चीज़ हैं।

गीता में लिखा है—"जो आदमी अनन्य (ख़ालिस) भक्ति के साथ ईश्वर की सेवा करता है वह सब गुणों से ऊपर उठकर ईश्वर के अन्दर ही लीन हो जाता है।" (१४-२६)।

मुसलमान सन्त अत्तार का कहना है—"प्रेम का जौहर जब तेरे अन्दर पैदा हो जायगा तब दोनों दुनिया तेरे लिये एक हो जायेंगी। तब न तेरे लिये शक कोई चीज़ रहेगा न यक़ीन, तू कुफ़्र और इसलाम-दोनों से ऊपर उठ जायगा। अगर तुझे इश्क़ की कुछ भी ख़बर हो जाये तो तू सब छोड़कर उसी ख़तरनाक रास्ते पर चलने लगे।"

गीता में ईश्वर को नाश न होने वाला (अक्षर) और सब प्राणियों को क्षर (यानी नाश होने वाला) कहा गया है (१५-१६)। क़ुरान में लिखा है—"सब चीज़ें फ़ानी यानी नाश होने वाली हैं, न नाश होने वाली ज़ात सिर्फ़ उस जलाल और बज़ुर्गी वाले रब्ब यानी ईश्वर की है।"

गीता में सबके साथ 'अहिंसा' 'सत्य' और 'अक्रोध' वग़ैरह (१६-२) पर ज़ोर दिया गया है। मुसलमान सूफ़ी 'बेख़ुद' लिखता

है कि, "जब तक तू अपने सीने को दुश्मनी से पाक न करेगा तब तक तेरा फ़क़ीरी का दावा मज़ाक़ है। जहान में हर मज़हब वालों के साथ मेरा मेल है। मेरा किसी से इख़्तलाफ़ (भेद भाव) नहीं है।"

गीता में नरक के तीन दरवाज़े बतलाये गये हैं काम, क्रोध और लोभ (१६-२१)। बू अली शाह क़लन्दर लिखते हैं—

मर्द बायद ता निहद बर नफ़्स पा
खुग ज़रद अज़ शहवतो हिर्सो हवा।

यानी आदमी वह है जो अपने ग़ुस्से, अपनी शहवत यानी काम वासना और हिर्सो हवा यानी लोभ को क़ाबू में करले।

गीता में कहा गया है कि जो आदमी काम, क्रोध, अहंकार, वग़ैरह को छोड़कर शान्त चित्त हो जाता है वह ब्रह्म हो जाता है। मुसलमान सूफ़ी अत्तार का कहना है—

मन ख़ुदायम, मन ख़ुदायम, मन ख़ुदा
फ़ारिग़म अज़ किब्रो कीना वज़ हवा।

यानी मैं ही ख़ुदा हूँ, मैं ही ख़ुदा हूँ, मैं ही ख़ुदा। मैं सब तरह के किब्र (मिथ्याचार), कीना (ईर्षा) और हवा (इच्छा) से ऊपर उठ गया हूँ।

आख़ीर में गीता का श्लोक है—

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥ (१८-६६)।

यानी सब धर्मों को छोड़ कर अकेले एक मेरी शरण में आ!

मैं तुझे सब पापों से बचा लूंगा, तू फ़िक्र मत कर।

मौलाना रूम कहते हैं—

मज़हबे इश्क़ अज़ हमा दींहा जुदास्त
आशिक़ांरा मज़हबो मिल्लत ख़ुदास्त।

यानी प्रेम का धर्म सब धर्मों से अलग है, प्रेमी के लिये ख़ुदा ही उसका मज़हब और ख़ुदा ही उसकी मिल्लत है।

इन मिलते जुलते बुनियादी उसूलों की वजह से ही बहुत से मुसलमान आलिमों और शायरों ने हिन्दू फ़लसफ़े (दर्शन), गीता और श्री कृष्ण की दिल खोल कर तारीफ़ की है। एक मुसलमान सन्त का कहना है—

'दर हैरतम के दुशमनीए कुफ़्रो दीं चरास्त
अज़ यक चिराग़ कावओ बुतख़ाना रोशन अस्त।

यानी मैं हैरान हूं कि हिन्दू धर्म और इसलाम में दुशमनी क्यों है जब कि काबा और बुतख़ाना दोनों एक ही चिराग़ से रोशन हैं।

शाहजहाँ के बड़े बेटे शहज़ादे दारा शिकोह ने उपनिषदों की बाबत लिखा है—

"यह फ़क़ीर दारा शिकोह जिसका रंज जाता रहा, ज्ञान के इस भंडार (उपनिषद) से फ़ायदा उठा कर दुनिया की झूठी हस्ती (अस्तित्व) से छूट कर सच्ची हस्ती की तरफ़ पहुँच गया और अमरत्व के रास्ते पर चल पड़ा।"

मशहूर विद्वान सैयद अली बिलग्रामी ने लिखा है—

"हिन्दुओं में इल्मेअदब (साहित्य) इस दर्जे पर था कि आज

भी उनकी तसानीफ़ (रचनाएँ) यादगारे ज़माना हैं और फ़लसफ़े में तो उनका मिसाल (उदाहरण) ही नहीं।"

मुग़ल सल्तनत के आख़ीर के दिनों में आगरे के मशहूर मुसलिम सन्त और कवि 'नज़ीर' अकबराबादी ने श्री कृष्ण के ऊपर बहुत सी नज़्में लिखी हैं। इन नज़्मों में जो प्रेम और विश्वास श्री कृष्ण की तरफ़ झलकता है वह देखने और समझने के क़ाबिल है। कन्हैया जी के जन्म पर एक नज़्म में ये लाइनें आती हैं—

गोपाल, मनोहर, मुरली धर, श्री कृष्ण, किशोरन, केशव मन;
घनश्याम, मुरारी, बनवारी, गिरधारी, सुन्दर श्याम बरन;
प्रभुनाथ, बिहारी, कान्ह लला, सुखदाई जग के दुःख भंजन;
जब साअत परगट होने की वहाँ आई मुकुट धरैया की,
अब आगे बात जनम की है जै बोलो कृष्ण कन्हैया की।

मौलाना ज़फ़र अली ख़ाँ ने अपनी एक नज़्म में लिखा है—

श्री कृष्ण का मैं एहतराम[1] करता हूँ,
और इसमें रोज़ नया एहतमाम[2] करता हूँ,
यह एहतमाम बरूए अक़ीदए इसलाम,[3]
बहुक्म साहबे बैतुलहराम[4] करता हूँ,
हनूद[5] भूल गये हैं—कृष्ण की तालीम,
गिला[6] मैं इसका उनसे शुबह शाम करता हूँ।

१—मान, २—प्रबन्ध, ३—इसलाम के *विश्वास* के *अनुसार, ४—काबा, ५—हिन्दू, ६—शिकायत*

मिर्ज़ा सिराजुद्दीन 'देहलवी' ने 'श्री कृष्ण कथा' लिखी है जिसका एक एक बन्द पढ़ने के क़ाबिल है। इनमें से एक बन्द यह है—

गीता गवाह हुस्ने अमल उसकी देख लो,
उसको मुलाहज़ा करो उसको पढ़ो गुनो,
आँखों से दिल की ग़ौर करो क़ौलो फ़ेल को,
रहबर बना के उसके क़दम पर चले चलो,
औसाफ़ गर बशर के हों दरकार उसमें हैं,
फ़ौक़ुल बशर जो चाहो तो अतवार उसमें हैं।

अफ़ग़ानिस्तान के अख़बार 'जरीदा' के एडीटर मुर्तज़ा अहमद ख़ाँ साहब ने अपनी एक नज़्म में लिखा है—

ए कन्हैया देख फिर डूबी है किश्ती हिन्द की,
ज़ोर तूफ़ाँ में थपेड़े मौज के खाती रही,
इस ग़ुलामाबाद की हालत पै अपनी मुद्दतों,
ख़ून के आँसू हमें तक़दीर रुलवाती रही,
तेरी रखवानी का फिर हिन्दोस्ताँ मोहताज है,
और उस नै की हक़ीक़त का जहाँ मोहताज है।

आख़िरी शेर का मतलब यह है कि हे कृष्ण! हिन्दुस्तान फिर एक बार तेरे मार्ग प्रदर्शन का मोहताज है और सारी दुनियाँ उस सत्य की भूखी है जो तेरी बाँसुरी (नै) में छिपा हुआ था।

गीता और क़ुरान या गीता और सूफ़ी सन्तों के उपदेशों में इसी तरह की बेशुमार और मिलती जुलती बातें दिखाई जा सकती हैं। यहाँ इस मिलान को हम और बढ़ाना नहीं चाहते। इस किताब के

'.कुरान' भाग में कहीं कहीं भगवत् गीता या किसी दूसरी मज़हबी किताब से मिलते जुलते वाक्य दे दिये गये हैं। वे भी उन पढ़ने-वालों के लिए केवल इशारे के तौर पर हैं जो इन मज़हबी किताबों को जिनसे सैकड़ों और हज़ारों वर्षों के अन्दर करोड़ों आत्माओं को शान्ति मिली है, प्रेम और खोज के साथ पढ़ना चाहें। भगवत् गीता के जानने वाले को '.कुरान' के एक एक सफ़े पर गीता के मिलते जुलते वाक्य और श्लोक याद आवेंगे।

इन मज़हबों और उनकी किताबों में फ़र्क़ भी है, लेकिन यह फ़र्क़ आम तौर पर या तो थोड़ा बहुत उनके दार्शनिक उसूलों में है, जैसा यह कि जीव और ब्रह्म एक हैं या दो, माद्दा यानी मैटर या प्रकृति ईश्वर के साथ साथ शुरू से है या नहीं, स्वर्ग और नरक की कल्पनाएँ वग़ैरह, और या उनके ऊपर के रस्म रिवाजों में है जैसा कि पूरब की तरह मुँह करके ईश्वर की पूजा करना या पच्छिम की तरफ़। लेकिन आम तौर पर अलग अलग धर्मों के बुनियादी और असली उसूलों में, जैसे एक ईश्वर में विश्वास और सदाचार के नियमों जैसे सच बोलना, सबसे प्रेम करना वग़ैरह में फ़र्क़ नहीं है।

यह फ़र्क़ अलग अलग मुल्कों, अलग अलग ज़मानों और अपने अपने यहाँ की हालतों का फ़र्क़ है। ये फ़र्क़ ऐसे ही हैं जैसे एक सूरज की रोशनी रंग बिरंगे शीशों में से निकल कर रंग रंग के असर पैदा करती है। पर रोशनी एक ही है। ईश्वर के ज्ञान की रोशनी ईश्वर-प्रेरणा के ज़रिये जिन महान और खोजी आत्माओं के दिलों पर अलग अलग वक़्तों में अपना अक्स डालती रही है उन महा-

पुरुषों को अपने चारों तरफ़ की हालत, अपने मुल्क और ज़माने की ज़रूरतों और वहां की बोली में ही उस ईश्वरीय ज्योति, उस इल्म इलाही को ज़ाहिर करना पड़ा है। यही इन धर्मों के ऊपरी फ़र्क़ की वजह है। एक हिन्दू शास्त्रकार ने अलग अलग मज़हबों की बुनियादी एकता और उनके बाहरी फ़र्क़ों को इन शब्दों में बयान किया है—

गवामनेक वर्णानाम् क्षीरस्यास्त्येक वर्णिता
क्षीरम् पश्यते ज्ञानिर्लिंगिनास्तु गवाम् यथा।

गायें अलग अलग रंगों की होती हैं लेकिन दूध सब का एक रंग का होता है। जो ज्ञानी लोग हैं वे दूध ही को देखते हैं और जो ऊपर की अलामतों में फंसे हुए हैं वे गायों के अलग अलग रंगों को देखते हैं।

एक मुसलमान सूफ़ी लिखता है—

यक चिराग़स्त दरीं दहर व अज़ परतवे आं
हर कुजा मी निगरम अंजमने साख़्तान्द

यानी दुनिया में हक़ीक़त का चिराग़ एक ही है, और उसके अक्स को ले लेकर जहां मैं देखता हूँ लोग अपनी अलग अलग सभाएं सजाये बैठे हैं।

इस लिहाज़ से 'गीता धर्म' कोई अलग 'धर्म' नहीं है और न क़ुरान का दीन कोई अलग 'दीन' है। गीता हमें सब धर्म मज़हबों को समदृष्टि से, एक निगाह से, देखने का उपदेश देती है, सब धर्मों में एक समन्वय पैदा करती है और सब धर्मों का सार निकाल कर हमारे सामने रख देती है।

गीता सब हिन्दू शास्त्रों और हिन्दू पुस्तकों का सार है। जिस किसी ने उपनिषदों को पढ़ा है उसे गीता में जगह जगह उपनिषदों के वाक्य के वाक्य और कड़ियों की कड़ियाँ ज्यों की त्यों दिखाई देंगी। संस्कृत के कई जैन ग्रन्थों से गीता के श्लोक इतने मिलते चले जाते हैं कि नामुमकिन मालूम होने लगता है कि इसने उससे या उसने इससे न लिया हो।

इसी तरह क़ुरान में बार बार कहा गया है कि न हज़रत मुहम्मद कोई 'अनोखे रसूल' हैं और न क़ुरान का दीन कोई 'नया दीन' है। हर मुल्क और हर क़ौम में रसूल होते रहे हैं। हर ज़माने की अपनी धार्मिक किताबें रही हैं। कुछ रसूलों के नाम क़ुरान में दिये गये हैं और बाक़ियों के नहीं। क़ुरान उन सब में कोई फ़र्क़ नहीं करता। क़ुरान सिर्फ़ उन सब पुराने रसूलों के उपदेशों की तसदीक़ करता है, कोई नया मज़हब क़ायम नहीं करता।

मौलाना अबुल कलाम आज़ाद ने अपनी मशहूर किताब 'तर्जुमानुल क़ुरान' में लिखा है—

"क़ुरान के सफ़े खुले हुए हैं। क़ुरान ने न सिर्फ़ उन सब धर्म-संस्थापकों को प्रमाण माना जिनके नाम लेवा उसके सामने थे बल्कि साफ़ शब्दों में कह दिया कि मुझसे पहिले जितने भी रसूल और धर्म प्रवर्त्तक आ चुके हैं, मैं सब को प्रमाण मानता हूँ, और उनमें से किसी एक के न मानने को भी ईश्वरीय सचाई से इनकार करना समझता हूँ। उसने किसी धर्म वाले से यह नहीं चाहा कि वह अपने धर्म को छोड़ दे बल्कि जब कभी

चाहा तो यही चाहा कि सब अपने अपने धर्मों की असली तालीम पर अमल करें, क्योंकि सब धर्मों की असली तालीम एक ही है। न तो उसने कोई नया उसूल क़ायम किया और न कोई नई कार्य पद्धति ही बतलाई। उसने सदा उन्हीं बातों पर ज़ोर दिया जो दुनिया के सब मज़हबों की सब से ज्यादा जानी बूझी हुई बातें रही हैं—यानी एक जगदीश्वर की पूजा और नेकी की ज़िन्दगी। उसने जब कभी लोगों को अपनी तरफ़ बुलाया है तो यही कहा है कि अपने अपने धर्मों की असली तालीम को फिर ताज़ा करलो, तुम्हारा ऐसा करना ही मुझे क़ुबूल कर लेना है।"

इसी सचाई को मशहूर विद्वान डा० भगवानदास ने अपनी अमूल्य पुस्तक 'दी एसेंशिअल यूनिटी आफ़ आल रिलीजन्स' में बड़ी सुन्दरता, विद्वत्ता और विस्तार के साथ दिखया है। सच यह है कि गीता धर्म और क़ुरान दोनों दुनिया के सब आदमियों की एक समान बपौती और एक समान मिल्कियत है।

कमी केवल यह है कि इस वक़्त वे लोग भी, जो गीता या क़ुरान को अपनी खास बपौती समझते हैं, हमेशा उसका पाठ करते हैं, और लाखों की तादाद में उनकी कापियाँ बँटवाते हैं इन अमर पुस्तकों के असली सबक़ से कोसों दूर, मेरा धर्म और तेरा धर्म, मेरा मज़हब और तेरा मज़हब, मेरी संस्कृति और तेरी संस्कृति, मुसलिम कल्चर और हिन्दू कल्चर के ग़लत 'मोह' में पड़कर भारतीय संस्कृति

या हिन्दुस्तानी कल्चर के आलीशान दरख़्त की चोटी के फूलों की तरफ़ निगाह डालने के बजाय इस पुराने दरख़्त के तने पर की सूखी हुई छाल को ज़ोरों से चाटने में लगे हुए हैं। हम इस तरह न सिर्फ़ इस पाक दरख़्त को गन्दा कर रहे हैं, बल्कि अपनी जीभ को भी लहूलुहान कर रहे हैं; और दुनिया के उन लोगों की नज़रों में, जो ज़रा दूर से खड़े होकर हमारी हालत को देख रहे हैं, अपने को नफ़रत और हंसी की चीज़ बना रहे हैं। इस मुल्क का बड़प्पन, इसका छुटकारा, इसकी सलामती, इसकी आज़ादी का राज़ और इसके ज़रिये दुनिया का भला न इस रूढ़ि या कर्मकाण्ड में है और न उसमें, न इस रीति रिवाज में है और न उसमें, न इस वेष भूषा या लिबास में है और न उसमें, न इस तरह के तंग माइनों में इस ख़ास कल्चर से चिपटे रहने में है और न उससे। हिन्दुस्तान और दुनिया दोनों का भला उस समभाव, उस तौहीदे हक़ीक़ी में है जो भिन्नता में एकता, कसरत में वहदत को देख सके, जो सब रीतियों और रिवाजों से ऊपर रहकर सबके अन्दर से उसी तरह अपनी रोशनी की किरणों को दुनिया पर फेंक सके जिस तरह रंग बिरंगे शीशों में से लैम्प की रोशनी फेंकती है और जो आर्य कल्चर और द्रविड़ कल्चर, बंगाली कल्चर और पञ्जाबी कल्चर, हिन्दू कल्चर और मुसलिम कल्चर के बजाय उस सुन्दर सार्वाङ्गिक हिन्दुस्तानी कल्चर के निर्माण में अपनी सच्ची सफलता समझे, जो हिन्दुस्तानी कल्चर आख़ीर में उस व्यापक इन्सानी कल्चर में अपने को मिलाकर एक करदे जिसके बनाने में दुनिया इस वक़्त बड़ी मेहनत और तकलीफ़ के साथ लगी हुई है,

और जिसके लिये इन्सानी क़ौम की टुकड़े टुकड़े हुई आत्मा बेचैनी के साथ तड़प रही है।

यही गीता का पाठ है। यही क़ुरान की तालीम है। इसके ख़िलाफ़ सब रास्ते 'ग़लत', 'भयावह' और 'गुमराही' के हैं।

५६, चक
इलाहाबाद

विषय सूची

गीता

क़ुरान

गीता

गीता

हिन्दुओं की वे किताबें जिन्हें वे अपनी धर्म की किताबें मानते हैं, हज़ारों नहीं तो सैकड़ों आसानी से गिनाई जा सकती हैं। दुनिया में जो 'धर्म' जारी हैं उनमें शायद दूसरे किसी 'धर्म' की इतनी किताबें नहीं हैं। ऐसा होना क़ुदरती भी है। यूं तो दुनिया के सारे 'धर्म' एक दूसरे से मिलते चले आते हैं और सब एक ही सनातन परम्परा के हिस्से, एक पुराने सिलसिले की कड़ियां, या एक ही बड़े पेड़ की चारों तरफ़ फैली हुई डालियों के अलग अलग फूल हैं, लेकिन फिर भी जहाँ तक अलग अलग देशों की परम्पराओं का सवाल है, हिन्दू परम्परा, दुनिया की परम्पराओं में, शायद सबसे पुरानी परम्परा है। यहूदी परम्परा इसके बहुत बाद की है। चीनी परम्परा भी जहाँ तक मालूम हुआ है इससे ज्यादा पुरानी नहीं। इसके अलावा आज से दो ढाई हज़ार साल पहले चीनी परम्परा ने जिस ज़ोर का पलटा खाया, हिन्दू परम्परा ने वैसा पलटा कभी नहीं खाया, या खाते खाते बच गई।

दुनिया के लिखे और बेलिखे इतिहास से इस बात की

हलकी सी झलक मिलती है कि एक तरफ़ ईरान के पहाड़ी मैदानों से लेकर अरब सागर और हिन्द महासागर तक और दूसरी तरफ़ अफ़रीका की नील नदी के किनारे किनारे बहुत पुराने समय में दो बहुत बड़ी और ऊंची परम्पराएँ जन्म लेकर हिन्दुस्तानी और चीनी परम्पराओं से पहले हज़ारों बरस तक आदमी को जीवन का रास्ता दिखा चुकी थीं। लेकिन अब उनकी गड़ी हुई जड़ें या सूखी हुई शाखें भी कहीं ढूंढ़ने से नहीं मिलतीं। क़िस्मत के अचूक और अटल चक्कर में ठीक समय पर अपना रहा सहा खून बाद की परम्पराओं को देकर और अपने सड़े गले हाड़ माँस से उनके लिए खाद तय्यार करके वे परम्पराएं दुनिया से मिट गईं। जिस तरह भगवान अनन्त हैं उसी तरह उनकी रचना भी अनन्त है। हमें इधर या उधर इस रचना का ओर या छोर देखने का हौसला नहीं करना चाहिये। हमारी छोटी सी शक्ति के लिये यह नामुमकिन भी है। लेकिन इसमें शक नहीं दुनिया में जो किताबें आज मिलती हैं उनमें ऋग्वेद सबसे पुरानी किताब है, और दुनिया की बची हुई परम्पराओं में हिन्दू परम्परा सबसे पुरानी है। ऋग्वेद की इस समय की १०,५८० ऋचाओं में कितनी शुरू की हैं और कौन सी कब कब उसमें शामिल की गईं इस बहस में पड़ने की ज़रूरत नहीं है। आजकल के तमाम धर्मों और उनकी किताबों को मिलाकर देखने से इसमें कोई शक नहीं रह जाता कि सब धर्मों का असली निकास एक ही ईश्वर अल्लाह से है,

सब धर्म पुस्तकों की असली मां जिसे क़ुरान में 'उम्मुल किताब' कहा गया है उसी ईश्वर के पास है, साथ ही इन सब धर्मों के ज्यादहतर बाहरी नाम रूपों, कर्म काण्डों, रूढ़ियों और कुछ शब्दों तक का निकास ऋग्वेद और खास कर उसकी शुरू की ऋचाओं से है। इसीलिए बहुत से यूरोप के विद्वानों ने ऋग्वेद को सब 'धर्मों की मां' (मदर आफ़ आल रिलिजन्स) कहा है।

हिन्दू धर्म की किताबों में वेदों का और खासकर ऋग्वेद का सबसे ज्यादह मान है। लेकिन वेद इतनी बड़ी चीज हैं, उनकी ज़बान इतनी पुरानी और अजीब है और एक एक मन्त्र के इतने इतने तरह से अर्थ लगाए जा सकते हैं कि वेपढ़े लोगों के लिए ही नहीं बल्कि विद्वानों के लिए भी हज़ारों बरस से वेद एक पहेली रहे हैं और हमेशा पहेली ही रहेंगे। वेदों का निचोड़ उपनिषदों को माना जाता है जिसमें से कई वेदों के ही हिस्से हैं। इसमें शक नहीं उपनिषदों या ख़ास ख़ास बारह उपनिषदों को, जिनके सब असली मन्त्रों को मिलाकर दो फ़र्मों की एक किताब भी नहीं बनती, भलाई बुराई और पाप पुण्य के ऊंचे से ऊंचे असूलों (मारल आइडियलिज्म), बारीक से बारीक फ़लसफ़े या दर्शन (ट्रान्सेंण्डेण्टल मैटाफ़िजिक्स), और ब्रह्म और जीव की गहरी से गहरी सचाइयों या गूढ़ अध्यात्म (डीप स्पिरिचुएलिटी) की वजह से दुनिया की ऊंची से ऊंची किताबों में एक ऊंची जगह हासिल है। हज़ारों पढ़े लिखे हिन्दू ऐसे

हैं जिनसे अगर किसी बहुत बड़े भयंकर तूफ़ान या भोंचाल के समय पूछा जावे कि तुम अपने किस ग्रन्थ-रत्न को आगे की दुनिया के लिये सबसे ज़्यादह बचा कर रखना चाहते हो तो वे कहेंगे—'उपनिषद'। हज़ारों ग़ैर-हिन्दू विद्वान भी इस बात में उनकी राय से इत्तफ़ाक़ करेंगे।

लेकिन उपनिषद भी आमफ़हम नहीं हैं। उपनिषदों को समझ सकना या उनका रस ले सकना विरलों को ही बदा है। उपनिषदों से उतर कर हिन्दुओं में किसी एक पुस्तक का सबसे ज़्यादा मान है तो वह 'श्री मद्भगवत्गीता' का। गीता की भाषा और उसके कहने का ढंग इतना आसान है कि उसके पढ़ने पढ़ाने वालों की गिनती भी उपनिषदों के पढ़ने पढ़ाने वालों से हज़ारों गुना है। गीता माहात्म्य में "सब उपनिषदों" को मिलाकर उनकी बराबरी एक "गाय" के साथ की गई है और गीता को "उस गाय से दुहा हुआ दूध" और "महान अमृत" कहा गया है। मिसाल बहुत दर्जे तक ठीक है। उसी 'माहात्म्य' में लिखा है कि जिस आदमी ने गीता को "अच्छी तरह याद कर लिया" उसे फिर "दूसरे शास्त्रों के संग्रह" करने की कोई ज़रूरत नहीं। सचमुच गीता अपने ज़माने के तमाम हिन्दू शास्त्रों का निचोड़ है। संस्कृत ग्रन्थों में जितना गीता का प्रचार है उतना किसी दूसरे ग्रन्थ का नहीं है। पिछले हज़ारों बरस में जितने भाष्य और जितनी टीकाएं गीता पर लिखी जा चुकी हैं उतनी, एक क़ुरान को छोड़कर, शायद

ही दुनिया की किसी दूसरी किताब पर लिखी गई हों। इसमें शक नहीं कम से कम अपने ज़माने तक की भारतीय संस्कृति का गीता सबसे बढ़िया और सबसे सुन्दर चोटी का फूल है। बल्कि गीता उन इनी गिनी किताबों में से है जो देश और काल की चौहद्दी से ऊपर उठकर दुनिया के सब आदमियों की और हर ज़माने के लोगों की एक समान बपौती हैं, जो सबके लिये फ़ायदे और बरकत की चीज़ हैं और जिनका सबको एक बराबर अभिमान हो सकता है। गीता दुनिया के अमर ग्रन्थों में से एक है।

आदमी की ख़ास समस्याएं, कठिनाइयां या मुश्किलें क़रीब क़रीब हर देश और हर ज़माने में एक ही सी रही हैं। इन समस्याओं के बाहरी रूप और उनके नाम बदलते रहे हैं। कभी कोई समस्या ज्यादह सामने रही है और कभी कोई। लेकिन इनकी असलीयत नहीं बदली। हर आदमी की आत्मा के अन्दर, और सारे समाज में, वही स्वार्थ और परमार्थ, ख़ुदी और ख़ुदा की लगातार लड़ाई जारी है। यह लड़ाई सदा नये नये रूप बदलती रहती है। ख़ुदी, छोटे छोटे स्वार्थों के रूप में, आदमी की आँखों पर परदा डाल कर, उसे अपने और पराये का भेद सिखाकर, ख़ुद अपनी असली और टिकाऊ भलाई की तरफ़ से उसे अन्धा कर देती है। यही वजह है कि दुनिया की सब ख़ास ख़ास धर्म पुस्तकें मनुष्य क़ौम के लिए सच्चे उपदेशों और सच्ची नसीहतों का एक अनन्त सरचश्मा हैं।

महाभारत के भीष्म पर्व के २५ वें अध्याय से ४२ वें अध्याय तक का नाम गीता है। इन १८ अध्यायों में वह बात चीत लिखी है जो महाभारत की लड़ाई के शुरू में श्रीकृष्ण और अर्जुन में हुई थी। लड़ाई के दसवें दिन संजय ने यह बात चीत धृतराष्ट्र को सुनाई थी। संजय कहता है कि—मैंने यह बात चीत "व्यास की कृपा से स्वयं योगेश्वर कृष्ण के मुंह से" सुनी थी (१८-७५)। भीष्म पर्व के दूसरे अध्याय में ज़िक्र है कि व्यास ने संजय को वह "दिव्य दृष्टि" दे दी थी जिससे दूर बैठा हुआ संजय लड़ाई का सारा हाल देखता और सुनता रहा। बहुत से टीकाकारों ने यह शक ज़ाहिर किया है कि ठीक लड़ाई के मैदान में जब दोनों फ़ौजें तय्यार खड़ी थीं, इस तरह के कठिन मामलों पर श्रीकृष्ण और अर्जुन का श्लोकों में इतनी लम्बी बात चीत करना और फिर संजय का उन श्लोकों को किसी चमत्कार से दूर बैठे हुए सुनकर याद रखना एक अनहोनी सी बात है और मुमकिन नहीं है। यह बहस यहाँ तक चली कि गीता के सात सौ श्लोकों में से एक टीका-कार ने १००, दूसरे ने ३६, तीसरे ने २८ और चौथे ने ७ मूल श्लोक खोज निकाले। इन टीकाकारों की राय है कि इन मूल श्लोकों की बात ही वह असली बात है जो श्रीकृष्ण ने अर्जुन को बात चीत में समझाई थी और जिसे बाद में बढ़ाकर और श्लोक बनाकर व्यास ने ७०० श्लोकों की गीता तय्यार कर दी। इसी कठिनाई को हल करने के लिए कई विद्वान

गीता के अन्दर लड़ाई के बयान को महज़ एक अलंकार (allegory) और आदमी की आत्मा के अन्दर होने वाली नेकी और बदी की लड़ाई का बयान बताते हैं। इस बारे में लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक की यह राय बिल्कुल ठीक मालूम होती है कि—"परन्तु जिनको ग्रन्थ का ही रहस्य जानना है उनके लिए इस बहिरंग परीक्षा के झगड़े में पड़ना अनावश्यक है।" (गीता-रहस्य, विषय-प्रवेश।) महाभारत का युद्ध कभी हुआ हो या न हुआ हो, उसमें लड़ाई से पहले श्रीकृष्ण और अर्जुन ने इस तरह की बात चीत की हो या न की हो, संजय को दिव्य दृष्टि मिली हो या न मिली हो, यह जाहिर है कि गीता की श्लोक-रचना न श्रीकृष्ण और अर्जुन की की हुई है और न संजय की। यह श्लोक-रचना व्यास की है। गीता के श्लोकों को इसी शक्ल में श्रीकृष्ण या अर्जुन के मुंह से निकला हुआ समझना, या गीता की बात चीत को इतिहास की कसौटी पर कसना गीता का ठीक आदर करना नहीं है। वह "भगवत्-गीता" जो "तमाम उपनिषदों को दुहकर" तय्यार की गई है, जिसे पढ़ने के बाद फिर (किमन्यैः शास्त्र संग्रहैः) किसी दूसरे शास्त्र को पढ़ने की ज़रूरत नहीं रह जाती, अपने ख़ास ढङ्ग से, अपने ज़माने की धार्मिक हालत का ख़ाका और साफ़ साफ़ रूप में हर देश और हर ज़माने की धर्म संकट में पड़ी हुई आत्माओं के लिए (१८-७८) एक सुन्दर, क़ीमती और अमर सन्देश है।

गीता में जगह जगह उस ज़माने के धर्मों की हालत,

अलग अलग पंथों, मज़हबी ख़यालों, सम्प्रदायों, पूजा के तरीक़ों, रूढ़ियों, रस्म रिवाजों, अन्धविश्वासों, दार्शनिक असूलों, आदि का ज़िक्र किया गया है; इनके ठीक होने या ग़लत होने, या एक दूसरे के ख़िलाफ़ होने या न होने पर बहस की गई है; अलग अलग मानताओं और ईश्वर की पूजा के अलग अलग तरीक़ों में बुनियादी एकता, मेल, समन्वय या सामंजस्य दिखाने की कोशिश की गई है; आत्मसंयम यानी अपने ऊपर क़ाबू हासिल करने को और सदाचार या नेकी को सब मज़हबों की जड़ और आत्मा की तरक़्क़ी की पहली सीढ़ी बताया गया है; अपने पराये के भेद को, ग़ैरियत या दुई के परदे को हटाकर "अपनी तरह सबको", "अपने अन्दर सबको" और "सब में अपने को" देख सकना मुक्ति के लिए ज़रूरी बताया गया है; "जड़, चेतन, चर, अचर" सारी रचना में और "सब प्राणियों के हृदय में" एक परमेश्वर के दर्शन का उपदेश दिया गया है; और आख़ीर में इन सब रास्तों को तय करते हुए पूरी आत्मशुद्धि और पूरे आत्मसंयम के बाद आत्मा की आगे की तरक़्क़ी के रास्ते, उसके तरीक़ों और मंज़िलों की तरफ़ इशारा किया गया है। यही श्रीमद्भगवत् गीता का विषय है।

अब हमें यह देखना है कि इनमें से हरेक बात पर अलग अलग गीता से हमें क्या जानकारी होती है और क्या उपदेश मिलता है।।

सबसे पहले गीता को समझने के लिए ज़रूरी है कि हम

उस ज़माने की हालत, विचारों और रस्म रिवाजों को, जहाँ तक उनका गीता से पता चलता है, जान लें।

गीता के शुरू ही में अर्जुन ने अपनी जो सबसे पहली और सबसे बड़ी कठिनाई श्रीकृष्ण के सामने रखी है वह यह है—

"मैं अगर इस लड़ाई में हिस्सा लूंगा तो हमारा सारा ख़ानदान मिट जायगा, और जब कोई ख़ानदान या कुल मिट जाता है तो उस कुल के सब पुराने रस्म रिवाज भी (कुल धर्माः सनातनाः— १-४०) उसके साथ साथ मिट जाते हैं, उनके मिट जाने पर कुल के रहे सहे लोगों और ख़ासकर स्त्रियों को रोककर ठीक रास्ते पर रखने वाली कोई चीज़ नहीं रह जाती, अधर्म फैलता है, उससे स्त्रियों का चलन बिगड़ता है (१-४१), स्त्रियों का चलन बिगड़ जाने से 'वर्ण संकर' होने लगता है, यानी जन्म से वर्ण या जाति का भेद मिट जाता है, जब इस तरह का वर्ण संकर हो जाता है तो वे लोग जिन्होंने अपने कुल वालों की हत्या की, और उनके साथ साथ कुल के और सब लोग भी, यहाँ तक कि उस कुल के मरे हुए 'पितर' भी, ज़रूर सबके सब 'नरक' को जाते हैं, क्योंकि उन पितरों को 'पिण्डदान' देने वाली और 'जल चढ़ाने' वाली यानी उनका क्रिया कर्म करने वाली उनकी कोई ठीक ठीक औलाद नहीं रह जाती (१-४२), नतीजा यह होता है कि 'कुलों' के अपने अपने 'धर्म' या रिवाज और 'जातियों' के अलग अलग परम्परा से चले आए हुए पुराने 'धर्म' यानी रस्म रिवाज भी (जाति धर्माः कुल धर्माश्च शाश्वताः १-४३) मिट जाते हैं, और हम यह हमेशा से सुनते चले आये हैं कि जिन

लोगों के 'कुल धर्म' मिट जाते हैं, उन सब को ज़रूर नरक में बास करना पड़ता है (१-४४)। इसलिए इस लड़ाई में हिस्सा लेना हमारे लिए 'महापाप' है (१-४५)।"

अर्जुन ने इस अध्याय में तीन जगह 'पाप' शब्द इस्तेमाल किया है (१-३६,३६,४५)। जिस पाप की तरफ़ अर्जुन की निगाह जा रही है वह मामूली हिंसा या आदमी की हत्या नहीं है, बल्कि अपने कुल के लोगों को मारने, यानी कुल के मिटाने का पाप है (कुलक्षयकृतं दोषं—१-३८,३९)। हमें यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि गीता में 'जाति' (१-४३) का मतलब वर्ण यानी ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र नहीं है। वर्ण का फ़रक़ एक अलग चीज़ थी, जाति का फ़रक़ अलग था। दोनों जन्म से माने जाते थे, और 'कुल' अलग अलग थे ही। महाभारत से यह साफ़ पता चलता है कि अलग अलग 'जातियों' या जिन्हें 'ज्ञातियां' भी कहते थे उनमें और अलग अलग वर्णों में उन दिनों विवाह का रिवाज था। 'जन्म' से मतलब पितृ-परम्परा यानी बाप की नसल से है।

दूसरे अध्याय में हमें उस ज़माने के कुछ और विचारों का पता चलता है। इनमें एक खास विचार 'वेदों में विश्वास' है। लोग वेदों की चरचा में मगन थे (२-४२), उसका उनके दिलों पर और .खुद अर्जुन के दिल पर गहरा असर था (२-५३)। वेदों की बातें उन्हें कहने और सुनने में बड़ी प्यारी लगती थीं (२-४२)। वे कहते थे कि इससे बढ़कर और कोई चीज़ है

ही नहीं (२-४३)। लेकिन वेदों से जो चीज़ उन्होंने अपनी ज़िन्दगी में ले रक्खी थी, वह सिर्फ़ तरह तरह के ऊपरी कर्म-काण्ड थे (क्रिया विशेष बहुलां—१-४३), जैसे यज्ञ, हवन, जप, तप, पूजा, पाठ, दान वग़ैरह (६-२०,२१; ११-४८,५३; ३०)। इनसे उनका मक़सद या लक्ष्य सिर्फ़ "भोग ऐश्वर्य" ऐश आराम और अपनी दुनयवी "कामनाओं को पूरा करना" और ज़्यादह से ज़्यादह "स्वर्ग" या "इन्द्रलोक" हासिल करके वहाँ के "दिव्य भोगों" का ऐश भोगना होता था (२-४३,४४;९-२०, २१; ३०)। उनका नरक तकलीफ़ों की जगह थी और स्वर्ग भोगों और ऐश की। यज्ञ कई तरह के होते थे (४-३२)। तीनों वेदों ऋक्, साम और यजुर के अलावा (९-१७,२०) बहुत से लोग अलग अलग स्मृतियों के मानने वाले थे और वैदिक यज्ञों के अलावा स्मृति-यज्ञ भी होते थे (९-१६)। वैदिक और स्मृति दोनों तरह के यज्ञों में मंत्र पढ़ पढ़कर घी और तरह तरह की खाने की और दूसरी चीज़ों की अग्नि कुण्ड में आहुतियां दी जाती थीं (४-२४;९-१६; ३०), और सोमरस पिया जाता था (९-२०)। गीता के दूसरे, छठे और नवें अध्यायों में और उसके बाद भी कहीं कहीं जिस तरह वेदों का ज़िक्र आया है, उससे ज़ाहिर है कि लोग उन दिनों वेदों के सिर्फ़ कर्म काण्ड से ही वास्ता रखते थे, उसके ज्ञान काण्ड यानी उन ऊंचे और व्यापक असूलों से उनका कोई नाता वास्ता न रह गया था, जो सब मुल्कों और सब क़ौमों के आदमियों के लिए एक बराबर फ़ायदे की चीज़ें हैं।

एक परमेश्वर के अलावा बहुत से लोग अलग अलग देवताओं की भी पूजा करते थे। इन देवताओं से तरह तरह की मुरादें और मन्नतें मांगी जाती थीं और दुनिया के सुखों की प्रार्थनाएं की जाती थीं। उन्हें ख़ुश करने की तरह तरह से कोशिशें की जाती थीं। उनके नाम पर यज्ञ किये जाते और इन यज्ञों में देवताओं के नाम ले लेकर आहुतियां दी जाती थीं। (३-११,१२ ४-१२,२५;७-२०,२३; ह०)। 'पत्र, पुष्प, फल और जल वग़ैरह' भी चढ़ाए जाते थे (६-२६)। देवताओं के अलावा 'पितरों' और 'भूतों' की पूजा का भी रिवाज था। सबके नाम पर अलग अलग यज्ञ होते थे, और सबके सामने तरह तरह के चढ़ावे चढ़ाए जाते थे (६-२५,२६)।

शकुन वग़ैरह मूढ़ विश्वासों में भी लोग फंसे हुए थे (१-३१)।

वर्ण व्यवस्था की तरह आश्रम व्यवस्था का भी रिवाज था। उसमें भी दिल की हालत या भावना पर निगाह रखने की जगह ऊपरी दिखावट, भेस और नियमों पर ज्यादह जोर दिया जाता था, जैसे यह कि 'सन्यासी' आग को हाथ न लगाये, यह यह काम न करे, वग़ैरह (६-१)।

जो लोग सिर्फ़ एक परमेश्वर को मानते थे, वे भी कई अलग अलग रास्तों से उसे जानने या हासिल करने की कोशिश करते थे (४-११)। ग़रज़, देश में उस वक्त तरह तरह के पन्थ, सम्प्रदाय और 'धर्म' (१८-६६) जारी थे। कुछ लोग 'सिद्धियों'

के पीछे भी दौड़ते थे, और उन्हें हासिल करने के दो रास्ते थे। एक यज्ञ वग़ैरह कर्म काण्ड और दूसरा दुनिया से अलग रहकर रूखा ज्ञान।

इन हालतों में क़ुदरती तौर पर दर्शन शास्त्र या फ़लसफ़े की निगाह से दो अलग अलग सम्प्रदाय एक दूसरे के ख़िलाफ़ देश में जारी थे। इन दोनों का गीता में बार बार ज़िक्र आता है (२-३९;३-३;५-२;१३-२४;)। एक सांख्य सम्प्रदायी, जो यज्ञ, कर्मकाण्ड वग़ैरह की जगह ज्ञान पर ज़ोर देते थे और ज्ञान को ही निजात यानी मुक्ति का ज़रिया मानते थे, जो हर तरह के कामों को बुरा और 'त्याज्य' मानते थे (१८-३), और मामूली घर गृहस्थ की ज़िन्दगी से अलहदगी (सन्यास) को मुक्ति के लिए ज़रूरी बताते थे। और दूसरे कर्म साम्प्रदायी जो कर्म काण्ड यज्ञ वग़ैरह पर ज़ोर देते थे और उन्हीं के ज़रिये मुक्ति मानते थे। गीता में ज्ञान और कर्म दोनों को 'योग' बताया गया है (३-३)। ध्यान, प्राणायाम वग़ैरह के भी कई तरीक़े उन दिनों जारी थे (१३-२४;४-२९ ३०)।

गीता में साफ़ लिखा है कि वह ज़माना, इस देश में, महज़ पाण्डवों के ऊपर कौरवों के ज़ुल्मों का ही ज़माना नहीं था, बल्कि चारों तरफ़ "धर्म की ग्लानि और अधर्म के अभ्युत्थान" का ज़माना था। ठीक वह ज़माना था, जब कि ईश्वरीय अवतारों या महान आत्माओं के जन्म लेने, गीता जैसे अमर

उपदेशों के दिये जाने, और सच्चे "धर्म के फिर से क़ायम किए जाने" की ज़रूरत होती है (४-७,८)।

इन्हीं धर्मों, पन्थों और सम्प्रदायों के गोरखधन्धे में पड़ कर, अपने लिये साफ़ साफ़ रास्ता न देख, अर्जुन ने अपने को "धर्म सम्मूढ़ चेतः" (२-७) कहकर श्रीकृष्ण से राह दिखाने की प्रार्थना की है। अर्जुन की इस प्रार्थना का जवाब ही गीता का उपदेश है।

अब हम गीता के एक एक अध्याय पर अलग अलग एक सरसरी निगाह डालेंगे। इन अध्यायों में अलग अलग पहलुओं से बारबार वही बात दुहराई हुई मिलेगी। मज़हबी हिदायत की किताबों में ऐसा होना मामूली बात है।

गीता धर्म

पहला अध्याय

पहले अध्याय में अर्जुन ने अपनी जिन कठिनाइयों को श्रीकृष्ण के सामने रक्खा उनका ज़िक्र हम ऊपर कर चुके हैं। वे ये थीं कि—इस लड़ाई से हमारे खानदान, ज़ात और बिरादरी के सब पुराने रस्म रिवाज मिट जावेंगे, वर्णसंकर हो जावेगा, पितरों को पिण्ड और जल न पहुँच सकेगा और इस सब 'धर्म' के मिट जाने से हमारा सारा कुल नरक में पड़ेगा। अर्जुन ने यह बात साफ़ कही है कि इन पुराने 'धर्मों' के मिट जाने से सब लोग नरक को जाते हैं, यह हम अपने पुरखों से सुनते आए हैं।

दूसरा अध्याय

श्रीकृष्ण का जवाब गीता के दूसरे अध्याय से शुरू होता है। इन सब बातों को श्रीकृष्ण ने पहले अर्जुन का सिर्फ़ "मोह" (२-२), उसकी "शान के ख़िलाफ़" और उसके "दिल की कमज़ोरी" (२-३) बताकर टालना चाहा। जब इससे अर्जुन की तसल्ली न हुई तो श्रीकृष्ण ने "हंसते हुये" कहा—

अर्जुन ! तू अक़लमन्दों की सी बातें करता है और उन बातों की फ़िक्र करता है जिनकी कोई फ़िक्र नहीं करनी चाहिये। "पंडित" यानी समझदार आदमी का यह काम नहीं है कि कौन और क्या मिट गया और क्या अभी नहीं मिटा इसकी चिन्ता करे (२-११)।

इस तरह शुरू में गीता ने अर्जुन के इन सब शकों को "अशोच्य" यानी ऐसी चीजें "जिनकी फ़िक्र ही नहीं करनी चाहियें" कहकर ख़त्म कर देना चाहा।

यहाँ पर यह बात ध्यान देने के क़ाबिल है कि 'धर्म' शब्द का इस्तेमाल अर्जुन ने—"जाति धर्माः कुल धर्माश्च शाश्वताः" —कर्म काण्ड और रस्म रिवाज के माइनों में किया है। लेकिन श्रीकृष्ण ने शुरू से 'धर्म' शब्द का इस्तेमाल दूसरों की तरफ़ अपने 'कर्त्तव्य' या फ़र्ज़ (२-३१) के माइनों में किया है।

दूसरे अध्याय के ग्यारह से तीस तक के श्लोकों में श्रीकृष्ण ने ज़िन्दगी और मौत, सुख और दुःख का फ़लसफ़ा बयान किया है, और कहा है कि आत्मा (रूह) नित्य यानी हमेशा रहने वाली और अमर है, और यह शरीर और दुनिया की सब चीजें, यहां के सब नाम रूप, अनित्य, थोड़ी देर रहने वाले और फ़ानी यानी मिट जाने वाले हैं। गीता का कहना है—

ज़िन्दगी के इस सारे रहस्य यानी राज़ को कोई हैरान होकर देखता है, कोई हैरान होकर उसका ज़िक्र करता है, और कोई दांतों में उँगली देकर सुनता है, लेकिन सुनकर भी जानता या समझता कोई नहीं (२-२९)।

गीता के इस फ़लसफ़े का जहाँ तक अमल के साथ सम्बन्ध है उसका निचोड़ गीता के ही शब्दों में यह है—

जो काम अपनी ख़ुदी को बिलकुल अलग रखकर, अपने निजी सुख दुःख, नफ़े नुक़सान और जीत हार का बिलकुल ख़याल न करते हुए, केवल फ़र्ज़ समझ कर किया जावे, उससे करने वाले को पाप नहीं लगता (२-३८)।

यानी पाप की सारी जड़ ख़ुदी में है।

इसके बाद श्रीकृष्ण ने अर्जुन से कहा कि अब तक मैं तुझे ज्ञान के रास्ते से समझा रहा था। अब यही बात मैं कर्म के रास्ते से समझाना चाहता हूँ। इसे तू समझ लेगा तो अपने फ़र्ज़ को पूरी तरह जान जायगा। (२-३६)।

इसी जगह गीता के इस अध्याय में वेदों और उनकी सीख का वह बयान है, जिसका ऊपर ज़िक्र आ चुका है। अर्जुन ने कहीं पर वेदों का हवाला नहीं दिया। श्रीकृष्ण ने ख़ुद उस ज़माने की हालत को देखते हुए और अर्जुन के ऊपर क्या क्या असर पड़े हुए हैं यह जानकर वेदों और उनकी सीख का ज़िक्र किया है। अर्जुन को समझाने में श्रीकृष्ण को सबसे बड़ी दिक़्क़त यही पड़ी कि वेदों की उस ज़माने की सीख का अर्जुन पर गहरा असर था। उन्होंने अर्जुन से कहा—

वेदों की सीख से तेरी मति मारी गई है और अक़्ल गुम हो गई है (श्रुति विप्रति पन्ना ते··बुद्धिः)। जब तक तेरी यह बुद्धि फिर से स्थिर यानी क़ायम न होगी तब तक तू कर्मयोग के रास्ते को नहीं

समझ सकता (२-५३)। जो लोग वेदों की सीख में ही मग्न हैं और कहते हैं कि इससे बढ़कर और कुछ है ही नहीं, वे बेसमझ (अवि-पश्चितः) हैं, वे अपनी दुनयावी ख़्वाहिशों के पीछे पड़े हुए हैं, वे स्वर्ग के ऐश भोगना चाहते हैं, वे भोग और ऐश्वर्य यानी ऐश आराम के लिए तरह तरह के करम काण्डों की मीठी मीठी बातें करते हैं, जिनसे उन्हें दुनिया के भोग रूपी फल मिल सकें। इनका जी भोगों और ऐश्वर्य में ही फँसा हुआ है। इन्हीं ख़्वाहिशों ने उनकी बुद्धि को नष्ट कर रक्खा है (तयापहृत चेतसाम्)। इसीलिए इनकी बुद्धि स्थिर और एक होकर एक तरफ़ नहीं लग सकती (२-४२, ४३,४४)। इस तरह के लोगों की बुद्धि बजाय एक तरफ़ लगने के—यानी अपनी ख़ुदग़रज़ी और ख़्वाहिश को अलग रखकर फ़र्ज़ को फ़र्ज़ समझ कर पूरा करने की तरफ़ लगने के—उन ख़्वाहिशों को पूरा करने की तरफ़ लगी हुई है जिनका कोई अन्त नहीं। इसीलिए उनकी बुद्धि बहकी रहती है (२-४१)। वेदों की सीख आदमी को सत्व, रजस, तमस, इन्हीं तीनों गुणों में फँसाये रखती है। तू इन तीनों गुणों से ऊपर उठ जा। सुख, दुःख या अपने पराये के भावों से ऊपर हो जा। तू हमेशा सत्व में क़ायम रह। अपने लिए न किसी चीज़ को पाने की ख़्वाहिश कर और न किसी चीज़ को अपनाए रखने की। तू अपनी आत्मा के अन्दर क़ायम हो (२-४५)। जो "ब्राह्मण" यानी ज्ञानी आदमी हक़ीक़त को जान गया है, उसके लिए तमाम वेद वैसे ही निकम्मे हैं, जैसे उस जगह जहाँ पानी ही पानी भरा हो, एक छोटा सा कुँवा (२-४६)।

वेदों से यहां मतलब वेदों की ऊपरी रूढ़ियों, यज्ञों, रस्म रिवाज़ों और कर्म काण्ड से है (९-२०,२१)।

इसके बाद श्रीकृष्ण ने अर्जुन को फिर अपनी ख़ुदी को अलग रखकर, अपने लिए किसी तरह की इच्छा न करते हुए, कामयाबी और नाकामयाबी दोनों में अपने मन को एक रस रखते हुए, फ़र्ज़ को फ़र्ज़ समझकर पूरा करने का उपदेश दिया है, फ़र्ज़ से हट कर बैठ जाने को बुरा कहा है, और दूसरों की तरफ़ अपने फ़र्ज़ के इस तरह ठीक ठीक पूरा करने को ही 'योग' बताया है (योगः कर्मसु कौशलम्')। (२-५०)।

श्रीकृष्ण के यह कहने पर कि वेदों के कर्म काण्ड में भटकी हुई बुद्धि को एक जगह क़ायम यानी स्थिर करने की ज़रूरत है, अर्जुन ने पूछा कि 'स्थिर बुद्धि' या 'स्थित प्रज्ञ' आदमी की क्या पहिचान है। इसके जवाब में दूसरे अध्याय के आख़ीर के वे अठारह श्लोक कहे गये हैं जो एक तरह गीता के उपदेशों का सार माने जाते हैं। श्रीकृष्ण ने जवाब दिया कि—

अर्जुन! जिसने अपने मन के अन्दर पैदा होने वाली तमाम ख़्वाहिशों को जीत लिया, जो न दुःख से डरता है और न सुख की इच्छा करता है, जिसे न किसी से राग या मोह है, न किसी से डर और न किसी पर क्रोध, जिसकी इन्द्रियें यानी नफ़्स उसके क़ाबू में हैं, उसी को 'स्थित प्रज्ञ' समझना चाहिये। इसलिये अपनी इन्द्रियों को इस तरह इन्द्रियों की ख़्वाहिश की चीज़ों से खींच कर अपने क़ाबू में रखना चाहिये, जिस तरह कछुआ अपने हाथ पैरों को अपने अन्दर

खींच लेता है। फिर भी तबियत उधर को बहकती रहेगी। इसका इलाज धीरे धीरे ख़याल को उधर से हटाना और ईश्वर की तरफ़ लगाना है। जिसे किसी से रागद्वेष यानी मोह या दुश्मनी नहीं है और जिसकी इन्द्रियां उसके क़ाबू में हैं, वह दुनिया के सब काम करता हुआ भी भीतर शान्त रहता है। अपने नफ़्स पर क़ाबू रखने वाला आदमी दुनिया के सुख भोगों की तरफ़ से अपने को हटा कर अपने अन्दर की सफ़ाई और आत्मा की तरक़्क़ी की तरफ़ मन को लगाए रखता है। असली काम अपने 'अहंकार' यानी अपनी .खुदी को मिटाना है। यही सच्ची शान्ति और सच्चे सुख को हासिल करने का तरीक़ा है। यही ईश्वर को पाना और निजात हासिल करना है। (२-५५ से ७२)।

तीसरा अध्याय

अर्जुन के दिल में फिर यह सवाल पैदा हुआ कि अगर मुक्ति के लिए अपनी इन्द्रियों को जीतना और .खुदी को मारना ही जरूरी है तो फिर दुनिया के कामों में क्यों फंसा जावे। इसके जवाब में तीसरे अध्याय में बताया गया है कि—

इस तरह के "सन्यास" से जिसमें अपने दुनियावी फ़र्ज़ को छोड़ दिया जावे आदमी सिद्धि यानी कमाल को नहीं पहुंच सकता (३-४)। वे काम ही आदमी को बन्धन में डालते हैं जो "यज्ञ" के यानी दूसरों के लिए .कुर्बानी के तौर पर करने के बजाय अपनी .खुदग़रज़ी के लिए किए जावें। इसलिये बिना मोह के निस्वार्थ होकर काम करना

चाहिये (३-९)। "यज्ञ" का मतलब निस्वार्थ काम ही है। ऐसे कामों के सहारे ही शुरू से दुनिया संभली हुई है। जो आदमी "सिर्फ़ अपने लिए भोजन पकाता है" (ये पचंत्यात्म कारणात्) वह पापी है, वह "पाप" ही खाता है। जो दूसरों का ख़याल नहीं रखता वह चोर (स्तेन) है (३-१२,१३)। यही "यज्ञ" का असली मतलब है। इसके ख़िलाफ़ जो अपनी इन्द्रियों के सुख में लगा रहता है उसका जीना निकम्मा और पाप है (३-१६)। आदमी को किसी भी दूसरे प्राणी से अपना स्वार्थ पूरा कराने की इच्छा नहीं रखनी चाहिये (३-१८)। "असक्त" यानी बेलाग और बेलौस यानी निस्वार्थ काम करते हुए ही आदमी ईश्वर को पा सकता है (३-१९)। इसी तरह दूसरों की तरफ़ अपने फ़र्ज़ों को पूरा करते हुए ही जनक जैसों ने सिद्धि हासिल की थी। इसी में सब का भला (लोक संग्रह) है (३-२०)। जिस तरह नासमझ आदमी अपने अपने स्वार्थ के कामों में लगे रहते हैं, उसी तरह समझदार आदमी को निस्वार्थ भाव से दूसरों का यानी सबका भला चाहते हुए (चिकीर्षुर्लोक संग्रहम्) अपना फ़र्ज़ पूरा करने में लगा रहना चाहिये (३-२५)। अध्यात्म यानी रुहानियत की तरफ़ दिल को लगाये हुए, आशा और ममता से ऊपर उठकर आदमी 'ईश्वर के लिए' दूसरों की तरफ़ अपने सब फ़र्ज़ों को पूरा करे (३-३०)। किसी भी चीज़ के अन्दर निजी राग या द्वेष का होना ही आत्मा का दुश्मन है। इस दुश्मन के क़ाबू में नहीं आना चाहिये (३-३४)। हर मौक़े और हर हालत में अलग अलग अपना जो फ़र्ज़ दिखाई दे उसी को "धर्म" समझ कर पूरा

करना चाहिए, दूसरे किसी "धर्म" की तरफ़ नहीं जाना चाहिए। जैसा भी अपने से बन पड़े अपना कर्त्तव्य यानी फ़र्ज़ पूरा करते हुए मरना ही अच्छा है (३-३५)। आदमी से पाप कराने वाली दो ही चीज़ें हैं। ये दो ही इस दुनिया में उसके दुश्मन हैं—(१) "काम" यानी नफ़्सानियत और (२) "क्रोध" यानी ग़ुस्सा। जिस तरह धुआँ आग को ढक लेता है और गर्द शीशे को अन्धा कर देती है इसी तरह ये दोनों आदमी की अक़्ल पर पर्दा डाल देते हैं (३-३७, ३८)। इसलिए पहले अपनी इन्द्रियों को क़ाबू में करके, ज्ञान और विज्ञान का नाश करने वाले इन दोनों दुश्मनों को मारना चाहिये (३-४१)। इन्द्रियां यानी नफ़्स काफ़ी सूक्ष्म (लतीफ़) चीज़ है, इन्द्रियों से ज़्यादह सूक्ष्म मन है, मन से ज़्यादह सूक्ष्म बुद्धि है, बुद्धि से कहीं अधिक सूक्ष्म आत्मा यानी रूह है। वही सब कुछ है। वही वह है (३-४२)। इसे समझते हुए अपने नफ़्स को जीतते हुए और अपनी ख़्वाहिशों को मारते हुए आत्मा की तरफ़ बढ़े चलो (३-४२, ४३)। यही सच्चा धर्म है, यही "योग" है जो पुराने ज़माने से चला आता है और जिसे भूल जाने से आज लोग रूढ़ियों, रस्मों, और कर्म काण्डों में फँस गए हैं (४-१ से ३)।

चौथा अध्याय

चौथे अध्याय में कहा गया है कि जब जब दुनिया के लोग सच्चे धर्म को भूल कर ग़लत चीज़ों को धर्म समझने लगते हैं, और असली धर्म से फिर जाते हैं तब तब वह महान आत्माएं

जन्म लेती हैं जो दुनिया को फिर से धर्म का रास्ता बताती हैं। (४-७,८)।

जिनके दिलों से मोह, क्रोध और डर बिल्कुल जाते रहे, जिन्होंने एक परमेश्वर का सहारा लिया और उसी से अपना मन लगाया, उन्हें सच्चा ज्ञान हासिल होता है और आख़ीर में वे उसी परमेश्वर में लीन हो जाते हैं (४-१०)। मुक्ति यानी निजात के लिए किसी कर्म काण्ड की ज़रूरत नहीं, ज़रूरत अपने दिल से मोह, डर और क्रोध को निकाल कर उसे एक परमेश्वर की तरफ़ लगाने की है।

जहां तक धर्म के उस ऊपरी हिस्से का ताल्लुक़ है जिसे कर्म काण्ड कहते हैं, और जिससे अलग अलग धर्मों या मजहबों में फ़र्क़ दिखाई देता है, भगवद्गीता सब धर्मों को एक निगाह से देखती है और कहती है—

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्
ममवर्त्मानु वर्त्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः (४-११)

अर्थात परमेश्वर कहता है कि जो जिस रास्ते से चलकर मेरे पास आते हैं मैं उसी रास्ते से उन्हें मिलता हूँ। जिस तरह किसी गोल चक्र पर चारों तरफ़ खड़े हुए लोग उसके बीच यानी केन्द्र तक पहुंचने के लिए अलग अलग दिशाओं में चल कर एक ही जगह पहुंचते हैं, इसी तरह लोग अलग अलग पन्थों और रास्तों सें चलकर भी उसी एक परमेश्वर तक पहुंचते हैं।

इसीलिए गीता की राय में—

समझदार आदमी को चाहिये कि जो कम समझ लोग किसी भी 'रास्ते' पर रहकर नेक कामों में लगे हुए हैं, उनकी बुद्धि को डांवा डोल न करे, बल्कि उन्हें उसी तरह नेक कामों की तरफ़ लगाये रक्खे (३-२६ से २९)।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चारों वर्णों के लिए गीता का कहना है कि न आदमी इस तरह का कोई भेद बना सकता है और न जन्म से इसका कोई वास्ता है। परमेश्वर ने सारे मनुष्य समाज के अन्दर चार तरह के गुणों वाले और चार तरह के काम करने वाले आदमी बनाये हैं। यह फ़रक़ एक .कुदरती फ़रक़ है और गुणों और कामों के मुताबिक़— "गुण कर्म विभागशः", ही हर आदमी को ब्राह्मण, क्षत्रिय वग़ैरह मानना चाहिये (४-१३)।

आगे जाकर अठारहवें अध्याय में चारों वर्णों के अलग अलग गुण और काम बयान कर दिये गये हैं (१८-४१ से ४४); यानी यह कि किन गुणों वाला और किस तरह के काम करने वाला आदमी ब्राह्मण समझा जाना चाहिये, किस तरह वाला क्षत्रिय, किस तरह वाला वैश्य और किस तरह वाला शूद्र, और कहा है कि हर आदमी .खुद अपने 'स्वभाव' को देखकर वह काम करे जो उसके स्वभाव के मुताबिक़ (स्वभावज) हो यानी जिसकी उसमें रुचि और क़ाबलियत हो। इस तरह अपने अपने स्वभाव के मुताबिक़ (स्वभाव नियतं कर्म) सच्चे दिल से और ईश्वर के लिए (ईश्वरार्पण) काम करता हुआ

हर आदमी अपने ही रास्ते से सिद्धि या कमाल हासिल कर सकता है। यही हर आदमी का "स्वधर्म" है (१८-४५,४६,४७)।

जो आदमी अपने कामों से ख़ुद अपने लिये सुख हासिल करने का इरादा नहीं रखता वही "पंडित" है। जिसका मन उसके वश में है, जो दुई से ऊपर है (द्वंद्वातीतो), जो किसी से ईर्षा या डाह नहीं करता (विमत्सरः), जो हर काम क़ुर्बानी (यज्ञ) के तौर पर यानी दूसरों के भले के लिए और ईश्वर के लिए करता है, वह अपने कामों से बन्धन में नहीं फँसता (४-१९ से २३)। आदमी को यह समझ कर सब काम करने चाहियें कि जो कुछ वह देख रहा है सब ईश्वर की ही लीला, उसी का ज़हूर है। ईश्वर सत्य यानी हक़ और नित्य यानी लाज़वाल है और यह सब असत्य और अनित्य यानी बातिल और फ़ानी है, और आख़ीर में सब को ईश्वर की ही तरफ़ जाना और उसी में लीन होना है। यह समझते हुए अपने सब फ़र्ज़ों को पूरा करना ही असली "यज्ञ" है (४-२३,२४)। लोग और भी तरह तरह के यज्ञ (तप, प्राणायाम वग़ैरह) करते हैं जिनका वेदों में ज़िक्र है लेकिन इन सब से बढ़कर असली यज्ञ वह "ज्ञान" है जिसे एक बार हासिल करने के बाद फिर आदमी इस तरह के धोखे में नहीं पड़ सकता। वह ज्ञान यही है कि आदमी तमाम प्राणियों को अपने अन्दर और सबको ईश्वर के अन्दर और सब के अन्दर ईश्वर को देखे (येन भूतान्य शेषेण द्रक्ष्यस्थात्मन्यथो मयि) (४-२५ से ३५)।

सब प्राणियों को अपनी तरह समझना और सबके अन्दर

एक ईश्वर के दर्शन करना, यही गीता के अन्दर बार बार ज्ञान की आख़िरी हद बताई गई है।

इस ज्ञान से बढ़कर आदमी को पाक करने वाली दूसरी चीज़ इस दुनिया में नहीं है। योगी धीरे धीरे ख़ुद अपने अन्दर इसे साफ़ साफ़ देख लेता है (४-३८)। इसके लिये महज़ श्रद्धा (यक़ीन) की और अपनी इन्द्रियों को क़ाबू में रखने की ज़रूरत है (४-३९)।

पांचवा अध्याय

पांचवें अध्याय में अर्जुन ने फिर वही सवाल किया कि 'सांख्य मार्ग' और 'कर्म मार्ग' इन दोनों में कौन अच्छा है। यानी सब कामों को छोड़ कर 'सन्यास' और 'ज्ञान' का सहारा लेना, या दुनिया में रहते हुए दुनिया के सब काम करते हुए आत्मा की भलाई की इच्छा करना। इस सवाल के जवाब में गीता ने इन दोनों रास्तों को असलीयत में एक बताते हुए दोनों का एक सुन्दर मेल या समन्वय करने की कोशिश की है। श्रीकृष्ण ने जवाब दिया—

जो लोग यह कहते हैं कि सांख्य मार्ग और कर्म मार्ग दोनों दो अलग अलग रास्ते हैं, वे बच्चे हैं। पंडित यानी समझदार लोग इन्हें अलग अलग नहीं मानते। हर आदमी इन दोनों में से किसी एक रास्ते पर भी ठीक ठीक चलकर दोनों का फल पा सकता है। सांख्य मार्ग से चलकर लोग जिस स्थान या मुक़ाम तक पहुँचते हैं, कर्म योग के रास्ते से चलकर भी उसी स्थान तक पहुंचते हैं। जो आदमी

सांख्य मार्ग और कर्म मार्ग दोनों को एक समझता है वही ठीक ठीक समझता है। (५-४,५)।

इसके बाद कहा है—

वही आदमी सच्चा सन्यासी है जो न किसी से नफ़रत करता है और न कुछ चाहता है, जो दुई से ऊपर है, जो अपने फ़र्ज़ के पूरा करने में लगा रहता है, जिसका दिल साफ़ है, जिसने अपने ऊपर क़ाबू हासिल कर लिया है, जिसकी इन्द्रियां उसके बस में हैं, जो सब किसी की आत्मा को अपनी ही आत्मा की तरह समझता है (सर्व भूतात्म भूतात्मा), और जो सब कामों को मोह छोड़कर ईश्वर के लिए (ब्रह्मण्याधाय) करता है।

इस तरह वह अपनी आत्मा को शुद्ध करता है (५-२ से ११)।

जो लोग इस तरह समझ बूझ कर अपने कर्त्तव्यों को पूरा करते हैं उनके अन्दर अपने आप सूरज की तरह उस ज्ञान की रोशनी होती है जिसमें उन्हें अपने अन्दर ही परमेश्वर के दर्शन होते हैं। फिर उसी से लौ लगाये हुए वे मुक्ति को हासिल करते हैं। उनके सब पाप धुल जाते हैं (५-१५ से १७)।

विद्या विनय सम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाकेच पण्डिताः सम दर्शिनः॥

सच्चा पण्डित वही है जो विद्या और विनय से सम्पन्न ब्राह्मण को, गाय को और हाथी को, कुत्ते को और चांडाल को सब को एक निगाह से देखता है (५–१८)।

जिन्होंने इस तरह की समता में अपने मन को क़ायम कर लिया

उन्होंने इसी दुनिया में सब कुछ जीत लिया, क्योंकि परमेश्वर सब में 'सम' (बराबर) है और समता ही परमेश्वर है (५-१९)।

दुनिया के सब भोग केवल दुःख का स्रोत हैं। समझदार आदमी उनमें नहीं फंसता। जो मरने से पहले इसी ज़िन्दगी में काम और क्रोध के ज़ोर को रोक सकता है वही योगी है, वही सुखी है। जो अपनी आत्मा के अन्दर ही सुख, आनन्द और रोशनी पाता है वह परमेश्वर में लीन होकर मुक्ति हासिल करता है। यह पद (रुतबा) उन्हीं को हासिल होगा जिनकी दुई मिट गई, जिन्होंने अपने आपको जीत लिया, और जो सब की भलाई के कामों में हमेशा लगे रहते हैं (सर्व भूत हितेरताः), मुक्ति सिर्फ़ ऐसों ही के लिए है, (५-२२ से २६)।

इसके बाद आख़िरी तीन श्लोकों में आत्मा की आगे की तरक़्क़ी (योगाभ्यास यानी सलूक) के रास्ते की तरफ़ इशारा किया गया है, और लिखा है कि—

आदमी अपनी इन्द्रियों से सम्बन्ध रखने वाली बाहर की तमाम चीज़ों को बाहर रखकर, दोनों आँखों को भवों के बीच में लाकर, अन्दर जाने वाले और बाहर आने वाले सांसों को बराबर करके, अपनी इद्रियों, मन और बुद्धि को इधर उधर जाने से रोक कर, इच्छा, डर और क्रोध को दूर करके, और परमेश्वर को यह जान कर कि वह सब दुनियाओं का मालिक, सब के पूजा पाठ को स्वीकार करने वाला और सब प्राणियों का भला चाहने वाला (सुहृदं सर्व भूतानां) है, उसका ध्यान करे। उसे ऐसा जान कर ही आदमी असली शान्ति हासिल कर सकता है।

छठा अध्याय

फिर सांख्य और कर्म मार्ग दोनों को एक बताते हुए कहा गया है—

जो आदमी नतीजे की परवाह न कर जिसे अपना फ़र्ज़ समझता है, उसे पूरा करता है, वही सन्यासी है, और वही योगी है। सन्यास के ऊपरी नियमों का पालन करने वाला जैसे आग को न छूने वाला या यह काम और वह काम न करने वाला सन्यासी नहीं है (६-१.२)। यानी सन्यास दिल की एक ख़ास हालत का नाम है, किसी ऊपरी नियमों या लिबास वग़ैरह का नहीं।

जो आदमी योग को हासिल करना चाहता है उसके लिए अपने दुनियावी कर्त्तव्यों को पूरा करना ही योग का ज़रिया है, और योग हासिल हो जाने के बाद भीतर की शान्ति और समता ही ख़ुद बख़ुद उससे उसके सारे फ़र्ज़ पूरे कराती रहती है (६–३)।

आदमी ख़ुद ही अपना दोस्त है और ख़ुद ही अपना दुश्मन। जिसने अपनी ख़ुदी को जीत लिया वह अपना दोस्त है और जिसकी ख़ुदी उस पर हावी है वह ख़ुद अपना दुश्मन है (६-५,६)।

जिसने अपनी ख़ुदी को जीत लिया, जो शांत है और जो सरदी गरमी, सुख दुःख, मान अपमान में यकसां रहता है उसकी आत्मा ही परमात्मा है (६–७)। जो दोस्त और दुश्मन, अपने पराये, साधु और पापी सब को एक निगाह से देखता है वही ठीक है (६–९)।

इसके बाद फिर भीतर की साधना की तरफ़ इशारा किया गया है और कहा गया है—

इस तरह का आदमी किसी एकान्त और साफ़ जगह में बैठकर, ...अपने मन को एक तरफ़ लगा कर...सिर, गर्दन और जिस्म को बिल्कुल सीधा और अडोल रखकर, अपनी नाक के सिरे को देखता हुआ और इधर उधर निगाह न डालता हुआ...परमेश्वर का ध्यान करे, तो धीरे धीरे उसे परम शान्ति हासिल होगी और...वह हालत हासिल होगी कि जिससे फिर बड़े से बड़ा दुःख भी उसे डिगा नहीं सकता, वग़ैरह...(६-१० से १५ और २२)।

फिर चेताया गया है कि यह अभ्यास न दुनिया में फंसे हुए लोगों के लिए है और न दुनिया के फ़र्ज़ों से भाग कर दुनिया से अलग बैठने वालों के लिए है—

यह उसी के दुःखों को नाश कर सकता है जो अपने आहार और विहार में, खाने पीने और रहन सहन में, न ज़्यादती करता है और न बिलकुल कमी, जो ठीक बीच के दर्जे पर क़ायम रहता है, जो अपने सब कर्त्तव्यों को पूरा करने में एक बीच का रास्ता पकड़ता है, ठीक सोता भी है और ठीक जागता भी है (६-१६)।

अठारहवें से अट्ठाईसवें श्लोक तक इस रास्ते को कुछ और खोलकर बयान किया गया है। और इसका आख़िरी नतीजा आत्मा का परमात्मा में लीन हो जाना (ब्रह्म भूतं) बताया गया है। इसी को सूफ़ियों के शब्दों में 'फ़ना फ़िल्लाह हो जाना' कहते हैं। फिर कहा गया है—

जिस आदमी का दिल योग में लग गया है वह सब प्राणियों के अन्दर अपने को और अपने अन्दर सब प्राणियों को देखता है। वह सब को एक निगाह से देखता है। जो सब के अन्दर परमेश्वर को और परमेश्वर के अन्दर सब प्राणियों को देखता है उसका फिर परमेश्वर से नाता नहीं टूटता। जो दुई से ऊपर उठकर सब प्राणियों के अन्दर परमेश्वर का भजन करता है, वह कहीं भी रहे उसका नाता परमेश्वर से जुड़ा हुआ है। जो सब के सुख दुःख को अपना ही सुख दुःख समझता है और अपनी ही तरह सब को एक समान देखता है वही परमेश्वर का सब से ज़्यादा प्यारा है (६-२९ से ३२)।

अर्जुन ने सवाल किया कि इस तरह मन को क़ाबू में करना बहुत मुश्किल है। जवाब मिला कि—

इसके लिए 'अभ्यास' यानी मश्क़ की और 'वैराग्य' यानी दुनिया के भोगों की तरफ़ से तबियत को फेरने की ज़रूरत है (६-३५)। जिसे अपने ऊपर क़ाबू नहीं है वह इस योग को हासिल नहीं कर सकता (६-३६)। रूढ़ियां और कर्म काण्ड इसमें मदद नहीं दे सकते, क्योंकि इस योग की ख़्वाहिश भी जिसके अन्दर पैदा हो गई है, उसे वेदों और उनके तमाम कर्म काण्ड की कोई ज़रूरत नहीं। वह उनसे ऊपर उठ जाता है।

जिज्ञासुरपि योगस्य शब्द ब्रह्मातिवर्तते।

और जो इस तरफ़ थोड़ी सी भी सच्ची कोशिश कर लेता है, फिर चाहे उसका मन डिग जाय और उसे कामयाबी न मिल सके, तब भी उसकी कोशिश फ़ज़ूल नहीं जाती और न उसकी आगे की गति

ख़राब होती है। आगे की ज़िन्दगी में उसकी तरक़्क़ी जारी रहती है। तप, ज्ञान और कर्म काण्ड सब से यह रास्ता कहीं बढ़कर है। (६-३७ से ४६)।

सातवां अध्याय

जो लोग परमेश्वर को जानना चाहते हैं उनके लिए सातवें अध्याय में परमेश्वर के व्यापक रूप को बयान करने की कोशिश की गई है, एक परमेश्वर और बहुत से देवताओं का फ़रक़ बताया गया है, और केवल एक परमेश्वर की पूजा पर जोर दिया गया है—

परमेश्वर की प्रकृति (क़ुदरत) के दो पहलू हैं। इन्हीं दोनों से सारी दुनिया और सब प्राणी पैदा हुए हैं। मिट्टी, पानी, आग, हवा, आकाश (ईथर), मन, बुद्धि और अहंकार ये आठों परमेश्वर की "अपरा" यानी स्थूल प्रकृति हैं, और जो चीज़ ज़िन्दगी की शक्ल में इस सारी दुनिया को संभाले हुए है और इसे चला रही है वह ईश्वर की "परा" यानी सूक्ष्म प्रकृति है। ईश्वर ही सारी दुनिया का पैदा करने वाला और उसे ख़त्म करने वाला है। उसके अन्दर यह सब दुनिया इस तरह पिरोई हुई है जिस तरह एक डोरे के अन्दर माला के दाने। वही पानी के अन्दर रस, चाँद सूरज के अन्दर रोशनी, वेदों में ओ३म्, आकाश में आवाज़, आदमियों में मर्दान्गी, मिट्टी में ख़ुशबू, आग में तेज, तपस्वियों में तप, और सब प्राणियों में जान है। वही सब प्राणियों का असली बीज है। वही बुद्धिमानों की बुद्धि

और तेजस्वियों का तेज है। वही काम और मोह से आज़ाद बलवानों का बल है, वही प्राणियों के अन्दर की जायज़ ख्वाहिश है। सत्व, रजस और तमस सब हालतें ईश्वर से ही पैदा हुई हैं, लेकिन वह ख़ुद इन तीनों से परे है। इन तीनों के जाल में पड़ कर ही दुनिया उसे नहीं पहचानती। वह नित्य (ग़ैरफ़ानी) और सब से अलग है। (७-४ से १२)।

कुछ लोग अपनी छोटी छोटी ख्वाहिशों में पड़ कर दूसरे देवताओं की पूजा करते हैं। जो जिसकी पूजा श्रद्धा से करना चाहता है परमेश्वर उसे उसी में श्रद्धा देते हैं। जो फल उन लोगों को हासिल होते हैं वह परमेश्वर के ही ठहराए हुए हैं। लेकिन उनके यह फल नाशवान यानी फ़ानी होते हैं। देवताओं की उपासना करने वाले देवताओं को पहुँचते हैं और एक परमेश्वर की उपासना करने वाले परमेश्वर को। वजह यह है कि कम समझ लोग परमेश्वर के असली और अव्यक्त रूप को नहीं समझ पाते। वे उसकी अव्यक्त शक्ल में ही पूजा करना चाहते हैं। सब देवताओं के रूप परमेश्वर के ही व्यक्त रूप हैं। लेकिन परमेश्वर अव्यक्त यानी निर्गुण, अज कभी पैदा न होने वाला और अव्यय यानी लाज़वाल और सब से ऊपर है। जो आदमी राग और द्वेष से हटकर, दुई से ऊपर उठकर, पाप से बचता हुआ, और नेक काम करता हुआ एक परमेश्वर की पूजा करता है, वही हक़ीक़त को जान सकता है और वही निजात हासिल कर सकता है। (७-२० से ३०)।

आठवां अध्याय

आठवें अध्याय में फिर कहा गया है कि—

आदमी को मरने के वक्त एक परमेश्वर को ही याद करते हुए शरीर छोड़ना चाहिए। जो लोग दूसरे देवताओं या भावों का ध्यान करते हैं वह अपने उन्हीं छोटे छोटे भावों में फँसे रहते हैं। दुनिया में अपने सब कर्तव्यों का पालन करते हुए भी सदा एक परमेश्वर की ही याद करते रहना चाहिए। वह परमेश्वर सर्वज्ञानी, सबको जानने वाला, अनादि, सबका चलाने वाला, सूक्ष्म से भी सूक्ष्म, सबका पालने वाला, अचिंत्य यानी ख़याल की गति से परे, अन्धकार से दूर और ज्योति ही ज्योति यानी नूर ही नूर है। वेदों में उसी को अक्षर कहा गया है। वह नित्य और अनन्त है। यह सब प्राणी उसी के अन्दर हैं। वह इन सब में रमा हुआ है। इसी रूप में उसकी पूजा करनी चाहिये। वेदों के मार्ग से यानी यज्ञ, तप, दान वग़ैरह तमाम कर्म-काण्ड से यह रास्ता कहीं अच्छा और कहीं ऊंचा है। (८-५,६, ७, ९, १०, ११, २२, २८)।

बीच बीच के श्लोकों में यह बताया गया है कि मौत के वक्त आदमी को किस तरह परमेश्वर में ध्यान लगाना चाहिए और दिल में क्या क्या भाव रखना चाहिये। कुछ श्लोकों में बताया गया है कि कब कब और किन किन हालतों में मरने से आदमी अंधेरे रास्तों से जाकर स्वर्ग, नरक वग़ैरह में फँसता है और कब कब और किन किन हालतों में मर कर

रोशनी के रास्तों से होकर मुक्ति की तरफ़ बढ़ता है। गीता के ये श्लोक (इस अध्याय के २४ वें से २७ वें तक) इस पुस्तक के सब से मुश्किल श्लोक माने जाते हैं। टीका करने वालों ने इन पर तरह तरह अपनी बुद्धि और विद्वत्ता को आज़माया है। लोकमान्य तिलक ने अपने 'गीता रहस्य' (पृष्ठ २६५-२६८) में कुछ और पहले के टीकाकारों की राय का समर्थन करते हुए इन श्लोकों का यह मतलब बताया है कि जो आदमी आख़ीर तक रूढ़ियों रस्म रिवाजों और कर्मकाण्ड में फंसा रहता है वह मरने के बाद अन्धकार के रास्ते जाकर स्वर्ग नरक के चक्कर में पड़ता है, और जो इन सबसे ऊपर उठकर सब प्राणियों को एक निगाह से देखता हुआ दुनिया की बेलौस, निष्काम और निस्वार्थ सेवा में लगा हुआ शरीर छोड़ता है वह रोशनी के रास्ते चलकर मुक्ति की तरफ़ क़दम बढ़ाता है।

नवां अध्याय

नवें अध्याय के शुरू में कहा गया है कि हक़ीक़त का राज़ या रहस्य वही आदमी समझ सकता है जो किसी से ईर्षा या बुग़्ज़ न रखता हो (अनसूयवे) केवल वही सच्चे धर्म का पालन कर सकता है। इसके बाद—

परमेश्वर स्वयं अव्यक्त (अलख़फ़ी) है। लेकिन यह सारा जगत उसी से रमा हुआ (व्याप्त) है। सब प्राणी उसी के अन्दर हैं (मत्स्थानि सर्वभूतानि)। जिस तरह सब जगह जाने वाली हवा

सदा आकाश के अन्दर रहती है उसी तरह सब प्राणी परमेश्वर के अन्दर रहते हैं (९-४,६) ।

जो लोग ज्ञान के साथ परमेश्वर की उपासना करते हैं वे एक में अनेक और अनेक में एक को देखते हैं। वह जिधर देखते हैं उधर ही उन्हें ईश्वर का मुंह दिखाई देता है (विश्वतो मुखं) । सब धर्मों और सम्प्रदायों में, सब तरह के यज्ञों और कर्मकाण्ड में वही परमेश्वर है। यज्ञों में वही यज्ञ है, वही सामग्री, वही अग्नि और वही मन्त्र है। वही इस जगत का पिता है, वही माता है, वही धारण करने वाला और वही पितामह है। वही ओंकार है। वही ऋग्वेद, सामवेद और वही यजुर्वेद है। वही गति, वही पालन-हार, वही मालिक, वही देखने वाला, वही सब के रहने की जगह, वही सबका सहारा, वही सबका भला चाहने वाला, सबका पैदा करने वाला, सबका नाश करने वाला, सबका आधार, सबका अन्त और सबका अविनाशी बीज है। वही सूरज के रूप में तपता है। वही बारिश को रोकता और फिर बारिश करता है। (९-१५ से १९) ।

वेदों के मानने वाले यज्ञों और कर्मकाण्ड के ज़रिये स्वर्ग वग़ैरह के सुख भोगने की लालसा करते हैं। लेकिन उनके इन कामों के नतीजे नाशवान यानी फ़ानी होते हैं। (९-२०,२१)।

जो लोग श्रद्धा के साथ दूसरे देवताओं की पूजा करते हैं, वे भी एक परमेश्वर ही की पूजा करते हैं। क्योंकि सब यज्ञों और कर्मकाण्डों का स्वीकार करने वाला एक परमेश्वर ही है। सब रूप उसी के रूप हैं। लेकिन इन लोगों का तरीक़ा ठीक नहीं (अविधिपूर्वकं) । यह

लोग परमेश्वर को ठीक ठीक नहीं समझते, जो जिस रूप की पूजा करता है वह उसी रूप को पाता है। देवताओं की पूजा करने वाले देवताओं को, पितरों की पूजा करने वाले पितरों को, आदमियों की पूजा करने वाले आदमियों को और एक परमेश्वर की पूजा करने वाले परमेश्वर को पाते हैं। फूल पत्ती जो चीज़ भी कोई परमेश्वर को भक्ति के साथ चढ़ाता है, परमेश्वर उसे प्रेम के साथ स्वीकार करते हैं। इसलिये, हे अर्जुन!—

यत्करोपि यदश्नासि यज्जुहोपि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम्॥ (२७)

खाना पीना, करना धरना जो कुछ भी तू करे सब उसी एक परमेश्वर के अर्पण करके कर, अपने लिए नहीं। यही परमेश्वर को पाने का तरीक़ा है। उस परमेश्वर को जो सब प्राणियों में एक समान मौजूद है (समोऽहं सर्वभूतेपु), और जिसे न किसी से द्वेष है, न किसी से मोह। जो आदमी इस तरह अपने दिल को परमेश्वर में लगाता है वह उसी को पहुँचता है (९-२३ से २९, ३४)।

इसको यूँ समझना चाहिये कि तरह तरह के सम्प्रदाय, पूजा के अलग अलग तरीक़े, कर्मकाण्ड और रूढ़ियाँ सब उसी ईश्वर से हैं। मनुष्य जाति के सब इष्टदेव यानी माबूद उसी के रूप हैं। इस निगाह से यह सब रास्ते सच्चे हैं। लेकिन यह सब अधूरे हैं। समझदार आदमी को चाहिये कि इन सबको छोड़कर उसी एक परमेश्वर की उपासना करे जो सब प्राणियों में है और जो सबकी जान है, अपने अन्दर से दुई और ग़ैरियत

के भावों को मिटा कर किसी से ईर्षा न रखते हुए, अपनी आत्मा को शुद्ध करे और फिर सबके साथ अपने फ़र्ज़ को पूरा करते हुए अपनी आत्मा के अन्दर परमात्मा की आराधना करे।

दसवां अध्याय

दसवें और ग्यारहवें अध्यायों में उस परमेश्वर की जो 'सत्य' (हक़) है, जिसकी सचाई के सामने बाक़ी सब चीज़ें झूठी हैं, जो हर तरह के व्यक्तित्व से ऊपर है, जहाँ न 'मैं' है, न 'तू' है, न 'वह' है, जो सब तरह की अलहदगी और दुई से ऊपर है, जिस तक ख़याल की पहुँच नहीं, जो सब में और सब जगह रमा हुआ है, उस परमेश्वर की अनन्त विभूतियों (ज़हूरों) और उसके विश्वरूप को समझाने की कोशिश की गई है। लिखा है—

वह न कभी पैदा हुआ, न उसका कोई शुरू है, वह सब दुनियाओं का मालिक है (लोकमहेश्वरम्)। सब देवताओं और महर्षियों की पैदायश उसी से हुई है। इन्सानी क़ौम के सब पुरखे जिनकी नसलों से दुनिया के तमाम लोग पैदा हुए हैं (येषां लोक इमाः प्रजाः), वे सब उस एक परमेश्वर ही के मानस पुत्र हैं। आदमियों के दिलों में जितनी तरंगें उठती हैं, सब उसी से पैदा होती हैं। वही सारे संसार का पैदा करने वाला है। वे लोग बुद्धिमान हैं जो उस परमेश्वर से लौ लगाये हुए एक दूसरे से सदा उसका ज़िक्र करते हैं, आपस में समझते समझाते हैं और इस तरह एक दूसरे के साथ मिलकर सन्तोष और आनन्द पाते हैं।

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम् ।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च ।

ऐसे लोग ही सच्चे ज्ञान को हासिल करते हैं। वे ही परमेश्वर को पा सकते हैं।

वह पुरुषोत्तम अपने को अपने ही से जानता और पहचानता है। आदमी उसका 'चिंतन' या ख़याल सिर्फ़ उसकी विभूतियों के ज़रिये ही कर सकता है। ये दिव्य विभूतियां अनन्त हैं। मिसाल के तौर पर उसकी थोड़ी सी विभूतियां ये हैं—

सब प्राणियों में वह आत्मा है। वही सब का शुरू, बीच और आख़ीर है। आदित्यों में, (अलग अलग ब्रह्माण्डों के सूर्यों में) वह विष्णु है, चमकती हुई चीज़ों में वह सूरज है,...नक्षत्रों में वह चांद है, वेदों में वह सामवेद है, देवताओं में इन्द्र है, इन्द्रियों में मन है, ...रुद्रों में शकर, अनार्य लोगों में यानी यक्ष और राक्षसों में कुबेर, वसुओं में अग्नि, पर्वतों में मेरु,...जलाशयों में सागर, महर्षियों में भृगु...स्थावरों में हिमालय, दरख़्तों में पीपल, देवर्षियों में नारद... घोड़ों में उच्चैःश्रवा...हाथियों में ऐरावत, आदमियों में राजा, हथियारों में वज्र...पैदा करने वालों में कामदेव, सांपों में वासुकी, नागों में शेषनाग...शासकों में यम, असने वालों में काल, जानवरों में शेर, परिन्दों में गरुड़, हथियारबन्दों में राम,...जलचरों में मगर, नदियों में गंगा,...विद्याओं में अध्यात्म विद्या,...अक्षरों में अकार (अलिफ़),...सब तरफ़ उसके मुंह हैं...वही सब को ख़त्म करने वाली मौत है, वही सब को पैदा करने वाला है, वही कीर्ति है...वही

मेधा है···छन्दों में गायत्री छन्द,···महीनों में अगहन, मौसमों में बसन्त, छलियों में जुआ, तेजस्वियों का तेज, जय, व्यवसाय, सत्व, यादवों में वासुदेव, पांडवों में अर्जुन, मुनियों में व्यास, कवियों में उशना (शुक्राचार्य) कवि, दमन करने वालों में दण्ड,···जीत चाहने वालों में न्याय, छिपी हुई चीज़ों में मौन···ज्ञानियों का ज्ञान, सब प्राणियों का बीज वही है, चराचर में कोई पदार्थ नहीं है जो बिना उसके हो, उसकी लीला का कोई ओर छोर नहीं है···

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसम्भवम् ।४१ ।

अर्थात् दुनिया में जो चीज़ भी ऐश्वर्य वाली, शोभा वाली या तेज वाली है, वह उसी के तेज के एक अंश से पैदा हुई है। (१०-१९ से ४१)।

इस निगाह से सब देशों, सब क़ौमों और सब धर्मों के महापुरुष (अवतार, पैग़म्बर तीर्थंकर वग़ैरह) और सब के इष्ट देव उसी परमेश्वर के अंश हैं।

वह अपने केवल एक अंश से इस सारे जगत को संभाले हुए है। (१०-४२)।

इस सब का मतलब यह है कि परमेश्वर अचिंत्य (ख़याल की पहुँच से परे) और अव्यक्त (रंग रूप से परे) लेकिन सब में रमा हुआ है, इसलिये सबके साथ अपनी एकता या अपने-पन को महसूस करके ही आदमी सब के अन्दर परमेश्वर के दर्शन कर सकता है।

इसी को ग्यारहवें अध्याय के शुरू में 'अध्यात्म' यानी रूहानियत कहा गया है।

ग्यारहवां अध्याय

इसके बाद अर्जुन ने "योगेश्वर" श्रीकृष्ण की कृपा से अपनी 'दिव्य चक्षु' (ज्ञान की आँखों) से परमेश्वर के "विश्वरूप" को देखा। उसने देखा कि—

परमेश्वर के सैकड़ों और हज़ारों तरह तरह के रूप हैं। सारा चराचर जगत उसी के अन्दर है। उसके सब तरफ़ मुंह हैं। हज़ारों सूरज की एक साथ रोशनी से बढ़कर उसकी ज्योति है। अर्जुन ने देखा कि आर्य जाति के सब ऋषि और अनार्य जाति के सब दिव्य लोग (उरगांश्च दिव्यान्) सब एक समान उसी परमेश्वर के अन्दर हैं। सब देवता और सब प्राणी उसी के अन्दर हैं। उसके अनेक भुजाएं, अनेक पेट, अनेक मुंह, अनेक आंखें और अनेक रूप हैं। सब रूप उसी के रूप हैं। सब तरफ़ वही वह है। उसका न शुरू है, न बीच, न आख़ीर। वह विश्वरूप है और विश्व का मालिक। उसका प्रकाश (नूर) चारों तरफ़ फैला हुआ है। वह अनन्त बाहु है। सूरज और चांद उसकी आँखें हैं। उसकी शक्ति अनन्त है। वह आसमान और ज़मीन को और दसों दिशाओं को पार किए हुए है। सब डरने वाले उसी से डरते हैं। सब स्तुति करने वाले उसी की स्तुति करते हैं। सब धर्मों, जातियों और देशों के लोग उसी की तरफ़ टकटकी लगाये हैं। वही नित्य है, वही धर्म का सनातन रक्षक

है। जिस तरह सारी नदियां समुद्र में जा गिरती हैं, उसी तरह सारी दुनिया और सब प्राणी आख़ीर में परमेश्वर में ही जा मिलते हैं। वह देश और काल से परे है। वही काल है। बाक़ी सब निमित्त मात्र यानी केवल एक बहाना हैं। वही अक्षर है। वही व्यक्त है। वही अव्यक्त है। वही दोनों से परे है। वही आदि देव है। वही जानने वाला और वही जानने की चीज़ है। वह अपने अनन्त रूप से सारे विश्व में रमा हुआ है। वही वायु है। वही यम है। वही अग्नि है। वही वरुण है। वही चन्द्रमा है। वही प्रजापति है। वही सब का परदादा है। उसे हज़ार बार नमस्कार! फिर फिर नमस्कार! सामने से और पीछे से सब तरफ़ से नमस्कार! वह अनन्त-वीर्य है। वह अनन्त पराक्रम वाला है। वह सब को अपने अन्दर समाकर फिर भी सब का सब बाक़ी है। सब का पिता, सब का पूज्य और सब से बड़ा है। उसकी कोई दूसरी मिसाल या उस जैसा कोई नहीं। वह अकेला आप है। वह मनुष्य रूप में सब का सखा है। वह सबका प्यारा है। (११-८ से ४३ सार)।

वह न वेदों के ज़रिये जाना जा सकता है, न यज्ञों से, न पूजा पाठ से, न दान से, न तरह तरह के कर्मकाण्डों से, न उग्र तपों से। आदमी उसे केवल "आत्मयोग" के ज़रिये यानी अपने नफ़्स को क़ाबू में करके और "अनन्य" भक्ति के ज़रिये ही, उस भक्ति के, जिसमें किसी दूसरे को उसका शरीक न किया गया हो, उसे जान सकता है, ठीक ठीक देख सकता है और उसी में प्रवेश कर सकता है, उसी में समा सकता है (११-४८,५३,५४)।

उसका सब से सौम्य रूप, सब से प्यारा रूप, जिससे आदमी को तसल्ली और शान्ति मिल सकती है "मनुष्य रूप" है (११-५१)* । वह सब रूपों में है।

यह सभी उसका "विश्वरूप" है। इसलिये आदमी को चाहिये कि उसी के लिये सब काम करे, उसी को अपना मक़सद समझे, एक उसी की भक्ति करे, दुनिया में निजी स्वार्थ अर्थात् ख़ुदी और मोह से अलग रहे, और "सब प्राणियों के साथ दोस्ती और मेल का भाव रखे (निर्वैरः सर्वभूतेषु)"। बस ऐसा आदमी ही ईश्वर को पा सकता है। (११-५५)।

बारहवां अध्याय

बारहवें अध्याय में, जिसका नाम भक्ति योग है, अर्जुन ने फिर यह सवाल उठाया कि परमेश्वर की सगुण रूप में, उसके सिफ़तों का ख़याल करते हुये, पूजा करने वाले और निर्गुण अचिन्त्य रूप में, ख़ालिस लामकान का ध्यान करने वाले इन दोनों में से कौन ज्यादह ठीक रास्ते पर है? गीता का जवाब है कि—

जो लोग पूरी श्रद्धा के साथ भगवान से सगुण रूप की उपासना करते हैं वे भगवान की नज़र में ज़्यादह ठीक हैं। लेकिन जो लोग भगवान के उस परब्रह्म रूप की उपासना करते हैं जो "अक्षर" यानी नित्य एकरस है, "अनिर्देश्य" है, जिसको बाबत कुछ कहा ही

---

* *शक्ले इन्सॉं में ख़ुदा था मुझे मालूम न था।*

नहीं जा सकता, जो अव्यक्त है, जो सब जगह रमा हुआ और अचिन्त्य अर्थात् ख़याल से परे है, जो कूटस्थ, अचल और ध्रुव है, वे भी उसी परमेश्वर को पहुंचते हैं, बशर्ते कि उन्होंने अपनी सब इन्द्रियों पर क़ाबू पा लिया हो, वे सब को एक निगाह से देखते हों और सदा "सर्वभूतहिते रताः" यानी सब प्राणियों की भलाई के कामों में लगे रहते हों। (१२-२,३,४)। लेकिन अव्यक्त की उपासना का रास्ता ज़्यादह मुश्किल है (१२-५)। इसलिये सब कामों का फल ईश्वर पर छोड़ कर और उसी का ध्यान करते हुए, अपने कर्तव्य पालन में लगे रहना चाहिये (१२-६)। जो किसी से वैर नहीं करता, जो सब का दोस्त है, जो सब पर दया करता है, जिसमें 'मेरे तेरे' का भाव नहीं, जिसमें अहंकार यानी ख़ुदी नहीं, जो सुख दुःख में एक समान और सब को माफ़ कर देने वाला है, जो सदा सन्तुष्ट है, जिसने अपने को जीत लिया है, जिसका इरादा पक्का है और जिसने अपने मन और बुद्धि को ईश्वर में लगा रखा है, ऐसा ईश्वर का भक्त ईश्वर को प्यारा है (१२-१३, १४)। जिससे दुनिया के किसी आदमी को किसी तरह का डर नहीं और न जिसे किसी से किसी तरह का डर है, जो ख़ुशी, रञ्ज और डर से ऊपर उठ गया है, वह ईश्वर को प्यारा है (१२-१५)। जो हर हाल में संतुष्ट, पाक, बिना आलस्य, पक्षपात से ऊपर और दुःख से परे है, जो नतीजे की परवाह न कर सदा अपने फ़र्ज़ के पूरा करने में लगा रहता है, वही भक्त ईश्वर को प्यारा है (१२-१६)। जो न आनन्द से फूलता है और न दुखों से दुःखी होता है जिसे न किसी चीज़ के जाने का रञ्ज और न पाने की ख़ुशी, जिसने

अपने लिये शुभ और अशुभ दोनों तरह के फलों का त्याग कर दिया है, वह भक्त ईश्वर को प्यारा है (१२-१७)। जो आदमी दोस्त और दुश्मन दोनों को एक निगाह से देखता है, जो मान और अपमान दोनों में एक समान रहता है, जो सरदी, गरमी, सुख, दुःख में एक समान और मोह रहित है, जिसके लिये बदनामी और नेकनामी बराबर है, जो फ़ज़ूल नहीं बोलता, जो हर हाल में सन्तुष्ट (राज़ी) रहता है, जो किसी घर को अपना घर नहीं मानता, जिसका दिल अडिग है, वह भक्त ईश्वर का प्यारा है (१२-१९)। जो लोग इस "धर्म्मामृत" का श्रद्धा के साथ पालन करते हैं और उसी पर चलते हैं, जो ईश्वर में लौ लगाए हैं, वे भक्त ईश्वर को बहुत ही प्यारे हैं। (१२-२०)।

तेरहवां अध्याय

तेरहवां अध्याय गीता का सब से ज्यादह दार्शनिक (फलसफ़ियाना) अध्याय है। वेदान्त शास्त्र (ब्रह्मसूत्रों) का गीता में सिर्फ़ एक बार नाम आया है और वह इसी अध्याय में। आत्मा के अलावा जानने की जो कुछ चीज़ें हैं, ज्ञान का जो कुछ मैदान है, उसे "क्षेत्र" और आत्मा को जो इस सब को जानता है "क्षेत्रज्ञ" कहा गया है। सच्चे ज्ञान को पाने का क्या रास्ता है, असली जानने की चीज क्या है और सच्चा ज्ञान या सच्ची दृष्टि किसे कहते हैं, यह सब इस अध्याय में बताया गया है।

मोटे तौर पर शरीर क्षेत्र है और आत्मा क्षेत्रज्ञ। लेकिन शरीर में सिर्फ़ यह जड़ शरीर ही नहीं है। पांच महाभूत (मिट्टी, पानी, हवा, आग और आकाश), अहंकार, बुद्धि, प्रकृति, पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां, मन और पांचों ज्ञानेन्द्रियों के अलग अलग विषय, ऐसे ही इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख, संघात, चेतना, धीरज,—यह सब "क्षेत्र" हैं। इन सब में विकार होते रहते हैं। और जो शुद्ध पुरुष इन सब में रमा हुआ है वह "क्षेत्रज्ञ" है। वही इस देह का मालिक, वही परमात्मा और परम पुरुष है। वह नित्य और निर्विकार है। (१३.१,२,५,६,२२)। इन दोनों क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ के मेल से ही सारी दुनिया बनी है (१३-२६)।

सच्चे ज्ञान के हासिल करने का यह रास्ता बताया गया है—

घमंड न करना; दंभ यानी छल न करना; अहिंसा; सहनशीलता (बरदाश्त) ईमानदारी; गुरु के पास बैठना; पाक साफ़ रहना; स्थिरता, मन को अडोल रखना; अपने ऊपर क़ाबू; इन्द्रिय विषयों से वैराग्य; अहङ्कार या ख़ुदी का न होना; जन्म, मौत, बुढ़ापा, बीमारी और दुःख, इनकी बुराई को समझना; किसी से मोह न होना; स्त्री, बच्चों, घर वग़ैरह में अपने को भूल न जाना; चाहे कोई बात अपने मनचहती हो या इसके ख़िलाफ़ हो, हर हालत में अपने दिल को एक सा रखना; ईश्वर में भक्ति; कभी कभी एकान्त में रहने की आदत; भीड़ से बचने की ख़्वाहिश; अध्यात्म (रूहानियत) की तरफ़ लगन; सचाई को जानने की इच्छा;—यह सब सच्चे ज्ञान को

पाने का रास्ता है। यही सच्चा ज्ञान है। इससे उल्टा सब अज्ञान है (१३.७-११)। इस सब से बढ़कर जानने की चीज़ क्या है? वह परब्रह्म जिसका कोई शुरू नहीं, जिसके बारे में न 'है' कहा जा सकता है, न 'नहीं'। जिसके सब तरफ़ हाथ, पैर, कान, सिर और मुंह हैं, जो सब में रमा हुआ और सब से परे है। जिसमें सब इन्द्रियों के गुण होने का भास होता है, पर जिसके कोई इन्द्रिय नहीं है। जिसे किसी से मोह नहीं, पर जो सब का सहारा है। जो निर्गुण (बेसिफ़ात) है, लेकिन सब गुणों का भोगने वाला है। जो सब प्राणियों के अन्दर और सब के बाहर है। जो चर भी है और अचर भी। जो इतना सूक्ष्म है कि जाना नहीं जा सकता। जो दूर से दूर और पास से पास है। जो सब प्राणियों में एक अभेद रूप से भी मौजूद है और अलग अलग भी है। सब का पालने वाला है। सब का नाश करने वाला और फ़िर उनके रूप में ख़ुद पैदा होने वाला है। अँधेरे से दूर, सब ज्योतियों की ज्योति (नूर का भी नूर)। सब के दिलों में रहने वाला, वही ज्ञान है और वही ज्ञेय यानी जानने की चीज़ (१३.१२ से १७)। ध्यान, ज्ञान और कर्म तीनों उसे जानने के रास्ते हैं (१३.२४)। उस आदमी की निगाह सच्ची निगाह है जो सब प्राणियों में एक समान विराजमान एक परमेश्वर को देखता है। जो परमेश्वर को सब जगह रमा हुआ देखकर किसी दूसरे की हिंसा करके अपने हाथ से अपनी हिंसा नहीं करता वही परमगति को पाता है। जब आदमी अलग अलग प्राणियों के अन्दर एक ही परमेश्वर को देखने लगता है, तब वह उस पूर्ण ब्रह्म को, उस परमात्मा को पहचानता

है, जो नित्य, निर्गुण और निर्विकार है। जिस तरह आकाश सब जगह रहते हुये भी वेदाग़ रहता है उसी तरह आत्मा सब शरीरों में रहते हुये भी वेदाग़ रहती है। जिस तरह एक सूरज सारी दुनिया को रोशनी देता है, उसी तरह एक आत्मा इस सारे क्षेत्र को रोशन करती है (१३.२७ से ३३)।

चौदहवां अध्याय

इस अध्याय में सत्व, रजस, और तमस इन तीनों गुणों को बयान किया गया है—

सत्व, रजस और तमस यह तीनों गुण प्रकृति (माद्दे) से पैदा होते हैं। यह तीनों ही जीव को शरीर में बांध कर रखते हैं (गुण शब्द का एक अर्थ रस्सी भी है)। इनमें सत्व निर्मल और प्रकाश-रूप है। वह जीव को सुख और ज्ञान के साथ बांधता है। रज मोह रूप है। वह लोभ और तृष्णा से पैदा होता है और जीव को इच्छा और कर्म में बांधे रखता है। तम अज्ञान और अन्धकार से पैदा होता है। वह इसे ग़ाफ़िली, सुस्ती, आलस्य और नींद में फंसाए रखता है। इन तीनों में बराबर खींचातानी होती रहती है। मरते वक़्त जिस गुण का आदमी में ज़ोर होता है वैसा ही उसे आगे को फल मिलता है। आत्मा या परमात्मा इन तीनों गुणों से ऊपर है। इसलिये जो आदमी तीनों गुणों से ऊपर, 'गुणातीत' हो जाता है वही इस दुनिया से निजात पाता है (१४.५ से २०)।

तीनों गुणों से ऊपर यानी गुणातीत उसे समझना चाहिये जो

न प्रकाश की ख्वाहिश करता है न कामों में फंसे रहने की, और न सुस्ती या आलस्य में फंसता है, और न इन तीनों हालतों में से किसी से भी घबराता है; उदासीन की तरह जो सुख दुःख को एकसा मानता है और इन हालतों के बदलने से अपने भीतर बिल्कुल डांवाडोल नहीं होता; सुख, दुःख, मिट्टी, पत्थर, सोना, चाँदी, प्रिय, अप्रिय, नेकनामी और बदनामी सब में जो एक समान धीर और अडोल रहता है; जो मान अपमान, दोस्त और दुश्मन इन सब में एक समान रहता है; जो सब ख्वाहिशों से ऊपर है, वही 'गुणातीत' है। जो परमेश्वर से सच्ची लौ लगाता है वह इन गुणों से ऊपर उठकर परमेश्वर के "साधर्म्य" को पाता है, यानी खुद उस जैसा होकर उसी में लीन, फ़ना हो जाता है (ब्रह्म भूयाय कल्पते)। क्योंकि परमेश्वर ही आत्मा का, अनन्त अमृत का और अखंड सुख का भण्डार है (१४.२,२२ से २७)।

पन्द्रहवां अध्याय

इस अध्याय में इस दुनिया के अस्तित्व की तुलना एक ऐसे बड़े अश्वत्थ (पीपल) के दरख़्त से की गई है—

जिसकी जड़ें ऊपर हैं और शाख़ें नीचे। यह दरख़्त ही सब से बड़ा रहस्य (राज़) है। ('अश्वत्थ' का अर्थ 'कल न रहने वाला' यानी फ़ानी भी है।) वेद (ज्ञान) उसकी पत्तियां हैं। सत्व, रज़, तम उसकी नसें हैं। विषय वासनाएं उसकी डालियां हैं। उसकी कुछ जड़ें नीचे की तरफ़ भी निकली हुई हैं। ये वे ख्वाहिशें हैं जो आदमी

को हवा और हविस में बाँधे रखती हैं। इस भयंकर दरख़्त को सिर्फ़ एक हथियार ही काट सकता है और वही इसके रहस्य को हल कर सकता है। वह हथियार 'असंग शस्त्र' है, यानी किसी चीज़ के साथ 'संग' या मोह न रखना। उसी से इसे काटकर आदमी शान्ति और परमपद पा सकता है और परम पुरुष में मिल सकता है। (१५-१ से ४)। वे ज्ञानी ही, जिनमें न अहंकार (.ख़ुदी) है और न मोह; जिनमें दुनिया से आसक्ति नहीं रही, जो अध्यात्म (रूहानियत) में लगे रहते हैं, जिनकी ख़्वाहिशें दूर हो चुकीं, जो दुई से ऊपर उठ गये, जिन पर सुख दुःख असर नहीं करता, वे ही उस परमपद को पाते हैं जहाँ न सूरज चमकता है, न चांद, न आग, और जहाँ से पहुँच कर फिर वापस नहीं आया जाता (१५-५,६)। जीव ईश्वर का ही "अंश" है। मन और इन्द्रियों के क़ाबू में आकर वह संसार के चक्कर में पड़ा हुआ है। इच्छा ने उसे यहां बांध रखा है (१५-७)।

इस सारे रहस्य की असलियत वही ईश्वर है। सूरज में, चांद में और आग में सब तेज उसी का तेज है। वही धरती के अन्दर से सब प्राणियों को सम्हाले हुए है। वह चांद के ज़रिये जड़ी बूटियों में रस पहुँचाता है। जानदारों में वह जठराग्नि (हरारते ग़रीज़ी) है। वही अन्न पचाता है। वही सबके दिलों के अन्दर बैठा हुआ है (सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो)। उसी से इल्म, याददाश्त, वग़ैरह पैदा होती है। योगी उसे अपने अन्दर बस कर देखते हैं। वही पुरुषोत्तम है। वही सर्वज्ञ यानी सब कुछ जानने वाला है, और जो उसे जान जाय वह भी सर्वज्ञ है। (१५,११ से १५,१८,१९)।

सोलहवां अध्याय

इस अध्याय में कहा गया है कि—

इस दुनिया में दो तरह की तबियतों के आदमी होते हैं। एक दैवी सम्पद वाले (अल्लाह वाले) और दूसरे आसुरी सम्पद वाले (गुमराह)। दैवी सम्पद वह है जो आदमी को आज़ादी या मुक्ति की तरफ़ ले जाती है, और आसुरी सम्पद उसे बन्धनों में जकड़े रखती है (१६.५)।

दैवी सम्पद में यह बातें शामिल हैं—(१) निडर होना, (२) दिल की सफ़ाई, (३) ज्ञान पाने की कोशिश, (४) दान देने की आदत, (५) इन्द्रियों पर क़ाबू, (६) दूसरों की भलाई करना, (७) अच्छी चीज़ें पढ़ना, (८) तप, (९) छल कपट न करना, (१०) अहिंसा, (११) सचाई, (१२) ग़ुस्सा न करना, (१३) त्याग, (१४) शान्ति, (१५) किसी की चुग़ली न करना, (१६) सब पर दया करना, (१७) लोभ न करना, (१८) दीनता, (१९) शराफ़त, (२०) गम्भीरता, (२१) तेज, (२२) क्षमा, (२३) धीरज, (२४) पवित्रता, (२५) किसी से दुश्मनी न करना और (२६) घमंड न करना (१६.१ से ३)।

आसुरी सम्पद वाले के स्वभाव में इस तरह की बातें होती हैं—(१) ढोंग, (२) ग़ुरूर, (३) अपने को बड़ा मानना, (४) ग़ुस्सा, (५) दिल की सख़्ती, और (६) अज्ञान (जहालत) (१६-४)।

इसके बाद १३ श्लोकों में आसुरी सम्पद वाले के रहन सहन और ढंग को बयान किया गया है। आजकल के कुछ लोगों ख़ासकर पच्छिमी क़ौमों के नेताओं की और पच्छिमी सभ्यता के रंग में रंगे हुए लोगों की यह इतनी अच्छी तसवीर है कि इन तेरह श्लोकों का ठीक तरजुमा नीचे दिया जाता है—

ये लोग नहीं जानते कि किस तरह के कामों में आदमी को लगना चाहिये और किस तरह के कामों में नहीं। उनमें न पवित्रता होती है, न सदाचार और न सचाई। वे कहते हैं कि इस दुनिया का कोई ईश्वर नहीं, न इसमें कहीं सचाई है और न इसका कोई आधार है। जड़ परमाणुओं यानी ज़र्रों के मिलने से ही यह दुनिया पैदा हुई है। चैतन्य या आत्मा से इसका कोई सम्बन्ध नहीं। मर्द और औरत के बीच की कामवासना से ही यह सारा संसार पैदा हुआ है। और कोई इसका पैदा करने वाला नहीं है। दुनिया का बुरा करने वाले ये लोग जिनकी आत्माएं नष्ट हो गई हैं, जिनकी बुद्धि बहुत छोटी है, और जिनके काम बहुत उग्र होते हैं, दुनिया के नाश के लिये ही इन ख़यालों को लेकर पैदा होते हैं। ख़ुदी (अहंकार), ढोंग (दम्भ) और ग़रूर (मद) से भरे हुए ये लोग इस तरह की ख़्वाहिशों के पीछे लगे रहते हैं जो कभी पूरी नहीं हो सकतीं। मोह में फंसे हुए, नापाक इरादे करके, और ग़लत ज़िद्दों में पड़कर वे अपनी कोशिशों में लग जाते हैं। वे इस तरह की लम्बी चिन्ताओं में पड़ जाते हैं जो मौत तक उन्हें घेरे रहती हैं। उन्हें इस बात का यक़ीन हो जाता है कि कामोपभोग यानी ऐशपरस्ती से बढ़कर और कोई

चीज़ दुनिया में नहीं है। सैकड़ों आशाओं के जाल में फंसे हुए, नफ़सानियत और ग़ुस्से में लीन, वे अपने ऐश के लिए अन्याय से भी धन इकट्ठा करने में लग जाते हैं। वे यही सोचा करते हैं कि आज मैंने अपना यह मनोरथ पूरा कर लिया, कल वह पूरा कर लूंगा, यह धन मेरा हो चुका, कल वह भी मेरा हो जायगा, उस दुशमन को मैंने मार डाला, और दुशमनों को भी मैं मार डालूंगा, मैं इस दुनिया का मालिक हूँ, मैं भोगने वाला हूँ, मैं कामयाब हूँ, मैं ताक़तवर हूँ, मैं सुखी हूँ, मैं धनी हूँ, मैं ऊंची नसल का हूँ, मेरे बराबर और दूसरा कौन है, मैं दुनिया का भला करूंगा, मैं जिसे चाहूंगा दूंगा, मैं आनन्द मनाऊंगा—अज्ञान से अंधे हुए वे इसी तरह की बातें सोचा करते हैं। उनका मन तरह तरह की ख़्वाहिशों में भटकता रहता है, वे मोह जाल से घिरे रहते हैं और अपनी ऐशपरस्ती में लगे हुए आख़िर को गन्दे नरक में पड़ते हैं। अपने को वे बहुत बड़ा समझते हैं। धन और बड़प्पन के ग़रूर में चूर; अपनी ऐंठ में, वे दिखावे और ढोंग के लिए झूठे कर्मकाण्ड, यज्ञ भी करते हैं। अहंकार, घमण्ड, बल, काम और क्रोध के कारण दूसरों के साथ वैर रखते हुए वे सब के शरीरों में एक समान रहने वाले परमेश्वर के साथ वैर करते हैं। ये ज़ालिम दुनिया के लोगों में अधम होते हैं (१६-७ से १९)। उनका अन्त बहुत ख़राब होता है। वे सचाई या हक़ से दूर रहकर नीचे ही नीचे गिरते जाते हैं (१६-२०)।

त्रिविधं नरकस्येदं द्वारं नाशनमात्मनः।
कामः क्रोधस्तथा लोभस्तस्मादेतत्त्रयं त्यजेत्। (२१)

यानी आत्मा के नाश करने वाले नरक के ये तीन दरवाज़े हैं—काम, क्रोध और लोभ। इसलिये इन तीनों को छोड़ देना चाहिये। हे अर्जुन! जो आदमी अन्धकार के इन तीनों दरवाज़ों से बच जाता है वही अपना भला करता है और वही आख़ीर में परागति यानी मोक्ष पाता है (१६-२२)। इसलिये आदमी को चाहिये कि नीति शास्त्र यानी सदाचार शास्त्र को ही अपना मार्ग दर्शक बनावे, उसी के अनुसार चले, ख़ुद अपनी ख़्वाहिशों के पीछे न पड़े (१६-२१-२४)।

सतरहवां अध्याय

इस अध्याय में अर्जुन ने फिर पूछा—

जो लोग आपके इन सदाचारों के असूलों का ख़याल न करते हुए ख़ुद अपनी श्रद्धा या अपने यक़ीन के मुताबिक़ दुनिया में अपना फ़र्ज़ पूरा करते हैं और उसके लिए तकलीफ़ें उठाते हैं और त्याग करते हैं, उन्हें आप कैसा समझते हैं? (१७-१)।

श्रीकृष्ण ने जवाब दिया—

आदमी की श्रद्धा (यक़ीन) उसके स्वभाव के मुताबिक़ तीन तरह की होती है—सात्विकी, राजसी और तामसी (१७-२)। जैसी जिसकी तबियत वैसी ही उसकी श्रद्धा होती है। आदमी श्रद्धामय है। जिसकी जैसी श्रद्धा है वैसा ही वह आदमी है (१७-३)। जो लोग दम्भ (ढोंग) और अहंकार (ख़ुदी) के साथ, अपनी ख़्वाहिशों और मोह के ज़ोर में, बिना समझे घोर तप भी करते हैं, तकलीफ़ें

उठाते हैं और अपने शरीर को कष्ट पहुंचाते हैं, उनके ये तप और कष्ट भी शैतानी (आसुरी) हैं। सब शरीरों के अन्दर रहने वाला परमेश्वर उनके इन तपों से ख़ुश नहीं होता (१७-५,६)। आदमी का खाना, पीना, उसका त्याग, उसका तप और दान सब तीन तीन तरह के हैं—सात्विक, राजस और तामस (१७-७)। जो काम सिर्फ़ फ़र्ज़ समझ कर किए जाते हैं, जिनसे फल की इच्छा बिल्कुल न हो, जो पक्षपात से न किए गए हों, जो सोच समझ कर पूरे दिल और श्रद्धा से किए जावें, जिनमें कामयाबी या नाकामयाबी से करने वाले के दिल पर कोई असर न हो, और जिनके बदले में किसी से अपने लिये उपकार की इच्छा न हो, वे ही काम सात्विक हैं (१७-११,१७,२०;१८-२३,२६) जो काम फल की इच्छा से, लोभ से, दम्भ से या अहंकार से या अपने नाम के लिए, या सत्कार, मान, पूजा पाने के लिए, या उपकार के बदले में अपने लिए उपकार की आशा से, मेहनत के साथ किए जाते हैं, वे राजस हैं (१७-१२,१८,२१; १८-२४,२७)। और जो काम आलस्य से, बिना श्रद्धा के, बिना नतीजा सोचे, बेतरीक़े, दूसरे के फ़ायदे नुक़सान को न देखते हुए, या मूर्खता की हठ से, दूसरे को बरबाद करने की ग़रज़ से, या उचित अनुचित; देशकाल या पात्र अपात्र का विचार न करते हुए; हिंसा से या दूसरे की मान मर्यादा का ख़याल न करके किया जाय वह तामस है (१७.१३,१९,२२;१८-२५,२८)। अपने से बड़ों की इज़्ज़त, शरीर की सफ़ाई, सादगी; ब्रह्मचर्य और अहिंसा ये पाँच शरीर के तप हैं। अपनी बात से किसी का दिल न दुखाना, सच

बोलना, जो दूसरे के लिए प्यारी और फ़ायदेमन्द हो वह बात कहना, और अच्छी चीज़ें पढ़ने की आदत, ये पाँच ज़बान के तप हैं। ख़ुश दिली, शान्ति, मौन, इन्द्रियों को क़ाबू में रखना और दिल की सफ़ाई ये पाँच मन के तप हैं (१७.१४ से १६) । हे अर्जुन! जो काम बिना श्रद्धा के किया जावे वह न इस दुनिया में किसी काम का है, न दूसरी दुनिया में (१७-२८) ।

गीता के इस छोटे से अध्याय में आदमी के सब कामों और उसकी नीयत की बड़ी सुन्दर कसौटी बता दी गई है।

अठारहवां अध्याय

आख़िरी अध्याय में 'सन्यास' की रूढ़ि का खण्डन करते हुए कहा गया है—

अपने सब कामों के अन्दर से ख़ुदग़रज़ी निकाल देने को ही समझदार आदमी असली "सन्यास" कहते हैं, और सब कामों के फल का त्याग अर्थात् अच्छे बुरे नतीजे की परवाह न करना ही सच्चा "त्याग" है (१८.२) ।

गीता में जहां जहां 'फल के त्याग' या 'अच्छे बुरे नतीजे की परवाह न करने' का ज़िक्र है वहां मतलब सिर्फ़ यह है कि अपने 'फ़र्ज़' के पूरा करने में करने वाले को चाहे सुख हो चाहे दुःख, नेकनामी हो, चाहे बदनामी, उसे इसकी बिल्कुल परवाह नहीं करनी चाहिये, उसके दिल पर भी इसका कोई असर नहीं होना चाहिए। यह मतलब नहीं है कि कोई काम बिना नतीजा

सोचे किया जावे। जो काम "बिना नतीजा सोचे···उचित अनुचित···का विचार न करते हुए" किया जाय उसे पिछले ही अध्याय में "तामस" यानी सब से बुरा काम कहा गया है। 'फल त्याग' का मतलब केवल पूरी निस्वार्थता और 'सब के भले की इच्छा रखते हुए' (चिकीर्षुर्लोक संग्रहम् ३-२५) काम करना है। इसी को इस अध्याय में "सन्यास" या "त्याग" बताया गया है—

दूसरों की सेवा, दान और तप जैसे काम करने ही चाहिएं। इनसे आदमियों की आत्माएं पाक होती हैं। लेकिन इन्हें भी आसक्ति (मोह) को छोड़कर फल की परवाह न करते हुए महज़ 'फ़र्ज़' (कर्तव्य) समझकर करना चाहिये (१८-५,६)। यही असली "सात्विक" त्याग है (१८.९,११) मोह में आकर अपने फ़र्ज़ को छोड़ देना या शरीर की तकलीफ़ के डर से 'फ़र्ज़' से हट जाना दोनों बुरे हैं (१८.७,८)। ज्ञान भी तीन तरह का है। सब प्राणियों में एक ही अव्यय (लाज़वाल) और अव्यक्त (अलख़फ़ी) आत्मा को देखना, यह सात्विक ज्ञान है। सब में अलग अलग आत्माओं को देखना यह राजस ज्ञान है। वह तुच्छ ज्ञान जिससे आदमी बिना पूरे मतलब या असलियत को समझे एक ही काम में लिपटा रहता है और उसे ही सब कुछ समझ लेता है, तामस ज्ञान है (१८.२० से २२)।

ठीक इसी तरह सब धर्मों और सब जातियों को एक समझना सात्विक, सबको अलग अलग समझना राजस और

अपने ही धर्म या जाति को ठीक और दूसरों को ग़लत समझ बैठना तामस है।

सुख भी तीन तरह का होता है। जो सुख शुरू में ज़हर की तरह और आख़ीर में अमृत की तरह है, जिससे आत्मा और बुद्धि को शान्ति मिलती है वह सुख सात्विक है। विषयेन्द्रियों का सुख जो शुरू में अमृत की तरह और आख़ीर में ज़हर की तरह है राजस सुख है। जो सुख शुरू में और आख़ीर में आत्मा को सिर्फ़ मोह, नींद, आलस्य और सुस्ती में डाले रखता है वह सुख तामस है (१८-३७,३८,३९)।

इसी तरह कर्त्ता, कर्म, बुद्धि और धीरज सब तीन तीन तरह के हैं।

सब धर्मों की एकता, सदाचार और सब में एक ही आत्मा को देखने पर ज़ोर देते हुए गीता अलग अलग आदमियों के लिए अलग अलग 'धर्म' भी बताती है। अलग अलग आद-मियों में, गीता सिर्फ़ एक ही भेद मानती है, और वह अलग अलग "स्वभाव" का भेद है। जन्म, जाति, देश, पन्थ, सम्प्रदाय वग़ैरह के कोई भी भेद गीता नहीं मानती—

जिस आदमी में अपने स्वभाव के मुताबिक़ (स्वभाव प्रभवैर्गुणैः) शम (शान्ति), दम (अपने ऊपर क़ाबू), तप, शौच (पाकीज़गी), क्षान्ति (माफ़ी), आर्जव (कपट न होना), ज्ञान विज्ञान और आस्तिक्य (ईश्वर में विश्वास) की तरफ़ झुकाव हो वह इन कामों में लगे। जिसमें बहादुरी, तेज, धीरज, होशियारी, लड़ाई में स्थिरता, दान और प्रभुता इनकी तरफ़ झुकाव हो वह इस तरह के कामों में

लगे। जो अपने "स्वभाव" से खेती, जानवर पालना और तिजारत इनके ज़्यादह क़ाबिल हो वह इन्हें करे। और जो "स्वभाव" से दूसरों की सेवा, सुश्रुषा करने के ज़्यादह क़ाबिल हो वह इसमें लगे। चारों में अलग अलग गीता ने "स्वभाव" पर ज़ोर दिया है। यही गीता की वर्ण व्यवस्था का मतलब है (१८.४१ से ४४)।

इसमें छोटे बड़े या जन्म जाति का कोई सवाल नहीं। क्योंकि—

हर आदमी इस तरह अपने अपने काम में लगा हुआ ही सिद्धि हासिल कर सकता है, बशर्ते कि वह अपने सब काम उसी परमेश्वर के लिए करे जिसने सब प्राणियों को पैदा किया है और जो इन सब के अन्दर रमा हुआ है (१८.४५,४६)। इस तरह हर आदमी का जो "स्वभाव नियत" कर्म है वही उसका "स्वधर्म" है। उसके ख़िलाफ़ उसे किसी दूसरे काम या धर्म की तरफ़ नहीं जाना चाहिए (१८.४७)।

यहां हर आदमी के स्वभाव, उसकी तबियत और उसकी क़ाबलियत के मुताबिक़ दुनिया की तरफ़ उसके फ़र्ज़ का ज़िक्र है, किसी तरह की रूढ़ियों या ऊंच नीच का नहीं।

आदमी परमेश्वर को कैसे जान सकता है, इसका ज़िक्र करते हुए फिर कहा गया है कि—

जिसकी बुद्धि हर तरह बेलोभ (निर्मोह) है, जिसने अपने को जीत लिया है, जिसमें कोई ख्वाहिश नहीं रह गई है, वह उस निर्मल बुद्धि के साथ और धीरज से अपने को संभाले हुए, विषयों से अलग

रह कर, न किसी से राग न, किसी से द्वेष, एकान्त में रहकर, थोड़ा भोजन करके, अपने मन, वचन और शरीर को क़ाबू में रखकर सच्चे वैराग्य के साथ, अपनी आत्मा में ध्यान लगाकर, ख़ुदी, ज़ोर, घमण्ड, नफ़सानियत, ग़ुस्सा, धन जमा करना और मेरा तेरा, इस सब को छोड़कर, शान्त होकर ख़ुद ब्रह्मरूप हो जाता है। फिर वह न किसी चीज़ की फ़िक्र करता है। न ख़्वाहिश, उसका दिल फूल की तरह खिल जाता है, वह सब प्राणियों को एक निगाह से देखता है (समः सर्वेषु भूतेषु) और परमेश्वर को ठीक ठीक जानकर उसी में लीन हो जाता है (विशते तदनन्तरम्)। (१८.४९ से ५५)।

सब काम 'ईश्वरार्पण' यानी ईश्वर के लिए करने पर बार बार ज़ोर दिया गया है (१८.५७)। परमेश्वर सब प्राणियों के दिल के अन्दर है, "ईश्वरः सर्व भूतानाम् हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति" (१८.६१) यह वाक्य गीता में बार बार आता है।

आख़ीर में जिस बात को गीता में सब से ज़्यादह रहस्य की बात "सर्वगुह्यतमं" कहा है वह यह है कि—

केवल एक परमेश्वर में मन को लगाओ, उसी की भक्ति करो, उसी के निमित्त सब काम करो, उसी के सामने सर को झुकाओ, और—"सर्व धर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज", सब "धर्मों" अर्थात् रूढ़ियों कर्मकाण्डों इत्यादि को छोड़कर सिर्फ़ एक परमेश्वर का सहारा लो। यही उसे पाने का तरीक़ा है। (१८-६४,६५,६६)।

गीता का सार

गीता के १८ अध्यायों में से हरेक का अलग अलग सार ऊपर दिया जा चुका है। इसमें जैसा हम शुरू में कह चुके हैं, हमने सिर्फ़ उस 'गीता-धर्म' को दिखाने की कोशिश की है, जो हमारी राय में हर जमाने और हर मुल्क के लोगों के लिए एक क़ीमती नसीहत है। तरजुमा करने में हमने जहां भरसक इस बात का ध्यान रखा है कि कहीं अर्थ का अनर्थ न हो वहाँ हमने हर जगह हर श्लोक हर शब्द और हर वाक्य को ज्यों का त्यों न देकर सार लेने की कोशिश की है।

गीता के उपदेशों में इधर से उधर तक हमें सिर्फ़ एक ही ऐसा उसूल नज़र आता है, जिससे किसी भी दूसरे मज़हब के मानने वाले को इन्कार हो सकता है। यह आवागमन या पुनर्जन्म का उसूल है। गीता में इसका कई बार और साफ़ साफ़ शब्दों में ज़िक्र आता है।

ऊपर के गीता-धर्म सार में इसका ज़िक्र जान बूझ कर शामिल नहीं किया गया, क्योंकि गीता ने कहीं पर भी इस सिद्धान्त में विश्वास करना धार्मिक ज़िन्दगी के लिए ज़रूरी

नहीं बताया। गीता में जीव और परमेश्वर, व्यक्त और अव्यक्त, प्रकृति और पुरुष इन सब दार्शनिक सवालों पर अपने ढङ्ग से बहस की गई है, और गीता का रुझान अद्वैतवाद (वहदतुल-वजूद) की तरफ़ है, लेकिन फिर भी गीता के मुताबिक़ सच्ची धार्मिक जिन्दगी बसर करने के लिए किसी इस तरह के असूल में यक़ीन करना ज़रूरी नहीं है। अब हम थोड़ी सी पुनरुक्ति का ख़याल न करके इन अट्ठारह अध्यायों की शिक्षा का निचोड़ फिर से थोड़े से शब्दों में दे देना चाहते हैं।

उस जमाने में बहुत से अलग अलग 'कुल' 'जातियां,' और 'वर्ण' इस देश में मौजूद थे जो सब जन्म से माने जाते थे। किसी पुराने समय से हर कुल और हर जाति के बहुत से अलग अलग रस्म रिवाज चले आते थे, जिन्हें "कुल धर्मों" और "जाति धर्मों" का नाम दिया जाता था (१०-४०,४३)। इन कुल धर्मों और जाति धर्मों का पालन इतना जरूरी माना जाता था कि अगर किसी कुल की इन रूढ़ियों का पालन बन्द हो जाय, तो समझा जाता था कि उस कुल के सारे स्त्री पुरुष, और उसके मरे हुए 'पितर' नरक को जाते हैं (१.४२); पितरों को "पिण्ड" वग़ैरह देने का रिवाज था (१.४२), जिसका अधिकार सिर्फ़ अपनी औलाद को ही होता था; क़ुदरती तौर पर लोग 'वर्ण संकर' से बहुत डरते थे और इसीलिए अपने कुल के किसी आदमी को मारना, चाहे वह "आततायी" भी क्यों न हो "बहुत बड़ा पाप" गिना जाता था (१.३६,४५)।

गीता इन सब रूढ़ियों, रिवाजों और विचारों का ख़याल करना तक समझदार आदमी के लिए "मोह", "दिल की कमज़ोरी" और "शान के ख़िलाफ़" बताती है। गीता इन सब को ग़लत मानती है। (२.३ से १०)।

तीनों वेदों ऋक्, यजुर् और साम में उन दिनों लोगों को बहुत विश्वास था। वेदों से उन्होंने यज्ञ, हवन, जप, तप वग़ैरह तरह तरह के कर्म काण्ड सीख रखे थे। लोग बहुत से देवी देवताओं की भी पूजा करते थे। देवताओं के नाम पर हवन में तरह तरह की आहुतियां दी जाती थीं। चढ़ावे चढ़ाये जाते थे। देवताओं से अपने इस दुनिया के सुखों के लिए और स्वर्ग के लिए दुआएं मांगी जाती थीं। "स्वर्ग" की कल्पना भी "भोग ऐश्वर्य" और "इन्द्रिय सुखों" की कल्पना थी। यज्ञों में "सोम" पीने का भी रिवाज था (२.४२,४३,४४,५३,)। इत्यादि।

गीता इस सारे कर्म काण्ड से ऊपर उठने का उपदेश देती है। गीता इस तरह के कर्मकाण्डों में पड़े हुए लोगों को नासमझ ("अविपश्चिता:") कहती है, बताती है कि इन कर्मकाण्डों से लोगों की बुद्धि नष्ट हो जाती है (तयापहृत चेतसाम्) (२.४२ से ४४), वैदिक कर्म काण्ड लोगों को तीनों गुणों में फंसाए रखता है, आदमी को इन तीनों से ऊपर हो जाना चाहिये। समझदार आदमी के लिये वेद वैसे ही फ़ुज़ूल हैं जैसे उस जगह कुआं जहां चारों तरफ़ पानी ही पानी हो (२.४५,४६)। वेदों

की इस तरह की तालीम से लोगों की मति मारी जाती है (श्रुति विप्रतिपन्ना बुद्धि २.५३)। और जिस आदमी के दिल में कर्म योग की यानी अपना ठीक ठीक कर्तव्य पालन करने की ख़्वाहिश भी पैदा हो जाती है उसे फिर वेदों की कोई ज़रूरत नहीं रह जाती (६.४४)। "वेदों से, यज्ञों से, जप तप से, और इन तमाम कर्म काण्डों से आदमी को ईश्वर के दर्शन नहीं मिल सकते" (११.४८,५३)।

गीता इस बात को भी विस्तार के साथ बताती है कि असली "यज्ञ", असली "तप" वग़ैरह किसे कहते हैं। चौथे अध्याय में अपने ज़माने के तरह तरह के यज्ञों को बयान करते हुए गीता कहती है कि आदमी को अपने सारे काम ही यज्ञ के तौर पर ("यज्ञाय" ४.२३) यानी निस्वार्थ भाव से, दुई से ऊपर उठकर, किसी से ईर्षा न रखते हुए, दूसरों के कल्याण के लिए और "ईश्वरार्पण" करने चाहियें (४.२२,२३,२४ इत्यादि)। यही यज्ञ है। सब से बढ़कर यज्ञ वह "ज्ञान यज्ञ" है, जिससे आदमी (येन भूतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि—४.३५) सब को अपनी आत्मा के अन्दर और सब को ईश्वर के अन्दर देखता है, इस ज्ञान से बढ़कर आत्मा को पाक करने वाली चीज़ इस दुनिया में दूसरी नहीं है (४.३८)। ऐसे ही गीता ब्रह्मचर्य और अहिंसा (किसी को तकलीफ़ न देने) को शरीर का तप; सच्ची, प्यारी और ऐसी बात कहने को जिससे किसी का दिल न दुखे और जिससे दूसरों का फ़ायदा

हो, ज़बान का तप; और अपनी इन्द्रियों पर क़ाबू, दिल को साफ़ और शान्त रखने को, मन का तप बताती है। (१७.१४ से १६)।

इस दुनिया के भोगों की ख्वाहिश और स्वर्ग वग़ैरह की लालसा को गीता दूसरे अध्याय में और जगह जगह साफ़ शब्दों में आत्मा की तरक्क़ी में रुकावट और छोड़ देने की चीज़ें बताती है।

रूढ़ियों और कर्मकाण्ड के बारे में गीता की एक और राय भी है। वह यह कि जो कम बुद्धि के लोग किसी तरह की रूढ़ियों का पालन करते हुए अपने विश्वास के सहारे नेक कामों में लगे रहते हैं, और उनके विश्वास को हिला देने से डर है कि वह नेकी से हट जावें तो समझदार आदमी को चाहिये कि उनकी बुद्धि को विचलित न करे (३.२६,२९)।

अलग अलग देवताओं की पूजा या एक ईश्वर की पूजा के अलग अलग तरीक़ों के बारे में गीता के विचार और भी ज्यादह उदार लेकिन साफ़ हैं। गीता ईश्वर को अनादि, अनन्त, सब में रमा हुआ और सब से अलग, सूक्ष्म, सब के दिलों में बैठा हुआ, "हृदिसर्वस्यविष्ठितम्", लेकिन "अचिन्त्य" यानी ख़याल की गति से परे और "अनिर्देश्य" मानती है। आदमी के लिए इस तरह के निर्गुण ईश्वर का ध्यान कर सकना बहुत कठिन है (१२.३,४,५,), इसलिए आदमी उसकी पूजा या उपासना सिर्फ़ उसके किसी एक गुण को मान कर या

किसी एक अंश, पहलू या भाव के रूप में ही कर सकता है। इस लिहाज़ से सब देवताओं की अलग अलग कल्पना ईश्वर ही की अंश-कल्पना है और दुनिया के सब इष्ट देव और सब देवता ईश्वर ही के रूप हैं। इसलिए किसी भी देवता की पूजा एक तरह ईश्वर ही की पूजा है।

इसी तरह पूजा के अलग अलग तरीक़ों के बारे में गीता का कहना है कि जो आदमी श्रद्धा और सचाई के साथ जिस तरीक़े से भी ईश्वर की पूजा करता है ईश्वर उसी तरीक़े से उसकी पूजा को स्वीकार करता है।

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।
(४.११)।

लेकिन फिर भी दूसरे अलग अलग देवताओं की पूजा को गीता ईश्वर की "अविधिपूर्वकम्" (९-२३), बेतरीक़े पूजा बताती है, देवताओं के उपासक देवताओं को पहुंचते हैं और ईश्वर के उपासक ईश्वर को (९.२५)। इसलिए गीता की बार बार और साफ़ शब्दों में आज्ञा है कि और सब देवताओं वग़ैरह को छोड़ कर सिर्फ़ एक ईश्वर ही की पूजा करनी चाहिये (९-२७,३४), और—

'सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज' (१८.६६) और सब धर्मों को छोड़कर सिर्फ़ एक ईश्वर का ही सहारा लेना चाहिये, वही आदमी को पापों से बचा सकता है।

वर्ण भेद को यानी ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य और शूद्र के भेद को गीता बजाय जन्म के, गुण, कर्मों और स्वभाव के मुताबिक़ मानती है और इनमें किसी को ऊंचा नीचा नहीं मानती। जिसे अपनी इन्द्रियों पर क़ाबू हो, जो शान्त चित्त हो और जिसकी तबियत ज्ञान और इल्म की तरफ़ जाती हो, उसे इसी तरह के कामों में लगना चाहिये और उसे ब्राह्मण कहना चाहिये; जिसमें बहादुरी, हुकूमत करने और इन्तज़ाम करने की ताक़त हो उसे क्षत्री कहना चाहिये; किसान और व्यापारी को वैश्य; और सिर्फ़ दूसरों की सेवा में लगे हुए लोगों को शूद्र (१८.४२ से ४४)। न इसका जन्म या ख़ानदान से कोई ख़ास ताल्लुक़ है और न किसी ख़ास सम्प्रदाय या मज़हब से।

दर्शन शास्त्र या फ़लसफ़े के ख़याल से उन दिनों दो सम्प्रदायों का सब से ज़्यादह ज़ोर था। एक कर्म सम्प्रदाय वाले, जो वैदिक कर्मकाण्ड और रूढ़ियों के पालन करने में मुक्ति मानते थे, और दूसरे सांख्य सम्प्रदाय वाले, जो दुनिया के कामों से अलग रहकर सन्यास और त्याग के ज़रिये मुक्ति मानते थे।·· गीता ने दोनों की रूढ़ियों का खण्डन करते हुए दोनों का बड़ा सुन्दर मेल या समन्वय किया है और दोनों को एक दिखाया है (५.४,५)। न आग को हाथ लगाने वाला आदमी या इसी तरह की सन्यास की दूसरी रूढ़ियों में फँसा हुआ आदमी सच्चा सन्यासी है, और न अपनी ख़्वाहिशों का ग़ुलाम, कर्मकाण्ड में फंसा हुआ आदमी कर्मयोगी है। जो अपने स्वार्थ या ख़ुद

ग़रज़ी को अलग रखकर, दुई से ऊपर उठकर, किसी से द्वेष न करता हुआ दुनियां की तरफ़ अपने सब फ़र्ज़ों को पूरा करता है, वही सच्चा सन्यासी है और वही योगी है। (५-३;६-१)।

गीता जिस चीज़ को असली धर्म और सब के लिये एक समान धर्म मानती है और जिस चीज़ पर बार बार और तरह तरह से ज़ोर देती है वह—अपने आप पर क़ाबू पाकर, "अपनी इन्द्रियों को जीत कर," (संनियम्येन्द्रिय ग्रामं १२.४), दुई से ऊपर उठकर, (निर्द्वन्दो), अपने "सुख दुख, नफ़े नुक़सान की बिल्कुल परवाह न करते हुए," (सुख दुःखे समेकृत्वा, २-३८) "सब दुनिया का भला चाहते हुये" (चिकीर्षुर्लोक संग्रहम् ३.२५), "किसी से दुशमनी न करते हुए" (निर्वैरः सर्वभूतेषु ११.५५), सब के भले के कामों में लगे हुए" (सर्वभूतहिते रताः ५-२५, १२.४), दूसरों की तरफ़ अपने "फ़र्ज़ों को फ़र्ज़ समझ कर" पूरा करना है। (१८-९)। नरक के तीन दरवाज़े हैं—काम, क्रोध और लोभ (१६-२१); मनुष्यमात्र के लिए यही गीता-धर्म का सार है। इसी को गीता ईश्वर की सच्ची भक्ति बताती है (१२.१३ से २०)। ईश्वर को सब से ज़्यादह प्यारा वह है जिससे दुनिया में कोई आदमी न डरता हो और न जिसे ख़ुद किसी से किसी तरह का डर हो (यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नो द्विजते च यः १२-१५)। इसके खिलाफ़ अपने स्वार्थ के लिए, घमण्ड या ख़ुदी के वश में आदमी अगर मेहनत भी करे, "तप" करे और तकलीफ़ें उठावे तो वे भी शैतानी हैं

और ईश्वर उनसे ख़ुश नहीं हो सकता (१६-५,६)। इस तरह अपनी ख़ुदी को मार कर दूसरों की तरफ़ अपने फ़र्ज़ों के पूरा करने में लगे हुए, सब की भलाई करते हुए ही आदमी सच्चे ज्ञान को पा सकता है। सच्चा ज्ञान यही है कि आदमी (आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन ६-३२), "सब को अपनी तरह," (सर्वभूतात्म ५-७), "अपने अन्दर सब को" (सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ६-२६), "सब को ईश्वर के अन्दर" और "सब के अन्दर एक ईश्वर को" (यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति ..."सर्वभूतस्थितं यो मां"... ६-३०-३१) देखें। केवल इस तरह, "आत्मसंयम", और "दूसरों की सेवा" के जरिये ही आदमी "अपनी आत्मा को शुद्ध" करते करते, आत्मा की असली तरक्क़ी के पथ पर क़दम बढ़ा सकता है, और फिर "अपने अन्दर" और "सब के अन्दर" उस परमात्मा का साक्षात करके जो "सब ज्योतियों की ज्योति है (ज्योतिषामपितज्ज्योतिः १३-१७), और सब के दिलों में बैठा है (सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टो १५-१५), मुक्ति हासिल कर सकता है। (३.१९;५.१६, १७,३०)।

यही गीता धर्म का निचोड़ है।

क़ुरान

"अल्लाह ही ने यह किताब (.कुरान) तुम्हारे (मुहम्मद के) घट में उतारी है। इसकी कुछ आयतें "मुहकमात" यानी पक्के और साफ़ साफ़ हुकुम हैं, वे ही इस किताब की जड़ बुनियाद हैं, बाक़ी आयतें "मुतशाबेहात" यानी मिसाल या उपमा के तौर पर हैं। जिन लोगों के दिलों में टेढ़ापन है वे .कुरान के उसी हिस्से पर चलते हैं जो मिसाल (उपमा) के तौर पर कहा गया है, उसके ज़रिये फ़ितना और झगड़ा खड़ा करना चाहते हैं, और उसका मनगढ़न्त मतलब लगाते हैं, लेकिन उसका मतलब सिवाय अल्लाह के और उनके कोई नहीं जानता जो पक्के ज्ञानी हैं, और कहते हैं कि हम इसे मानते हैं, यह सब हमारे रब्ब की देन है। दूर की सोचने वाले ही इस बात की परवाह करते हैं।" (.कुरान, ३-६)।

.कुरान

इसलाम के पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद की आत्मा दुनिया की बड़ी से बड़ी खोजी आत्माओं में से थी। बरसों की तपस्या, (रियाज़त) एकान्त (गोशानशीनी) और लम्बे लम्बे उपवासों (रोज़ों) के बाद, अरब की उस ज़माने की गिरी हुई और दर्दनाक हालत में, ईश्वर ने उन्हें अपने देश और तमाम दुनिया के भले का रास्ता दिखाया। अपने धर्म का प्रचार शुरू करने से पहले मुहम्मद साहब की उम्र ४० साल की हो चुकी थी। ६३ बरस की उमर में वे इस दुनिया से कूच कर गये। इन २३ बरस के अन्दर जब जब मुहम्मद साहब के सामने कोई ख़ास रूहानी मुश्किल आती थी और रास्ता न सूझता था, वे आमतौर पर रो रो कर अपने .खुदा से रोशनी की प्रार्थना करते थे। उनका बदन अक्सर थर थर काँपने लगता था, कभी कभी वे चादर लपेट कर लेट जाते थे, आँसुओं और पसीने से उनकी चादर तर हो जाती थी, कभी कभी कई कई दिन तक बिना दाने और पानी के वे इसी तरह पड़े रहते थे, आख़ीर में वे उठते थे। जो शब्द उस वक़्त उनके मुंह से निक-

लते थे उन्हें वे अपने ईश्वर का हुकुम बताते थे। २३ बरस के अन्दर की इस तरह वक़् वक़् पर और कुछ दूसरे ख़ास मौक़ों पर मुहम्मद साहब के मुंह से निकली हुई चीज़ों के मजमुये यानी संग्रह का नाम ही '.कुरान' है।

मुहम्मद साहब की बाक़ी सब नसीहतें, कहावतें और उनकी वक़् वक़् की और सब रिवायतें 'हदीस' कहलाती हैं और इलहामी यानी ईश्वरीय नहीं मानी जातीं।

इस तरह २३ बरस के अन्दर .कुरान के जो हिस्से अलग अलग वक़ों में उतरते या ज़ाहिर होते रहे लोग उन्हें, मुहम्मद साहब के हुकुम से, उसी वक़् अलग अलग ताड़ के पत्तों या चमड़े के टुकड़ों या लकड़ी या पत्थर की सिल्लियों पर लिख लेते थे। कोई कोई उन्हें पढ़ने के लिए ले जाते थे। बहुतसों को वे ज़बानी याद हो गए थे। आख़ीर में ये ताड़ पत्र, चमड़े के टुकड़े वग़ैरह लकड़ी के एक मामूली बक्स के अन्दर बिना किसी तरतीब के रख दिए जाते थे। मजमूआ बढ़ता चला गया। कुछ हिस्से मुहम्मद साहब ही के ज़माने में और उनके हुकुम से अलग अलग सूरों यानी अध्यायों में बँट गए।

.कुरान में इस बात का भी ज़िक्र है कि "अल्लाह जिस आयत को चाहता है मनसूख़ (रद्द) कर देता है या लोगों की याद से मिटा देता है और उसकी जगह वैसी ही दूसरी आयत या उससे बेहतर दूसरी आयत क़ायम कर देता है क्योंकि अल्लाह सब चीज़ों पर क़ादिर यानी समर्थ है।"

(२-१०६)। एक दूसरी जगह लिखा है कि "अल्लाह एक आयत को दूसरी आयत से बदल देता है और अल्लाह ही सब से अच्छा जानता है कि वह क्या नाजिल करता है (हुकुम उतारता है)" (१६-१०१)। इन आयतों के मुताबिक़ कहा जाता है कि "साठ आयतें मुहम्मद साहब की ज़िन्दगी में मनसूख़ कर दी गई थीं और कुछ और आयतें जिनका मौक़ा नहीं रहा था बाद के जमाने में मनसूख़ समझी जाने लगीं* ।"

'आयत' का .कुरान में क़रीब क़रीब वही मतलब है जो वेदों में 'ऋचा' का।

मुहम्मद साहब के बाद पहले ख़लीफ़ा हज़रत अबु बक्र ने उन सब टुकड़ों को निकाल कर जो उस वक़्त मौजूद थे और कुछ और हिस्से जो लोगों को ज़बानी याद थे, उनकी मदद से पहली बार १४४ सूरों में एक बाज़ाब्ता मजमूआ तय्यार कराया, और उसे मुहम्मद साहब की बेवा हिफ़सा के पास सम्हाल कर रखवा दिया।

लेकिन इन अलग अलग हिस्सों की कुछ नक़लें दूसरे लोगों के पास भी मौजूद थीं। जिन लोगों को कुछ हिस्से ज़बानी याद थे उन्होंने भी अपनी अपनी याद से वे हिस्से लिख रखे थे। नतीजा यह हुआ कि दस पन्द्रह बरस के अन्दर ही कई .कुरान मक्के, मदीने, और इराक़ में चल पड़े, जिनमें एक

---

* 'The Wisdom of the Quran', by Mahamud Muhtar Pasha, Introduction, p. 45.

दूसरे से कहीं कहीं काफ़ी फ़रक़ था। आख़ीर में मुहम्मद साहब के क़रीब २० बरस बाद, तीसरे ख़लीफ़ा हज़रत उसमान ने .कुरान की उस कापी को जिसे हज़रत अबु बक्र ने तरतीब दी थी मुस्तनद यानी प्रामाणिक एलान किया, उसकी नक़लें कराकर सब सूबों में भिजवादीं, और जितनी दूसरी कापियां या नुसख़े इधर उधर चल पड़े थे उन सब को मंगवा कर जलवा दिया, ताकि एक ही .कुरान पक्का और ठीक माना जावे। और फिर कभी उसमें कोई हेर फेर न की जा सके। .कुरान की ठीक वही तरतीब आज तक दुनिया में लोग मानते हैं।

इस पर भी आज साढ़े तेरह सौ बरस के बाद सात तरह के .कुरान मिलते हैं। इनमें फ़र्क़ सिर्फ़ इतना है कि किसी में जिसे एक आयत मान लिया गया है उसी को दूसरे में दो हिस्से करके दो आयतें माना गया है, इससे आयतों की कुल तादाद में फ़रक़ हो जाता है। इनमें से एक में .कुरान की कुल आयतों की तादाद ६,००० है, दो में ६,२१४ है, एक में ६,२१९ है, एक में ६,२३६ है, एक में ६,२२६ और एक में ६,२२५ है। लेकिन मज़मून सब में ठीक वही है और शब्दों की तादाद सब में बराबर बताई जाती है।

लेकिन जिस शक्ल में .कुरान इस ज़माने में हमारे सामने है उसमें एक बहुत बड़ी मुशकिल यह है कि उसके अलग अलग हिस्से उस तरतीब में नहीं हैं जिस तरतीब में वे नाज़िल हुए यानी उतरे। बाद के सूरे शुरू में और शुरू के सूरे बाद में हैं

और कभी कभी एक ही सूरत के अन्दर बाद की आयतें पहिले और पहिले की आयतें बाद में रख दी गई हैं। कौनसी आयत कब, किस मौक़े पर और किन हालतों में उतरी यानी कौन हुकुम कब दिया गया इसका पता भी आयतों से लगाना बहुत मुशकिल है। बहुत सी आयतों के बारे में तो इस बात में मुसलमान आलिमों की राय में भी फ़र्क़ है। ज्यादहतर आयतों के बारे में यह तै हो चुका है कि कौन सी कब और किस मौक़े पर उतरी। फिर भी क़ुरान की इस अजीब तरतीब की वजह से क़ुरान के मामूली पढ़ने वाले को बड़ी दिक्क़त पड़ती है। जो लोग अरबी भाषा जानते हैं और उसका आनन्द ले सकते हैं, या जो बग़ैर मतलब समझने की परवाह किए सिर्फ़ श्रद्धा के साथ क़ुरान पढ़ लेते हैं उनकी बात अलग है। लेकिन जो दूसरे लोग क़ुरान के मतलब को समझना चाहें, असल क़ुरान से या उसके उसी तरतीब में तर्जुमे से, तो उनके पल्ले ज्यादह नहीं पड़ सकता। अलग अलग मज़मूनों पर क़ुरान की अलग अलग चुनी हुई आयतों से उन्हें क़ुरान का मतलब समझने में ज्यादा आसानी होगी।

क़ुरान की ज़बान

अरबी के देशी और विदेशी आलिमों की राय है कि क़ुरान की ज़बान ऊंचे दरजे की, बड़ी सुन्दर, रसीली, और एक तरह की आज़ाद नज्म या कविता (Poetic prose) का ढंग लिए

हुए है। .क़ुरान के अंगरेज़ तरजुमा करने वालों में सब से मशहूर और सब से ज्यादा आलिम जार्ज सेल है। उसकी राय है कि—

"क़ुरान का तर्ज़ (उसकी शैली) आमतौर पर सुन्दर और दरिया की तरह बहती हुई है...एक एक आयत के अन्दर बहुतसी बात थोड़े से शब्दों में कही गई है, यहाँ तक कि कहीं कहीं मतलब भी इतना साफ़ समझ में नहीं आता। बीच बीच में ज़बान की .ख़ूब-सूरती को बढ़ाने वाली एशियाई ढंग की ऊंचे दर्जे की तशबीहें यानी उपमाएं हैं, चुभते और चमकते हुए जुम्लों ने ज़बान में और भी जान डाल दी है। बहुत जगह पर, ख़ासतौर से जहाँ अल्लाह की तारीफ़ और उसके गुण बयान किये गये हैं, ज़बान बहुत ही ऊंची बढ़िया और शानदार है।"*

.क़ुरान की किरअत यानी पढ़ने के क़रीब क़रीब उसी तरह के बहुत से अलग अलग ढंग मुसलिम विद्वानों में हैं, जिस तरह वेद पाठ के हिन्दू पंडितों में।

मुहम्मद साहब से पहले के अरब

.क़ुरान की नसीहतों को इस जगह ज्यादह विस्तार देने की ज़रूरत नहीं है। अलग अलग मज़मूनों पर .क़ुरान की ख़ास ख़ास आयतें आगे जमा कर दी गई हैं। .क़ुरान की आयतों की उस अजीब तरतीब की वजह से, जिसका बयान अभी ऊपर आ चुका है, उम्मीद है, यह तरीक़ा पढ़ने वालों के लिए

* Sales' Priliminary Discourse, p. 44.

ज़्यादा आसान होगा। इन आयतों के अलावा .क़ुरान के बहुत बड़े हिस्से में बहुत सी पिछली क़ौमों का हाल बयान किया गया है जो अलग अलग ज़मानों में धर्म और नेकचलनी से भटक कर तरह तरह के पापों में पड़ गईं और जिन्हें इसके बुरे नतीजे भोगने पड़े। कुछ इस तरह के हुक्म या हिदायतें भी हैं जो किसी ख़ास मौक़े पर या ख़ास हालत में उस वक़्त के मुसलमानों को दी गई थीं।

.क़ुरान को समझने के लिए यह भी ज़रूरी है कि उस वक़्त के अरबों की हालत की एक छोटी सी तसवीर हमारी नज़रों के सामने हो।

मुहम्मद साहब के जन्म के वक़्त अरब क़ौम हज़ारों छोटे बड़े क़बीलों में बँटी हुई थी। इन क़बीलों में आए दिन लड़ाइयाँ होती रहती थीं। हर क़बीला अपनी जगह अपने को पूरी तरह आज़ाद समझता था। हर एक क़बीले का अपना एक देवता था जिसे उस क़बीले के लोग पूजते थे। कोई देवता लकड़ी का, कोई पत्थर का और कोई गूँधे हुए आटे का। कोई देवता मर्द या औरत की शकल का था, कोई किसी जानवर की शकल का, कोई दरख़्त की सूरत का, और कोई बिल्कुल अनगढ़। बहुत से लोग कई कई देवी देवताओं को भी पूजते थे। लेकिन ज़्यादहतर अरबों में सब के मालिक 'एक .ख़ुदा' का ख़याल तक न था और उनका न कोई एक धर्म था। उन एक दूसरे के दुश्मन हज़ारों क़बीलों को एक धागे में

बाँधने वाली कोई ताक़त न थी। नतीजा यह था कि मुल्क के एक बहुत बड़े हिस्से पर बाहर की क़ौमों की हुकूमतें क़ायम हो चुकी थीं। उत्तर में रोम के ईसाई शहनशाह की हुकूमत थी, पूरब में ईरान के ख़ुसरो की और दक्खिन और पच्छिम में इथियोपिया के ईसाई शहनशाह की। इस तरह अरब का आधे से ज्यादा हिस्सा दूसरों के क़ब्ज़े में था। बदचलनी की यह हालत थी कि शराब पी पी कर अक़सर अरबों की मौतें हो जाती थीं। शराब के साथ साथ जुआ चलता था और इस दरजे बढ़ा हुआ था कि बहुत से अरब अपना सारा माल असबाब जुए में हार कर आख़ीर में अपने तन की बाज़ी लगा देते थे और जब हार जाते तो बाक़ी ज़िन्दगी जीतने वाले के ग़ुलाम बनकर रहना क़बूल कर लेते थे।

ग़ुलामों के साथ बिल्कुल जानवरों का सा बर्ताव होता था। जानवरों ही की तरह वे बाज़ारों में बेचे और ख़रीदे जाते थे। यहाँ तक कि नन्हे नन्हे बच्चे जबरदस्ती माओं से अलग करके बेच डाले जाते थे। माँ किसी के हाथ और बच्चा किसी के। किसी भी ग़ुलाम को मार डालने की कोई सज़ा न थी। ग़ुलाम औरतों के साथ बदचलनी जायज़ समझी जाती थी और कभी कभी उनके मालिक उनसे पेशा कराकर पैसा कमाते थे।

अरब अपनी बदचलनियों का घमण्ड के साथ खुले तौर पर सबके सामने बखान करते थे। औरतों के साथ भी आमतौर पर

बहुत ही बुरा बर्ताव होता था। उनके कोई किसी तरह के हक़ न माने जाते थे। मर्द जितनी शादियां चाहे कर सकता था, और जब अपनी जिस औरत को चाहे तलाक़ दे सकता था। एक एक औरत के कई कई मरदों का भी रिवाज था। कभी कभी हफ़्ते के सात दिन इस तरह बँटे हुए होते थे कि एक ही औरत के अलग अलग दिनों के लिये अलग अलग आदमी मुक़र्रर थे। बाप के मरने पर उसकी जितनी बीवियां होती थीं वे सब उसके वारिस बेटे की बीवियाँ समझी जाने लगती थीं। यानी सिवाय उस एक माँ के जिसने अपने पेट से किसी को जन्म दिया हो, या उस औरत के जिसका किसी ने दूध पिया हो; और कोई रिश्ता अरबों में पाक न समझा जाता था।

आम तौर पर अरब किसी को अपना दामाद बनाना बड़ी बेइज्ज़ती की बात समझते थे। कहीं कहीं तो लड़कियों को पैदा होते ही गढ़े में गाड़ दिया जाता था और कहीं कहीं उनकी उमर ५, ६ बरस की होने पर उन्हें जिन्दा दफ़न कर दिया जाता था। कुछ लोगों में, जो ख़ास कर लेन देन और तिजारत का काम करते थे, सूदख़ोरी का रिवाज भी बहुत बढ़ा हुआ था। बहादुरी, मेहमानवाज़ी, बात का धनी होना वग़ैरह अच्छी बातें भी उनमें थीं, लेकिन इन गुणों के होते हुए भी ऊपर की शर्मनाक बुराइयों की वजह से अरबों की हालत ख़ासी नाज़ुक और ख़तरनाक थी।

इस तरह के लोगों में हज़रत मुहम्मद और .क़ुरान ने

जन्म लिया। क़ुरान के उपदेशों के समझने के लिए अरबों की हालत को अपने सामने रखना ज़रूरी है।

क़ुरान का असर

क़ुरान के उपदेशों ने अरबों की इन ज़हरीली बुराइयों में से बहुतों को, जैसे शराबख़ोरी, जुआ, सूदख़ोरी और लड़कियों का मारा जाना जड़ से मिटा दिया; सैकड़ों और हज़ारों अलग अलग देवी देवताओं के पूजने वालों को अपने उन अलग अलग देवी देवताओं को छोड़ कर एक निराकार ईश्वर, एक अल्लाह ताला, की पूजा करना सिखा दिया; एक दूसरे के दुश्मन हज़ारों क़बीलों को एक कर उन सब की एक अरब क़ौम बना दी; सारी क़ौम के चलन को पाक और ऊंचा कर दिया, उनमें इल्म और ज्ञान की चाह पैदा कर दी, मुल्क के उन सब टुकड़ों को जो अलग अलग विदेशी ताक़तों के मातहत थे आज़ाद करके सारे देश पर एक आज़ाद और ख़ुद मुख़्तार अरब हुकूमत क़ायम कर दी। यह सब काम २३ साल के अन्दर अन्दर पूरा हो गया।

मुहम्मद साहब के मरने के सौ बरस के अन्दर अन्दर अरब का यह नया मज़हब चीन की दीवार से लेकर अटलांटिक समुद्र तक, एशिया, अफ़रीका और यूरोप, तीनों में फैल गया, तमाम पच्छिमी एशिया, उत्तरी अफ़रीका और आधे यूरोप पर अरबों की हुकूमत क़ायम हो गई और तरह तरह के इल्मों

और हुनरों में उन दिनों के अरब पच्छिमी दुनिया की सब से चढ़ी चढ़ी क़ौम माने जाने लगे।

आज दुनिया में तीस करोड़ से ज़्यादह आदमी क़ुरान के मज़हब के मानने वाले हैं और दुनिया का कोई मुल्क ऐसा नहीं है जहाँ कुछ न कुछ लोग इस किताब से अपनी ज़िन्दगी के लिए सबक़ और धर्म का रास्ता न ढूंढ़ते हों।

क़ुरान के इस असर और तेरह सौ बरस के उसके नतीजों को मोटे तौर पर बयान करते हुए एक यूरोपियन लेखक लिखता है—

"If a book is to be gauged by its net results—by the effect it has produced on all that is deepest and best in human nature—then the Quran must necessarily take high rank as one of the world's greatest works."*

"अगर किसी किताब की क़ीमत का अन्दाज़ा उसके नक़द नतीजों से लगाया जा सकता है—यानी इस बात से कि आदमी के स्वभाव के गहरे से गहरे और अच्छे से अच्छे पहलुओं पर उसका क्या असर पड़ा—तो ज़रूरी है कि क़ुरान को दुनिया की बड़ी से बड़ी और ऊंची से ऊंची किताबों में गिना जावे।"

अभी कुछ साल हुए यूरोप के एक मशहूर माहवारी रिसाले

---

* Islam' by Major Arthur, Glyn Leonard, pp. 105, 106.

ने पच्छिमी यूनिवर्सिटियों के सैकड़ों बड़े बड़े प्रोफ़ैसरों और विद्वानों से प्रार्थना की थी कि वे अपनी अपनी राय में दुनिया की सौ बड़ी से बड़ी किताबों की फ़ेहरिस्त नम्बरवार तय्यार करके रिसाले के एडीटर के पास भेज दें। यूरोप के विद्वानों के जो सैकड़ों जवाब आए, उनको देखने से मालूम हुआ कि दुनिया की बड़ी से बड़ी किताबों में उन्होंने पहिली जगह हज़रत ईसा से एक हज़ार साल पहले की लिखी हुई मशहूर यूनानी किताब 'इलियड' को और दूसरी जगह उसके डेढ़ हज़ार साल बाद की लिखी '.कुरान मजीद' को दी। और यह उस सूरत में जब कि कुल राय देने वाले यूरोपियन आलिमों में से बहुत कम होंगे जिन्होंने .कुरान को असल अरबी में पढ़ा हो।

क़ुरान और उसकी तालीम

अल-फ़ातेहा

क़ुरान शब्द 'क़ुरा' से बना है जिसके माइने हैं एलान करना या पढ़ना। संस्कृत 'क्रन्द', अँग्रेज़ी 'क्राई' और अरबी 'क़ेरा', तीनों असल में एक ही शब्द हैं। 'क़ुरान' के लफ़्ज़ी माइने हैं—वह चीज़ जो एलान की गई हो या जो पढ़ी जावे। रिवाजी माइने हैं—धर्म की किताब।

इसलाम से पहले यहूदी अपनी मज़हबी किताब को 'क़राह' कहा करते थे। यहूदियों की ज़बान इबरानी और अरबों की अरबी दोनों एक दूसरे से बहुत मिलती हैं। 'क़ुरान' और 'क़राह' के एक ही माइने हैं। ख़ुद क़ुरान के अन्दर अपने से पहले की मज़हबी किताबों को भी 'क़ुरान' नाम दिया गया है। (१५-८०, ९१)।

क़ुरान की सबसे पहली सूरत यानी पहले अध्याय का नाम 'अल-फ़ातेहा' है। क़ुरान के अन्दर इस सूरत को "क़ुरानल अज़ीम" (१५-८७) यानी बड़ा क़ुरान कहा गया है। जिस तरह पूरी किताब को क़ुरान कहा जाता है उसी तरह क़ुरान के

हर हिस्से को भी अलग अलग क़ुरान कहा जाता है। बुख़ारी के मुताबिक मुहम्मद साहब इस सूरत को "उम्मुल क़ुरान" (क़ुरान की माँ) कहा करते थे। इस सूरत को आमतौर पर मुसलमानों में सारे क़ुरान का निचोड़ या लुब्बेलुबाब माना जाता है और हर मुसलमान अपनी नमाज़ों और दुआओं में इसे बार बार दोहराता है।

'अल फ़ातेहा' के माइने 'खुलना' या 'शुरू' हैं। सूरा अल-फ़ातेहा यह है—

"उस अल्लाह के नाम से जो रहमान और रहीम यानी मेहर करने वाला और दया करने वाला है।

"तारीफ़ उस अल्लाह की जो सारी दुनियाओं का रब्ब यानी पालने वाला है।

"जो रहमान और रहीम है,

"जो उस दिन का मालिक है जिस दिन सबको अपने किये के फल भोगने होंगे।

"ऐ अल्लाह! हम तेरी ही इबादत (पूजा) करते हैं और तेरी ही मदद चाहते हैं।

"तू हमें सीधे रास्ते पर ले चल।*

"जो उन लोगों का रास्ता है जिन्हें तू ने अपनी निआमतें यानी बरकतें दे रखी हैं।

---

*अग्ने नय सुपथा—ऋग्वेद।

"उन लोगों का नहीं जो भटके हुए हैं और इसलिए जिनसे तू नाराज़ है।" (१-१ से ७)।

इसलाम के बुनियादी उसूल

"कह दो कि अल्लाह एक है, बाक़ी सब उसी के सहारे है। न वह कभी जन्म लेता है और न किसी को जनता है। उसके जैसा कोई दूसरा नहीं है।" (११२-१ से ४)।

"यह किताब (क़ुरान) इसमें कोई शक नहीं, उन लोगों के लिए जो बुराई से बचना चाहते हैं, रास्ता दिखाने वाली है।

"जो ग़ैब यानी परलोक में यक़ीन करते हैं, जो अल्लाह से दुआ मांगते रहते हैं और जो कुछ अल्लाह ने उन्हें दिया है उसमें से ज़रूरत मन्दों को दान देते रहते हैं।

"और जो उस इल्म और हिदायत पर यक़ीन करते हैं जो मुहम्मद को अल्लाह से मिली है और जो कुछ मुहम्मद से पहले अल्लाह ने दूसरों को यानी दूसरे पैग़म्बरों और रसूलों को दिया है उस सब पर भी यक़ीन करते हैं और जो आख़रत यानी मरने के बाद की ज़िन्दगी में यक़ीन रखते हैं।

"ये लोग ही अपने पालनहार की तरफ़ से ठीक रास्ते पर हैं और ये लोग ही फ़लाह यानी कल्याण पायेंगे।" (२-२ से ५)।

अल्लाह और उसकी तारीफ़

"क्या तुम नहीं देखते कि आसमानों और ज़मीन के सब रहने वाले, यहां तक कि उड़ती हुई चिड़ियां भी उसी अल्लाह की तारीफ़

करती हैं ! वह सब की दुआ और सब की स्तुति (हम्द) को सुनता है और जो कुछ वे करते हैं सब जानता है।

"अल्लाह ही आसमानों और ज़मीन का मालिक है और आख़ीर में सब को अल्लाह ही की तरफ़ लौट कर जाना है।

"क्या तुम नहीं देखते कि अल्लाह बादलों को उड़ा कर ले जाता है, फिर उन्हें इकट्ठा करता है और जमा करता है, यहां तक कि उनसे मेह बरसता हुआ दिखाई देता है ? वह पहाड़ जैसे बादलों को भेजता है जिनसे ओले गिरते हैं। जिन्हें वह चाहता है उन्हें उन ओलों से नुक़सान पहुंचता है और जिन्हें चाहता है नहीं पहुँचता। उसकी बिजली की दमक आंख को चकाचौंध कर देती है।

"अल्लाह ही रात से दिन और दिन से रात करता है। सचमुच जो लोग देख सकते हैं उन्हें इससे काफ़ी सबक़ मिल सकता है।

"अल्लाह ने पानी से सब जानवरों को बनाया है, इनमें कुछ पेट के बल रेंगते हैं, कुछ दो पैरों पर चलते हैं, और कुछ चार पैरों पर। अल्लाह जो चाहता है बनाता है, सचमुच वह सब चीज़ों पर समर्थ यानी क़ादिर है।" (२४-४१ से ४५)।

"वही आसमानों और ज़मीन का बनाने वाला है।...उसीने सब चीज़ों को बनाया है, वह सब चीज़ों को जानता है।

"अल्लाह ही तुम्हारा रब्ब (पालने वाला) है, उस एक के सिवाय कोई दूसरा अल्लाह नहीं है,* वही सब चीज़ों का बनाने वाला है, इसलिये उसी की पूजा करो। सब चीज़ें उसी के बस में हैं।

---

* एकमेवाद्वितीयम्—वह एक ही है दूसरा नहीं। उपनिषद।

"आंख उसे नहीं देख सकती पर वह सब आंखों को देखता है। वह बारीक से बारीक चीज़ को जानता है, वह सब कुछ जानता है।" (६-१०२ से १०४)।

"अल्लाह वह है जिसके सिवाय कोई दूसरा अल्लाह नहीं है, वह हमेशा रहने वाला और ख़ुद अपने से क़ायम यानी अनादि, अनन्त और स्वयम्भू है और जितनी चीज़ें हैं उसी से क़ायम हैं, न उसे कभी नींद आती है और न सुस्ती, जो कुछ आसमानों और ज़मीन पर है सब उसी का है। जब तक उसका हुक्म न हो कोई उसके काम में दख़ल नहीं दे सकता, वह हमारे आगे और पीछे की सब चीज़ें जानता है और हम उसके ज्ञान के भंडार से सिर्फ़ उतना ही जान सकते हैं जितना वह चाहे, आसमान और ज़मीन सब उसके ज्ञान के क्षेत्र यानी उसकी मारफ़त के मैदान में शामिल हैं, वह इन सब को संभाले हुए है, वह कभी थकता नहीं, वह सबसे ऊपर और सबसे बड़ा है।" (२-२५५)।

"अल्लाह कहता है कि जब कभी मेरे बन्दे तुमसे मेरी बाबत पूँछें तो कह दो कि मैं सचमुच उनके बहुत ही पास हूं, जब कभी कोई मुझसे किसी तरह की दुआ प्रार्थना करता है मैं उसका जवाब देता हूं, इसलिये लोगों को अल्लाह पर यक़ीन करना चाहिए और अल्लाह ही का हुकुम मानना चाहिए ताकि वह ठीक ठीक रास्ता जान सकें।" (२-१८६)।

"सचमुच अल्लाह ही ने इनसान को बनाया है, इनसान के दिल में जो कुछ पैदा होता है अल्लाह सब जानता है, और आदमी की

गरदन की रग (रगे जां) से भी अल्लाह ज़्यादा नज़दीक है।" (५०-१६)।

"आदमी पर जो कुछ मुसीबत आती है वह सब आदमी के अपने ही कामों की वजह से आती है, फिर भी अल्लाह बहुत कुछ माफ़ कर देता है।" (४२-३०)।

"कह दो कि, ऐ अल्लाह के बन्दो ! जिन्होंने अपनी आत्माओं के साथ ज़्यादतियां की हैं, अल्लाह के रहम से निराश न हो, सचमुच अल्लाह सब क़सूर माफ़ कर देता है, अल्लाह माफ़ कर देने वाला और दयावान है।" (३९-५३)।

"अल्लाह सब दया करने वालों से बढ़ कर दया करने वाला है।" (१२-९२)।

"जो लोग भूल से बुराई कर जाते हैं, फिर पछताते हैं और अपने को सुधारते हैं, सचमुच अल्लाह उन्हें माफ़ कर देता है, और उन पर रहम करता है।" (१६-११९)।

"जो कोई बुराई करता है और अपनी आत्मा के साथ ज़ुल्म करता है, लेकिन फिर अल्लाह से माफ़ी मांगता है, वह अल्लाह को माफ़ कर देने वाला और दयावान पायेगा।

"जो कोई पाप करता है, अपनी ही आत्मा के ख़िलाफ़ करता और समझता है।

"और जो कोई क़ुसूर या गुनाह करता है और फिर किसी दूसरे बेगुनाह पर उसका झूठा इलज़ाम लगाता है, वह ख़ुद अपने

ऊपर तोहमत का बोझ लादता है और खुला पाप करता है।" (४-११० से ११२)।

"जो कोई बुराई करने के बाद उस पर पछताता है और आगे के लिए अपने को सुधारता है, अल्लाह उस पर सचमुच रहम करेगा। क्योंकि सचमुच अल्लाह माफ़ कर देने वाला और रहम दिल है।" (५-३९)।

"और इसमें कोई शक नहीं कि जो कोई अपने पिछले बुरे कामों पर पछताता है, और आइन्दा के लिए बात मान लेता है, और नेक काम करता है, और फिर ठीक रास्ते पर चलता रहता है अल्लाह उसे पूरी तरह माफ़ कर देता है।" (२२-८२)।

"और इसमें कोई शक नहीं कि जो लोग गुनाह करके अपने ऊपर ज़ुल्म करते हैं उनके लिए भी, यहाँ तक कि सब इन्सानों के लिये, अल्लाह माफ़ कर देने वाला है और इसमें भी शक नहीं कि अल्लाह बदला लेने में भी सख्त है।" (१३-६)।

"और अल्लाह सब को माफ़ कर देने वाला और सब से मुहब्बत करने वाला है।" (८५-१४)।

"अल्लाह हक़ यानी सत्य है।" (२२-६२)।

"अल्लाह आसमानों और ज़मीन का नूर है। उसके नूर यानी रोशनी की मिसाल एक ऐसे खम्मे की तरह है जिस पर एक दिया जल रहा है, दिया एक शीशे के अन्दर है, वह शीशा एक ज़ोरों के साथ चमकते हुए तारे की तरह है, वह एक ऐसे मुबारक ज़ैतून के तेल

से बल रहा है, जो न पूरब का है और न पच्छिम का, जिसका तेल बिना आग के रोशनी देता है, अल्लाह नूरों का भी नूर है,* अल्लाह जिसे चाहता है अपने नूर का दर्शन कराता है और अल्लाह आदमियों के लिए मिसालों में तालीम देता है। और सब चीज़ों को जानता है।" (२४-३५)।

"जिधर भी तुम मुँह करो उधर ही अल्लाह का मुँह है।"[१] (२-११५)।

"धरती के ऊपर जितने दरख़्त हैं उन सब के क़लम बना लिए जावें और सातों समुद्र की स्याही बन जाए और उनसे लिखा जावे तो भी अल्लाह की बातें ख़त्म नहीं हो सकतीं, सचमुच अल्लाह बड़ा और सब कुछ जानने वाला है।" (३१-२७)।

"नरमी के साथ और डरते हुए, और नीची आवाज़ में सुबह और शाम अपने अन्दर रब्ब को याद करो, और बेख़बर मत हो।" (७-२०५)।

"और दिन के दोनों हिस्सों में, और रात के शुरू के घण्टों में अल्लाह से दुआ मांगो। सचमुच अच्छे कामों से बुरे काम कट जाते हैं। जो लोग ख़याल रखते हैं, उन्हें यह याद दिलाने के लिए है।

"और सब्र करो, क्योंकि जो लोग नेक काम करते हैं उनकी नेकी के फल को अल्लाह कभी नष्ट होने नहीं देता।" (११-११४,११५)।

---

* *ज्योतिषामपितज्ज्योतिः*—वह रोशनियों की भी रोशनी है—*गीता*

[१] *विश्वतोमुखम्*—उसके सब तरफ़ मुँह हैं—*गीता*

सब इनसान एक क़ौम हैं

"सब इनसान एक ही वाहिद उम्मत यानी एक ही क़ौम हैं।" (२-२१३)।

"और तमाम इनसान इसके सिवा और कुछ नहीं है कि एक ही उम्मत है। (१०-१९)।

"सचमुच तुम्हारी सब इनसानों की यह एक ही क़ौम है और एक ही अल्लाह तुम सब का रब्ब है। इसलिए उसी की पूजा इबादत करो। लोगों ने काट काट कर अपने टुकड़े (अलग अलग गिरोह) कर रखे हैं। सब को एक अल्लाह ही के पास जाना है।" (२१-९२,९३)।

"धरती पर चलने वाले जितने जानदार हैं और हवा में उड़ने वाले जितने पक्षी हैं सब आदमी की तरह एक एक उम्मत यानी क़ौम हैं। हमने इस किताब में किसी को भुलाया नहीं है। आख़ीर में सब को उसी अल्लाह के पास जाना है।" (६-३८)।

सब मज़हब एक हैं

"इसमें कोई शक नहीं कि चाहे वे लोग हों जो ईमान लाए हैं यानी मुसलमान हैं और चाहे वे हों जो यहूदी हैं, या वे हों जो ईसाई हैं, या वे हों जो साबी* हैं, या चाहे कोई भी क़ौम क्यों न हो, जो कोई भी अल्लाह को मानता है, और आख़िरत में यानी अपने कर्मों

* उस ज़माने का एक मज़हब जिसके मानने वाले अल्लाह को मानते थे और अल्लाह का ज़हूर समझकर सूरज और चाँद की पूजा करते थे।

के फल में यक़ीन करता है और नेक काम करता है, उन सब को रब्ब से फल मिलेगा, उन्हें न किसी बात का डर है और न किसी तरह का ग़म होगा।" (२-६२ ; ५-६९)।

"यहूदी कहते हैं कि सिवाय यहूदियों के कोई जन्नत में नहीं जा सकता, ईसाई कहते हैं कि सिवाय ईसाई के कोई जन्नत में नहीं जा सकता। ये सब इन लोगों के झूठे वहम हैं। इनसे कहो कि अगर तुम सच्चे हो तो (अपनी ही मज़हबी किताबों से) सबूत निकाल कर दिखाओ।

"नहीं, जिस किसी ने अपने आपको अल्लाह की मरज़ी पर छोड़ दिया है और जो दूसरों के साथ नेकी करता है, उसे अपने रब्ब से फल मिलेगा, उसे न किसी बात का डर है और न किसी तरह का ग़म होगा।" (२-१११,११२)।

"और इसमें शक नहीं तुमसे (मुहम्मद से) पहले भी हमने (अल्लाह ने) दुनिया में रसूल भेजे हैं......हर ज़माने के लिए अलग अलग किताबें हैं, अल्लाह जिसे चाहता है मनसूख़ कर देता है और जिसे चाहता है क़ायम कर देता है। और इन सब मज़हबी किताबों की असली माँ—'उम्मुल किताब'—अल्लाह ही के पास है।" (१३-३८, ३९)।

"हर नबी जो पैग़ाम या सन्देश लाकर देता है, उस सन्देशे के लिए एक मियाद मुक़र्रर है, जिसका तुम्हें पता लग जावेगा।" (६-६७)।

"ऐ आदम की औलाद (आदमियो)! अगर तुम में से कोई 'रसूल' पैदा हों और तुम्हें अल्लाह का पैग़ाम आकर सुनावें, तो

(तुम्हें कोई डर नहीं) जो कोई भी बुरे कामों से बचेगा और नेक काम करेगा, उसे न किसी बात का डर होगा और न कोई ग़म होगा।" (७-३५)।

"हर उम्मत यानी हर क़ौम में 'रसूल' हुए हैं।" (१०-४७)।

"हर क़ौम में धर्म का रास्ता बताने वाले हुए हैं।" (१३-७)।

"सचमुच अल्लाह ने तुम्हें (मुहम्मद को) हक़ (सच्चाई) के साथ भेजा है ताकि तुम लोगों को अच्छे कामों के बदले में ख़ुश ख़बरी दो और बुरे कामों के नतीजे से आगाह करो, और कोई क़ौम ऐसी नहीं है जिसमें इसी तरह बुरे कामों के नतीजों से आगाह करने वाला कोई रसूल नहीं भेजा गया।" (३५-२४)।

"और सचमुच हमने तुमसे (मुहम्मद से) पहले सब पुरानी क़ौमों में रसूल भेजे हैं।" (१५-१०)।

"और सचमुच हमने हर क़ौम में रसूल पैदा किये हैं, जिन्होंने लोगों को यही नसीहत की है कि अल्लाह की इबादत करो और बुराई से बचे रहो।" (१६-३६)।

"इसमें कोई भी शक नहीं कि तुमसे पहले अल्लाह की तरफ़ से सब क़ौमों में रसूल भेजे गए हैं।" (१६-६३)।

"और जो रसूल जिस क़ौम में भेजा गया है, वह उसी क़ौम की ज़बान में पैग़ाम देकर भेजा गया है, ताकि उन्हें साफ़ साफ़ समझा सके।" (१४-४)।

"कह दो कि हम अल्लाह को मानते हैं, और जो ज्ञान अल्लाह

ने हमें दिया है (यानी क़ुरान) उसे मानते हैं, और उन सब किताबों को भी मानते हैं जो अल्लाह ने इब्राहीम के ज़रिये, इस्माईल के ज़रिये, इसहाक़ के ज़रिये, याक़ूब के ज़रिये, और क़ौमों के ज़रिये, ईसा के ज़रिये और दूसरे दूसरे नबियों के ज़रिये दुनिया को दी हैं। इन सब पैग़म्बरों में हम किसी क़िस्म का फ़रक़ नहीं करते और हमने अपने को अल्लाह ही की मरज़ी पर छोड़ रखा है।" (२-१३६)।

"रसूल (मुहम्मद) उस ज्ञान को मानता है जो उसके रब्ब ने उस पर उतारा है। जो लोग रसूल को मानते हैं वे सब भी उस ज्ञान को मानते हैं। वे सब एक अल्लाह को मानते हैं, उसके फ़रिश्तों को मानते हैं, सब इलहामी यानी ईश्वरीय किताबों को मानते हैं और ईश्वर के भेजे हुए सब रसूलों को मानते हैं। इन रसूलों में हम किसी के साथ किसी तरह का फ़रक़ यानी भेद भाव नहीं करते।··· ऐ हमारे रब्ब! हम तुझसे ही माफ़ी चाहते हैं, आख़ीर में सब को तेरे ही पास जाना है।" (२-२८५)।

"ऐ मुहम्मद! तुम्हें किताब में से (यानी उस पूरे ज्ञान में से जो अल्लाह के पास है) जो कुछ दिया गया है उसे पढ़ो, और दुआ मांगते रहो। सचमुच दुआ आदमी को गन्दी बातों से और बुराई से दूर रखती है। और सचमुच अल्लाह को याद करना बहुत बड़ी बात है, और जो कुछ तुम करते हो अल्लाह जानता है।

"और जिन लोगों के पास दूसरी मज़हबी किताबें हैं उनसे बहस न करो, अगर करो तो बहुत ही मिठास के साथ करो। सिवाय उनके कि जो कुछ ज़ुल्म करते हैं। और उनसे कहो कि हम उस किताब में

यक़ीन करते हैं जो हमें दी गई है और उन किताबों में भी यक़ीन करते हैं जो तुम्हें दी जा चुकी हैं। और हमारा और तुम्हारा अल्लाह एक ही है और उसी के हम 'मुसलिम'* हुए हैं यानी उसी की मरज़ी पर हमने अपने को छोड़ दिया है।" (२-४५, ४६) ।

---

*मुसलिम और इसलाम दोनों शब्द क़ुरान में तरह तरह से और बार बार आते हैं। इसलाम शब्द 'सलम' से है, जिसके माइने गर्दन झुकाना या अपने को किसी की मरज़ी पर छोड़ देना है। 'इसलाम' के माइने हैं अपने को पूरी तरह ईश्वर की मरज़ी पर छोड़ देना। 'मुसलमान' या 'मुसलिम' के माइने हैं वह जिसने अपने को पूरी तरह ईश्वर की मरज़ी पर छोड़ दिया हो। इन्हीं माइनों में इसलाम और मुसलिम शब्द बार बार .क़ुरान में इस्तेमाल किये गये हैं। (३-१६ वग़ैरह)। इन्हीं माइनों में क़ुरान ने जगह जगह हज़रत मुहम्मद से पहले के सब दूसरे पैग़म्बरों के धर्मों को 'इसलाम' और उनके मानने वालों को 'मुसलिम' या 'मुसलमान' कहकर पुकारा है। (२२-७८ इत्यादि) ।

कुछ लोग 'इसलाम' शब्द को 'सलाम' से भी जोड़ते हैं, जिसके माइने 'शान्ति' या 'अमन' है। क़ुरान में 'सलाम' शब्द इन माइनों में एक जगह आया है। (१०-२५)। लेकिन इसलाम मज़हब के माइने क़ुरान के मुताबिक़ ईश्वर के हुक्म के सामने सर झुकाना, अपने को ईश्वर के अर्पण कर देना यानी उसकी मरज़ी पर छोड़ देना ही है।

दुनिया के अगले पिछले सब मुल्कों और सब ज़मानों के रसूलों को सामने रखकर .कुरान में अल्लाह की तरफ़ से कहा गया है—

"ऐ रसूलो ! पाक चीज़ें खाओ, और नेक काम करो, सचमुच जो कुछ तुम करते हो अल्लाह जानता है।

"सचमुच तुम्हारे ये सब अलग अलग मज़हब या फ़िरक़े एक ही मज़हब और एक ही फ़िरक़ा है और तुम्हारा सब का एक ही रब्ब है। इसलिए उसी का ध्यान रखो।

"लेकिन लोगों ने अपने दीन के आपस में टुकड़े टुकड़े कर डाले और हर गिरोह जो कुछ उसके अपने पास है उसी में फूला है।

"यह बड़ी नासमझी है।" (२३-५१ से ५४)।

"सचमुच जो लोग अल्लाह और उसके सब रसूलों को नहीं मानते और जो अल्लाह और उसके रसूलों में फ़रक़ करना चाहते हैं और कहते हैं कि हम कुछ रसूलों को मानते हैं और कुछ को नहीं मानते और इनके बीच से अपना ही एक अलग रास्ता बना लेना चाहते हैं सचमुच यही लोग सच्चे 'काफ़िर' नाशुकरे यानी एहसान फ़रामोश हैं और अल्लाह ने इनके लिए ज़िल्लत की सज़ा तय कर रखी है।"
(४-१५०-१५१)।

"सचमुच अल्लाह ने उसी तरह मुहम्मद को वही (अन्तः प्रेरणा) के ज़रिये ज्ञान दिया है जिस तरह नूह को और बाद के दूसरे नबियों को दिया था। उसी तरह अल्लाह ने इब्राहीम, इस्माईल, इसाक़, याक़ूब और 'क़ौमों' और ईसा और अयूब और यूनिस और

हारून और सुलेमान को ज्ञान दिया था और उसी तरह दाऊद को ज़बूर* दी थी।

"और अल्लाह ने दुनिया में बहुत से रसूल भेजे हैं जिनमें से कुछ का ऊपर क़ुरान में ज़िक्र आया है और कुछ का नहीं आया।" (४-१६३, १६४)।

"और इसमें कोई शक नहीं कि अल्लाह ने तुमसे (मुहम्मद से) पहले भी सब क़ौमों में रसूल भेजे हैं।" (६-४२)।

"और अल्लाह ने जो भी रसूल भेजे हैं वह इसीलिए भेजे हैं कि लोगों को अच्छे कामों के बदले में अच्छे फल की ख़ुशख़बरी दें और बुरे कामों के बुरे नतीजों से आगाह करें। फिर जो कोई बात मान ले और नेक काम करे उसे न किसी बात का डर है और न कोई ग़म।" (६-४८)।

"और सचमुच तुमसे (मुहम्मद से) पहले भी अल्लाह ने रसूल भेजे हैं। उनमें से कुछ का तुमसे क़ुरान में ज़िक्र किया गया है और कुछ का तुमसे ज़िक्र नहीं आया।" (४०-७८)।

"सचमुच जिन लोगों ने दीन यानी धर्म के टुकड़े टुकड़े कर डाले और जो लोग अलग अलग गिरोह बनाकर बैठ गए हैं उनसे तुम्हारा कोई सरोकार नहीं।" (६-१६०)।

"यह (क़ुरान) वह हक़ (सचाई) है जो अपने से पहले की मज़हबी किताबों की तसदीक़ करता है, यानी उन सब को सच बताता है।" (२-९१)।

*एक मज़हबी किताब।

"क़ुरान अपने से पहले की मज़हबी किताबों की तसदीक़ करता है।" (२-९७)।

"अल्लाह ने किताब (अपने पास के असल ज्ञान) में से जो कुछ तुम्हें (मुहम्मद को) वही (अन्तः प्रेरणा) के ज़रिये दिया है वह हक़ है जो तुमसे पहले की सब धर्म पुस्तकों की तसदीक़* करता है।" (३५-३१)।

"मुहम्मद सचाई को लेकर आया है और उसने अपने से पहले के सब रसूलों की तसदीक़ की है यानी उन्हें सच्चा ठहराया है।" (३७-३७)।

"और तुम्हें (मुहम्मद को) कोई ऐसी बात नहीं कही गई जो सचमुच तुमसे पहले के रसूलों को न कही गई हो।" (४१-४३)।

"और यह किताब क़ुरान, जो अपने से पहले की किताबों को सच बताती है, अरबी ज़बान में इसलिए है ताकि ये (अरब) लोग जो ज़ुल्म करते हैं इन्हें (इसके बुरे नतीजे से) आगाह कर दे और जो

---

*ठीक जिस तरह क़ुरान में अपने से पहले के सब धर्मों को 'इसलाम' और उनके मानने वालों को 'मुसलमान' कहा गया है, उसी तरह क़ुरान में क़ुरान से पहले की मज़हबी यानी ईश्वरीय किताबों को भी 'क़ुरान' नाम दिया गया है और उन लोगों को, जिन्होंने इन सब ईश्वरीय किताबों को अलग अलग करके ईश्वरीय ज्ञान के 'टुकड़े टुकड़े कर डाले', 'मुक्तसेमीन' यानी 'फूट डालने वाले' कहा गया है। (१५-९०-९१)।

नेकी करते हैं उन्हें ख़ुश ख़बरी दे, सचमुच जो लोग भी कहते हैं कि अल्लाह हमारा रब्ब है और नेक काम करते हैं, उन्हें न कोई डर है और न कोई ग़म।" (४६-१२, १३)।

"और अगर हमने यह क़ुरान किसी दूसरे मुल्क की ज़बान में बनाई होती तो ये लोग ज़रूर कहते कि इसके हुक्म, इसकी हिदायतें हमारे लिए साफ़ क्यों नहीं की गईं, यह क्या बात है, अरब और दूसरे मुल्क की ज़बान ?" (४१-४४)।

"अल्लाह ने तुम्हें (मुहम्मद को) क़ुरान अरबी ज़बान में इस-लिए दिया है ता कि तुम ख़ास शहर मक्का और उसके आस पास के अरबों को आगाह कर सको।" (४२-७)।

"सचमुच हमने (अल्लाह ने) इस क़ुरान को अरबी में इसलिए उतारा है ता कि तुम लोग (अरब) अच्छी तरह समझ सको।" (४३-३)।

"अल्लाह ने तुम्हारी (मुहम्मद की) ज़बान में इसे आसान कर दिया है ताकि ये अरब लोग ख़याल रखें।" (४४-५८)।

"सचमुच यह (क़ुरान) 'रसूल-ए-करीम' (एक बुज़ुर्ग रसूल) का कौल यानी कहा हुआ है।

"यह किसी शायर (कवि) के शब्द नहीं हैं, तुम नहीं मानते।

"और न यह किसी जादूगर के शब्द हैं, तुम परवाह नहीं करते।

"यह ज्ञान उस अल्लाह की तरफ़ से आया है जो सब दुनियाओं का मालिक है।" (६९-४०-४३)।

"इसमें कोई शक नहीं यह क़ुरान उस रसूल-ए-करीम का क़ौल है

"जो ताक़त वाला है, जिसकी आसमान के मालिक (अल्लाह) के यहाँ इज़्ज़त है।

"जिसका कहना मानना चाहिए, जो 'अमीन' (भरोसे वाला) है।

"और ऐ लोगो तुम्हारा साथी (मुहम्मद) पागल नहीं है।" (८१-१९ से २२)।

"इसलिए ऐ मुहम्मद ! सब्र करो, इसमें शक नहीं अल्लाह का वादा सच्चा साबित होगा। अपनी ग़लती के लिए अल्लाह से माफ़ी मांगो और रोज़ सुबह और शाम अपने रब्ब की 'हम्द' (तारीफ़ यानी स्तुति) करो।" (४०-५५)।

"इसलिए ऐ मुहम्मद ! जानो कि सिवाय उस एक के और कोई अल्लाह नहीं है, और उससे अपनी ग़लतियों के लिए और जो मर्द और औरत तुम्हारी बात पर चलते हैं उन सब की ग़लतियों के लिए माफ़ी मांगो और अल्लाह जानता है कि तुम कहां रहते हो और क्या करते हो।" (४७-१९)।

"सचमुच अल्लाह ने तुम्हें (मुहम्मद को) साफ़ फ़तह दी है ताकि अल्लाह तुम्हारी अगली और पिछली सब ग़लतियों को माफ़ कर दे और तुम पर अपनी निआमतों और बरकतों को पूरा करे और तुम्हें सीधे रास्ते पर ले चले और तुम्हें बहुत बड़ी मदद दे।" (४८-१ से ३)

" ऐ ईमान वालो ! रोज़े रखना तुम्हारा फ़र्ज़ बताया गया है, जिस तरह तुमसे पहले के लोगों को भी बताया गया था। यह इसलिए है ताकि तुम बुराई से बचे रहो।

"कुछ दिन तक (जो मुक़र्रर हैं रोज़े रखो), लेकिन तुममें से जो कोई बीमार हो या सफ़र में हो, वह उन दिनों की जगह उतने ही दिन कभी और रोज़े रख ले और जिस किसी के पास हो, वह बजाए रोज़ा रखने के किसी ग़रीब आदमी को खाना खिला कर रोज़े से छुट-कारा पा सकता है। अगर कोई .खुद बख़ुद दूसरों की भलाई का काम करे तो उसके लिए ज़्यादा अच्छा है और अगर तुम समझो तो तुम्हारे लिए रोज़े रखना .ज्यादा अच्छा है।" (२-१८३, १८४)।

"अल्लाह ने तुम पर (मुहम्मद पर) यह किताब (.कुरान) उतारी है जो सची है। यह उन किताबों को सचा ठहराती है जो इस से पहले आ चुकी हैं और जो सब उस असली किताब (ज्ञान) में से ली गई हैं (जो अल्लाह ही के पास है)। यह किताब (.कुरान) उन सब अपने से पहले की किताबों की हिफ़ाज़त करती है। इसलिए अल्लाह ने जो कुछ ज्ञान तुम्हें दिया है उसी से उनके दरमियान .फैसला करो और लोगों के वहमों में फँसकर उस सचाई से न फिर जाओ जो तुम पर उतरी है। अल्लाह ने सब के लिए अलग-अलग शरअ और मिनहाज (रस्म रिवाज और पूजा के तरीक़े) बना दिये हैं। अगर अल्लाह चाहता तो तुम सब को एक ही फ़िरक़ा (एक ही रस्म रिवाज के मानने वाले) बना देता। लेकिन अल्लाह चाहता था कि जिसको जो तरीक़ा बता दिया है उसी में उसको (परखें)। इसलिए इन फ़रक़ों में न पड़कर दूसरों की भलाई के कामों में एक दूसरे से बढ़ने की कोशिश करो। सब को अल्लाह ही के पास लौट कर जाना है। तब जिन बातों में तुममें फ़रक़ है वह अल्लाह तुम्हें समझा देगा।" (५-४८)।

"और अल्लाह यह नहीं करता कि जब तक कोई लोग नेक काम करते रहें तब तक सिर्फ़ उनके ग़लत अक़ीदों यानी विश्वासों या मान-ताओं की वजह से उन्हें बरबाद करे, अगर अल्लाह चाहता तो सब लोगों के एक ही से मज़हबी अक़ीदे बना देता, लेकिन इन बातों में लोगों में फ़रक़ रहेगा।" (११-११७, ११८)।

धर्म में ज़बरदस्ती की मनाही

"मज़हब के मामले में कोई ज़बरदस्ती नहीं होनी चाहिये।" (२-२५६)।

"अल्लाह अगर चाहता तो सचमुच दुनिया भर के सब आदमी तुम्हारी बात मान लेते। तो क्या तुम लोगों के साथ ज़बरदस्ती करोगे कि वह तुम्हारी बात मान लें?" (१०-९९)।

"ऐ मुहम्मद! ईश्वर ने जो ज्ञान तुम पर उतारा है। तुम उसी पर चलो, यानी यह कि सिवाय उस एक के दूसरा कोई अल्लाह नहीं है और जो लोग दूसरे देवी देवताओं या मूर्तियों की पूजा करते हैं उन्हें छोड़ो।

"अगर अल्लाह चाहता तो वे लोग भी सिवा एक अल्लाह के किसी दूसरे की पूजा न करते। अल्लाह ने, ऐ मुहम्मद! तुम्हें उनके ऊपर 'हफ़ीज़' या 'वकील' यानी रक्षक या ठेकेदार बना कर नहीं भेजा है।

"और जिन देवी देवताओं मूर्तियों वग़ैरह की, अल्लाह के सिवा, वे पूजा करते हैं, उन्हें बुरा मत कहो, ताकि कहीं नादानी में पड़कर

वे भी अल्लाह को बुरा न कहें। हर आदमी को अपने ही काम अच्छे लगते हैं। यह बात भी अल्लाह ही की की हुई है। आख़ीर में सब अपने उसी रब्ब के पास लौटकर जांयगे और अल्लाह उन सब के काम उन्हें समझा देगा।" (६-१०७ से १०९)।

"उस अल्लाह के नाम पर जो रहमान और रहीम है।

"(ऐ मुहम्मद !) काफ़िरों* से (यानी उन लोगों से जो तुम्हारी बात नहीं मानते) कह दो कि—

"मैं उसकी पूजा नहीं करता जिसकी तुम करते हो।

"न तुम उसकी पूजा करते हो जिसकी मैं करता हूँ।

"न मैं उसकी पूजा करूँगा जिसकी तुम करते हो।

"न तुम उसकी पूजा करोगे जिसकी मैं करता हूँ।

"इसलिए तुम्हारा दीन तुम्हारे लिए और मेरा दीन मेरे लिए।" (१०९-१ से ६)।

---

*'काफ़िर' शब्द कुफ़्र से बना है, जिसके माइने अरः हैं—(१) ढकना, (२) झूठ समझना या न मानना, और (३) नाशुकरी करना यानी बेक़दरी करना। काफ़िर के माइने हैं—(१) वह आदमी जो किसी की बात मानने से इनकार करे, या (२) वह जो ईश्वर की दया और उसकी देन के लिए शुक्रगुज़ार न हो, या (३) काफ़िर अरबी में किसान यानी खेती करने वाले को भी कहते हैं। ('ग़रीबुल क़ुरान'—मिरज़ा अबुल फ़ज़ल; 'लुग़ातुल क़ुरान'—मौलवी मुहम्मद ख़लील)।

क़ुरान में यह शब्द जगह जगह इन सब माइनों में इस्तेमाल किया गया है। आमतौर पर यह शब्द अरब के उन लोगों के के लिए आया है, जो मुहम्मद साहब की "बात न मानते थे।"

एक जगह पर तमाम इन्सानी क़ौम की तरफ़ इशारा करते हुए कहा गया है—

"अल्लाह ने आसमानों और ज़मीन को बनाया और बादलों से पानी बरसाया, फिर तुम्हारे खाने के लिए ज़मीन से फल पैदा किये, और तुम्हें जहाज़ दिये ताकि वे समुद्र में अल्लाह के हुकुम से चलें, और नदियों को आदमियों के लिए काम का बनाया, और सूरज और चाँद को जो अपने अपने रास्ते पर चलते रहते हैं और रात और दिन को, सब को, तुम्हारे लिए फ़ायदे का बनाया। तुम जो माँगते हो वह अल्लाह देता है। तुम अगर अल्लाह की बरकतों को गिनना चाहो तो गिन नहीं सकते, फिर भी इसमें शक नहीं कि इनसान 'ज़ुल्म' (बेइन्साफ़ी) करता है और 'काफ़िर' (नाशुकरा) है।" (१४-३२, ३३, ३४)।

इन आयतों में और इसी तरह कुछ और आयतों में भी (१७-६७) तमाम इन्सानों को आमतौर पर 'काफ़िर कहा गया है, और काफ़िर के माइने यहाँ 'नाशुकरा' है यानी "अल्लाह की क़द्र न करने वाला।"

कहीं कहीं यहूदियों के लिए भी जो अल्लाह और अपनी किताब 'तौरेत' को मानते थे, लेकिन जो अपने मज़हब की

नीचे की दोनों आयतें उस ज़माने की हैं जब कि अरब के अन्दर मुसलमानों और ग़ैर-मुसलमानों में दुश्मनी हद को पहुँची हुई थी और बराबर लड़ाइयां जारी थीं—

"अल्लाह तुम से यह नहीं कहता कि जो ग़ैर मुसलमान तुम्हारे मज़हब की वजह से तुम से नहीं लड़ते और जिन्होंने तुम्हें तुम्हारे घरों से नहीं निकाला, उनके साथ तुम मुहब्बत का बर्ताव न करो या इन-साफ़ न करो। सचमुच अल्लाह उन्हें ही प्यार करता है जो सब के साथ इनसाफ़ करते हैं।

"अल्लाह का सिर्फ़ यह हुकुम है कि जिन लोगों ने तुम्हारे मज़हब की वजह से तुमसे लड़ाई शुरू कर दी है; और जिन्होंने तुम्हें ज़बरदस्ती तुम्हारे घरों से निकाल दिया है, और दूसरों को तुम्हें निकाल देने में मदद दी है, उनसे जाकर न मिल जाओ, जो उनसे जाकर मिल जाता है वह ज़ुल्म करता है।" (६०-८, ९)।

"जिन लोगों ने तुम्हारी (मुहम्मद की) बात मान ली है, उनसे

असली तालीम से भटक गए थे, इन्हीं माइनों में 'काफ़िर' शब्द इस्तेमाल किया गया है। (१७—८)।

एक जगह पर अल्लाह अपने बारे में कहता है कि—

"जो कोई भी नेक काम करेगा और ईमान लायेगा उसकी कोशिशों के साथ हम 'कुफ़्र' नहीं करेंगे। (नेहाभिक्रम नाशोस्ति-गीता) और सचमुच जितनी भी कोशिश वह करेगा वह उसके नेक कामों में लिख ली जावेगी।" (२१-९४)।

कहो कि वे उन लोगों को माफ़ कर दें, जिन्हें उस दिन का डर नहीं है, जिस दिन वे अल्लाह के सामने जावेंगे। अल्लाह सब को उनके कामों का फल देगा।

" जो नेकी करेगा सो अपने लिए और जो बुराई करेगा सो अपने लिए, आख़ीर में सब को अपने रब्ब ही के पास जाना है।" (४५-१४,१५)।

यहां 'कुफ़्र' के माइने 'ढकना' है और मतलब यह है कि अल्लाह ऐसे आदमी की कोशिशों की क़द्र करेगा।

इसी तरह एक दूसरी जगह अल्लाह कहता है कि—

"जो लोग ईमान (यक़ीन) लायेंगे और नेक काम करेंगे हम सचमुच उनके पिछले बुरे कामों के साथ 'कुफ़्र' करेंगे यानी उनकी पिछली ग़लतियों को ढक देंगे यानी उन्हें दूर कर देंगे यानी उन्हें माफ़ कर देंगे।..." (२९-७)।

यहां पर भी 'कुफ़्र' के माइने ढक देने (अंगरेज़ी-'Cover') भुला देने या माफ़ कर देने के हैं। और यह शब्द ईश्वर के लिए इस्तेमाल किया गया है।

कहीं कहीं .कुरान में .खुद लोगों के मुंह से यह कहलाया गया है कि "जो कुछ तुम (मुहम्मद) कहते हो उसकी तरफ़ से हम 'काफ़िर' हैं यानी हम उसे नहीं मानते।" (३४—३४)।

एक जगह पर उन लोगों को "जो अल्लाह के पैग़म्बरों में से किसी को मानते हैं और किसी को नहीं मानते यानी उनमें

सब तरफ़ अल्लाह है

"पूरब और पच्छिम दोनों अल्लाह के हैं, इसलिए जिधर भी तुम मुँह करो उधर ही अल्लाह का मुँह है, सचमुच अल्लाह .खूब देने वाला और सब कुछ जानने वाला है।" (२-११५)।

पैग़म्बर होने के बाद मुहम्मद साहब १३ बरस मक्के में रहे और उपदेश देते रहे। जब तक वे मक्के में थे तब तक नमाज़ में मुँह करने की कोई .खास दिशा मुक़र्रर न थी। मदीने में पहुंचने के बाद बहुत दिनों तक वह उत्तर की तरफ़, जिधर यहूदियों और ईसाइयों का पाक शहर यरुसलम था, मुँह करके नमाज़ पढ़ाते रहे। क़रीब १६ महीने बाद उन्होंने उत्तर की जगह दक्खिन की तरफ़, जिधर मक्का और काबा था, मुँह करके नमाज़ पढ़ाना शुरू किया। कुछ लोगों ने एतराज़ किया। इस पर .क़ुरान की यह आयत उतरी—

"ना समझ लोग पूछेंगे कि ये लोग जिस तरफ़ मुँह करके नमाज़

फ़रक़ करते हैं" "काफ़ेरून हक़्क़ा" यानी 'सचमुच काफ़िर' कहा गया है। (४—१५०, १५१)।

एक जगह पर .क़ुरान में 'काफ़िर' शब्द किसान के माइनों में भी आया है। (५७—२०)।

.क़ुरान में आमतौर पर 'काफ़िर' शब्द के माइने हैं, वे अरब जो मुहम्मद साहब की बातें मानने से इनकार करते थे, या वे लोग जो अल्लाह की देन यानी बरकतों से इनकार करते थे।

पढ़ा करते थे, उसे इन्होंने क्यों बदल दिया। उनसे कह दो कि पूरब और पच्छिम सब अल्लाह के हैं। वह जिसको चाहता है उसे सीधे रास्ते पर ले चलता है।" (२-१४२)।

"धर्म (नेकी) इसमें नहीं है कि तुमने अपना मुँह नमाज़ के वक्त पूरब की तरफ़ कर लिया या पच्छिम की तरफ़। धर्म यह है कि आदमी अल्लाह को माने, आख़िरत यानी कर्मों के फल को माने, फ़रिश्तों* को माने, सब मज़हबी किताबों और सब नबियों यानी रसूलों को माने, अल्लाह के नाम पर अपने माल और दौलत में से अपने नातेदारों को, यतीमों को, ज़रूरतमन्दों को, रास्ते चलतों को और मांगने वालों को दान दे, और ग़ुलामों को आज़ाद कराने में अपनी दौलत खर्च करे, अल्लाह से दुआ मांगता रहे, ज़कात (अपने कुल माल का कम से कम ४० वां हिस्सा हर साल अल्लाह के नाम पर ख़ैरात) देता रहे, जब कभी किसी से वादा करे तो उसे पूरा करे, और मुसीबतों में, तकलीफ़ में, और सख़्ती के दिनों में सब्र करे—जो लोग ऐसा करते हैं वे ही सच्चे हैं और वे ही मुत्तक़ी या धर्मात्मा हैं।" (२-१७७)।

---

*मलक यानी फ़रिश्तों और शैतान दोनों का क़ुरान में कई जगह ज़िक्र आता है। इन दोनों का कोई कोई अलग होना भी मानते हैं। लेकिन कई जगह क़ुरान में शैतान शब्द साफ़ बुरे आदमियों के माइने में आया है। (२१-८२; २२-३)। क़ुरान की तफ़सीर यानी टीका लिखने वाले कई आलिम मुसलमानों की

राय है कि फरिश्तों से मतलब आदमी के दिल के नेक रुझानों यानी उसकी अच्छी प्रवृत्तियों से और शैतानों से मतलब आदमी के अन्दर की बुरी प्रवृत्तियों से है। मिसाल के तौर पर मशहूर तुर्क विद्वान महमूद मुहतार पाशा लिखता है—

"क़ुरान में फ़रिश्तों से मतलब इन्सानी स्वभाव के आला जज़बों (ऊंचे भावों) और इख़लाक़ी रुझानों से है। ये रुझान असलियत में अल्लाह से हैं, क्यों कि क़ुरान के मुताबिक़ हर तरह की ताक़त ईश्वर ही में है और उसी से पैदा होती है। आदमी के अन्दर जब रूहानी ताक़त जाग जाती है और काम करने लगती है तो फ़रिश्ते भी आदमी को सिजदा करने लगते हैं। इस उपमा का मतलब यह है कि आदमी की रूहानी यानी ऊंचे दरजे की ताक़त के सामने उसके ये सारे नेक रुझान झुक जाते हैं और आदमी जिस तरह चाहता है ये चलने लगते हैं। शैतान की बाबत क़ुरान में कहा गया है कि वह बिना धुंए की आग से पैदा हुआ। इंजील में उसकी मिसाल सांप से दी गई है। यानी शैतान उस मोटी दुनियावी ताक़त का नाम है जो ज़मीन के ऊपर बेलगाम काम करती है। यह आदमी के अन्दर जिस्मानी ख़्वाहिशों की वह आग है जिसमें इन्सान एतक़ाद यानी श्रद्धा और विश्वास की मदद से अपने को आज़ाद न कर सके तो वह आग बिला शुबहा उसे जलाकर ख़त्म कर देगी। जिस फल को खाने से आदमी को रोका गया था वह 'ख़ुदी' बल्कि 'दुई' यानी अपनी अलहदगी का ख़याल है। इन्सान के गुनाहों की जड़ उस दुई में है जो इन्सान को सारी दुनिया की आत्मा के साथ मिलाकर एक कर देने की जगह उसे उससे और दूर ले जाती है।

मदीने के पास एक पहाड़ी जगह क़ुवा है। मक्के से मदीने जाते समय मुहम्मद साहब और उनके साथी कुछ दिन वहाँ ठहरे थे। क़ुवा में थोड़े ही दिनों के अंदर वहाँ के मुसलमानों के नमाज़ पढ़ने के लिए एक छोटी सी मसजिद बन गई। चन्द साल के बाद कुछ मुसलमानों ने उसी शहर में एक दूसरी मसजिद तामीर कर ली। इस दूसरी मसजिद के बनाने वालों ने मुहम्मद साहब से प्रार्थना की कि वे क़ुवा पहुँच कर एक मर्तबा नई मसजिद में नमाज़ पढ़ें और इज्ज़त बख्शें। इस दूसरी मसजिद से शहर के मुसलमानों में फूट पैदा हो जाने का डर था। इसपर क़ुरान में आयत उतरी कि "जिस मसजिद से ईमान वालों में तफ़रीक़ यानी फूट पैदा होती है। उसमें जाकर "खड़ा नहीं होना चाहिए।" मुहम्मद साहब ने वहाँ जाने से इनकार कर दिया और उनके हुक्म से क़ुवा की वह दूसरी मसजिद गिरवा दी गई। *

इस तरह फ़रिश्ते और शैतान इन्सान के अन्दर की वे दो ताक़तें हैं जिनमें से एक उसकी दोस्त और दूसरी उसकी दुश्मन है। इनमें से इन्सान को एक में यक़ीन करना चाहिये और दूसरी से बचने के लिए अल्लाह की मदद और उसकी पनाह लेनी चाहिए।" क़ुरान (सूरा ११४)। —The Wisdom of the Quran, by Mahmud Muhtar Pasha, Introduction, pp. 39. to 41.

*बहुरुलमुहीत—इमाम असीरुद्दीन अबु हय्यान
क़ुरान—९-१०७, १०८

"हरेक की अपनी अपनी दिशा है जिस तरफ़ वे इबादत के वक़्त अपना मुँह कर लेते हैं। इसलिए इस बहस में न पड़ कर भलाई के कामों में एक दूसरे से बढ़ने की कोशिश करो। तुम कहीं भी होगे अल्लाह तुम सब को मिला देगा। सचमुच अल्लाह सब चीज़ों पर क़ादिर यानी समर्थ है।" (२-१४८)।

मुहम्मद साहब और करामात

"कह दो कि मैं (मुहम्मद) कोई 'अनोखा रसूल नहीं हूँ, [यानी मैं कोई ऐसी बात नहीं सिखाता जो मुझसे पहले के रसूलों और पैग़म्बरों ने न सिखाई हो, न मैं कोई ऐसा काम कर सकता हूँ जो वे न कर सकते थे, न कोई मोजज़ा या करामात दिखा सकता हूँ —अल-बैज़ावी], न मुझे यह मालूम है कि मेरे साथ क्या होने वाला है या तुम्हारे साथ क्या होने वाला है। मैं सिर्फ़ उसी पर अमल करता हूँ जो अल्लाह मुझे हुक्म देता है। मैं इसके सिवाय और कुछ नहीं कि लोगों को बुरे कामों के नतीजे से आगाह करूँ'।" (४६-९)।

"और मुहम्मद सिवाय एक रसूल के और कुछ नहीं है, उससे पहले के रसूल भी मरते आए हैं, इसलिए अगर मुहम्मद मर जाय या मार डाला जाय तो क्या तुम लोग (अपने धरम से) फिर जाओगे?" (३-१४३)।

हज़रत मुहम्मद के मरने के बाद हज़रत अबु बक्र ने लोगों को यही आयत पढ़कर सुनाई थी।

"कह दो कि मैं (मुहम्मद) तुम (लोगों) से यह नहीं कहता कि

मेरे पास अल्लाह के ख़ज़ाने हैं, न मुझे ग़ैब का इल्म है और न मैं कहता हूँ कि मैं फ़रिश्ता हूं, मैं सिर्फ़ उसी पर चलता हूँ जो ईश्वर ने मेरे घट में बैठा दिया है।" (६-५०; ११-३१)।

"ये लोग ज़ोरों के साथ अल्लाह की क़समें खाते हैं कि अगर उन्हें कोई करामात दिखा दी जाय तो वे ज़रूर मान लेंगे। कह दो कि करामात सिर्फ़ अल्लाह ही कर सकता है।" (६-११०)।

"लोग कहते हैं कि हम उस वक़्त तक तुम्हारी बात नहीं मानेंगे जब तक कि तुम हमारे लिए ज़मीन से पानी का एक चश्मा फोड़कर न दिखादो, या खजूरों और अंगूरों का एक बाग़ न खड़ा कर दो जिसके बीच से ख़ुद-ब-ख़ुद फूट कर दरिया बह रहे हों, या अपने ख़याल से आसमान के टुकड़े टुकड़े करके हमारे ऊपर न गिरा दो, या अल्लाह और फ़रिश्तों को हमारी आंखों के सामने लाकर खड़ा न करदो, या अपने लिए एक सोने का मकान खड़ा न कर लो, या आसमान में न चढ़ जाओ और वहां से एक ऐसी किताब न ले आओ जिसे हम पढ़ सकें। इनसे कह दो कि मेरे रब्ब को याद करो, मैं सिर्फ़ एक इनसान और एक रसूल हूँ, इसके सिवाय और कुछ नहीं।" (१७-९० से ९३)।

"लोग कहते हैं कि मुहम्मद के रब्ब की तरफ़ से उसे करामात दिखाने को क्यों नहीं मिलती? उनसे कह दो कि करामात सिर्फ़ अल्लाह के पास हैं, मैं तो सिर्फ़ एक सीधा सादा बुरे कामों के नतीजे से आगाह करने वाला हूँ।" (२९-५०)।

"इसमें क्या अजीब बात है कि तुम्हारे रब्ब ने तुम्हीं में से एक आदमी के ज़रिये तुम्हें दीन की याद दिलादी, ताकि वह आदमी तुम्हें होशियार कर दे, और तुम बुराई से बचे रहो, और अल्लाह तुम पर दया करे।" (७-६३.६९)।

"लोगों से कह दो कि—मैं (मुहम्मद) ख़ुद अपने आपको भी न कुछ फ़ायदा पहुँचा सकता हूँ और न नुक़सान सिवाय उसके कि जो अल्लाह चाहता है। अगर मुझे ग़ैब का इल्म होता तो मेरे पास बहुत सी अच्छी ही अच्छी चीज़ें होतीं और बुराई कोई मुझे छू भी न सकती, लेकिन मैं सिवाय इसके और कुछ नहीं हूं कि लोगों को बुरे कामों से आगाह कर दूं और जो भी बात मान लें उन्हें भलाई की ख़बर दे दूं।" (७-१८८;१०-४९)।

"कह दो कि ग़ैब का इल्म सिर्फ़ अल्लाह को है, इसलिए इन्तज़ार करो, मैं भी तुम्हारी ही तरह इन्तज़ार करने वालों में हूँ।" (१०-२०)।

"मैं सिर्फ़ तुम्हारी ही तरह एक आदमी हूँ, हां! अल्लाह ने मुझे यह ज्ञान दिया है कि तुम्हारा अल्लाह एक ही अल्लाह है, इस लिए जो कोई अपने रब्ब से मिलने की उम्मीद करता है उसे चाहिये कि नेक काम करे और सिवाय एक रब्ब के दूसरे किसी की पूजा न करे।" (१८-११०)।

"मैं सिर्फ़ तुम्हारी ही तरह एक इनसान हूँ। अल्लाह ने मुझे यह ज्ञान दिया है कि तुम्हारा सब का अल्लाह एक ही अल्लाह है। इसलिए नेकी के रास्ते पर चलो, वही अल्लाह का रास्ता है। उसी अल्लाह से माफ़ी चाहो।" (४१-६)।

"मुझे सिवाय इसके और कुछ वही (ईश्वर प्रेरणा) नहीं हुई कि मैं लोगों को बुराई से आगाह कर दूं।" (३८-७०)।

जंग की इजाज़त

इसलाम धर्म का उपदेश शुरू करने के बाद से मुहम्मद साहब के पहले १३ साल मक्के के अन्दर बड़ी मुसीबतों में कटे, जिसमें मक्के वालों ने उन्हें और उनके साथियों को सख्त से सख्त तकलीफ़ें पहुंचाईं। उन तेरह बरस के अन्दर इस बारे में जितनी आयतें क़ुरान में उतरीं उन सब में बुराई का बदला भलाई से देने और सब्र और सच्चाई के साथ, दूसरों के सब ज़ुल्म बर्दाश्त कर लेने की हिदायत दी गई है। इसके बाद मुहम्मद साहब अपने कुछ साथियों को लेकर मदीने पहुंचे। मक्के वालों ने वहां पर भी चढ़ाई करके उन पर हमले शुरू किये। इस पर पहली मर्तबा क़ुरान की नीचे लिखी आयतों में मुहम्मद साहब और उनके साथियों को हमला करने वालों से अपने बचाव के लिये जंग करने की इजाज़त दी गई—

"जिन लोगों पर जंग के लिए चढ़ाई की जा रही है, उन्हें जंग की इजाज़त दी जाती है, क्योंकि उन पर यह ज़ुल्म है, और इसमें कोई शक नहीं कि अल्लाह उनकी मदद के लिए काफ़ी है।

"यह इजाज़त उन लोगों को है जिन्हें नाहक़ (इन्साफ़ के ख़िलाफ़) उनके घरों से निकाल दिया गया है, सिर्फ़ इसलिए कि वे कहते हैं—'अल्लाह हमारा रब्ब है।' और अगर अल्लाह इस तरह

कुछ लोगों को कुछ लोगों से न हटवाता तो इसमें कोई शक नहीं कि साधुओं के मठ, ईसाइयों के गिरजे, यहूदियों के इबादतख़ाने और वे सब धर्म के स्थान जहाँ लोग अल्लाह के सामने सिजदा करते हैं और अल्लाह का नाम कसरत से लेते हैं, गिरा दिये जाते। इसमें शक नहीं जो कोई अल्लाह के मामले में मदद करेगा अल्लाह उसकी मदद करेगा। सचमुच अल्लाह बलवान और बड़ा है।

"यह (इजाज़त) उनके लिए है, जिन्हें अगर अल्लाह धरती पर क़ायम करदे, तो वे अल्लाह से दुआ मांगते रहेंगे, ग़रीबों को दान देते रहेंगे, और सब को भले कामों के करने और बुरे कामों से बचने की सलाह देते रहेंगे। सब कामों का नतीजा आख़ीर में अल्लाह के हाथ में है।" (२२-३९ से ४१)।

इस इजाज़त के मिल जाने पर भी मालूम होता है उन मुसलमानों का दिल लड़ाई के लिए पूरी तरह तय्यार न होता था जिन पर चढ़ाई करने वाली फ़ौज में उनके अपने भाई, चचा, ताया, मामा और दूसरे नज़दीक से नज़दीक के रिश्तेदार शामिल थे। इस पर नीचे की आयतें उतरीं—

"तुम्हें जंग की इजाज़त दे दी गई है, और तुम्हें यह अच्छा नहीं लगता। मुमकिन है कि जो चीज़ तुम्हें अच्छी नहीं लगती वह तुम्हारे भले की हो, और जो चीज़ तुम्हें अच्छी लगती है वह तुम्हारे लिए बुरी हो। अल्लाह सब जानता है, तुम नहीं जानते।" (२-२१६)।

"अल्लाह की राह में वे लोग लड़ें जो इस दुनिया की ज़िन्दगी के मुक़ाबले में आख़िरत यानी परलोक की ज़्यादह क़द्र करते हैं।

और जो कोई अल्लाह की राह में लड़ता है वह चाहे मारा जाय और चाहे जीते अल्लाह से उसे बहुत बड़ा फल मिलेगा।*

"और क्या वजह है कि तुम अल्लाह की राह में, उन कमज़ोरों, औरतों और बच्चों की हिफ़ाज़त के लिए नहीं लड़ते जो यह कह रहे हैं कि ऐ हमारे रब्ब ! हमें इस शहर (मक्के) से निकाल कर जिसके लोग हम पर ज़ुल्म करते हैं, और कोई बचाने वाला और हमारी मदद करने वाला भेज।

"जो लोग ईमान वाले हैं वह अल्लाह की राह में लड़ते हैं, और जो ईमान वाले नहीं हैं वे सरकशों यानी ज़ुल्म करने वालों की तरफ़ से लड़ते हैं। ज़ुल्म करने वाले शैतान के दोस्त हैं, इसलिए शैतान के दोस्तों के ख़िलाफ़ लड़ो। सचमुच शैतान का पक्षा भारी नहीं है।" (४-७४ से ७६)।

"इसलिए अल्लाह की राह में लड़ो, इस मामले में तुम्हारी ज़िम्मेवारी सिर्फ़ तुम्हारे अपने तक है, और दूसरे ईमान वालों के यानी अपने साथियों को हौसला दो। मुमकिन है कि अल्लाह तुम्हारे दुश्मनों का, जो ईश्वर की निश्रामतों यानी उसकी दया और देन से नाशुक्रे हैं, लड़ने से हाथ रोक दे। अल्लाह ही सब से ज़्यादा ताक़तवर और सज़ा देने में भी सब से ज़्यादह बलवान है।

"जो कोई किसी अच्छे काम में किसी का साथ देता है उसे उसका हिस्सा मिलता है, और जो कोई किसी बुरे काम में किसी का

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्—गीता

साथ देता है उस पर उस काम की ज़िम्मेवारी आ जाती है, और अल्लाह सब चीज़ों को देखता है।

"और जब कभी (तुम्हारे दुशमनों में से) कोई तुम्हें दुआ दे (या सलाम करे) तो तुम उसे उससे भी बढ़कर दुआ दो, और उसे सलाम करो। सचमुच अल्लाह सब चीज़ों का हिसाब रखता है।" (४-८४ से ८६)।

"और अगर उनमें से कोई किसी ऐसे गिरोह के पास पहुंच जावे जिससे तुम्हारा मेल है, या तुम्हारे पास आवे, या उनके दिल तुम्हारे साथ लड़ने यानी अपनी ही क़ौम वालों से लड़ने से झिझकें, ...या वे हट जावें, और तुम से न लड़ें, या सुलह करना चाहें, तो फिर अल्लाह तुम्हें उनसे लड़ने की इजाज़त नहीं देता।" (४-९०)।

"ऐ ईमान वालो! जब कभी तुम अल्लाह की राह में लड़ने जाओ, तो देख भाल लो, अगर कोई तुमसे सुलह करना चाहे तो उससे यह न कहो कि 'तुम मुसलमान नहीं हो* (इसलिए तुमसे हमारी सुलह नहीं हो सकती)' क्या तुम दुनिया का माल असबाब चाहते

---

* क़ुरान में इस बात पर भी बराबर ज़ोर दिया गया है कि अगर मुसलमानों और ग़ैर मुसलमानों में कोई समझौता या मुआहिदा हो जावे और वह समझौता किसी दूसरे मुसलमान के ख़िलाफ़ जाता हो तब भी सुलह करने वाले मुसलमानों का फ़र्ज़ है कि सचाई से उस समझौते पर अमल करें। (६८-७२;६-१,४,७ वग़ैरह)।

हो ? लेकिन अल्लाह के पास (उस दुनिया में) इनसे ज़्यादह काम की चीज़ें हैं। पहले तुम भी इन्हीं लोगों की तरह थे, फिर अल्लाह ने तुम पर रहम किया। इसलिए देख भाल लो। सचमुच जो कुछ तुम करते हो अल्लाह सब जानता है। (४-९४)।"

"जो लोग तुम से जंग करते हैं, और अल्लाह की निश्रामतों का शुक्र नहीं करते, उनसे कह दो कि अगर वे लड़ना बन्द कर दें तो अब तक जो कुछ उन्होंने किया है सब माफ़ कर दिया जावेगा। और अगर वे फिर लड़ना शुरू कर देंगे तो जो पिछलों के साथ हो चुका है वही होगा।

"और उनके साथ उस वक़्त तक लड़ो जब तक कि 'फ़ितना' यानी झगड़ा बन्द न हो जावे और दीन का मामला अल्लाह ही के हाथ में रहे, (यानी धर्म के मामले में कोई किसी के साथ ज़बर्दस्ती न करे) लेकिन अगर वे अपनी तरफ़ से लड़ना बन्द कर दें तो, सचमुच जो कुछ वह करते हैं अल्लाह देखता है।

"और अगर वे फिर लड़ने लगें, तो अल्लाह तुम्हारा मददगार है और वह बहुत बड़ा और काफ़ी मददगार है।" (८-३८ से ४०)।

"और अगर वे सुलह की तरफ़ झुकें तो तुम भी सुलह की तरफ़ झुको और अल्लाह पर भरोसा करो। सचमुच वह सब सुनता और जानता है।

'और फिर अगर वे तुम्हें धोखा देना चाहेंगे तो तुम्हारे लिए अल्लाह काफ़ी है। उसी ने अपनी मदद से तुम्हें (मुहम्मद को)

बल पहुँचाया था। उसी ने इतने आदमी तुम्हारी बात मानने वाले पैदा किये।

"उसी अल्लाह ने इन सब लोगों के दिलों को मिलाया[1] अगर तुम (मुहम्मद) दुनिया का सारा माल भी ख़र्च कर डालते तो तुम इन सब के दिलों को एक न कर सकते। लेकिन अल्लाह ने इन्हें मिला कर एक कर दिया। सचमुच अल्लाह बड़ा और सब कुछ जानने वाला है।

"ऐ नबी! अल्लाह तुम्हारे लिए और उन सब ईमान वालों के लिए, जो तुम्हारे कहने पर चलते हैं, काफ़ी है।" (८-६१ से ६४)।

"ऐ ईमान वालो! जो लोग अल्लाह की निअमतों से 'कुफ़्र' करते हैं यानी शुक्रगुज़ार नहीं हैं वे जब सामने से तुम से लड़ने के लिए आवें, तो तुम पीठ मत मोड़ो।

"और जब तुमने उन्हें मारा तो तुमने नहीं मारा, अल्लाह ने मारा और जब तुमने हथियार चलाया तो तुमने नहीं चलाया अल्लाह ने चलाया।[2] (८-१५,१७)।

---

[1] इशारा इसलाम से पहले की अरब की उस आपसी फूट की तरफ़ है, जिसमें हज़ारों क़बीले क़रीब क़रीब सब एक दूसरे के ख़ून के प्यासे थे।

[2] *मयैवेते निहताः पूर्वमेव*
निमित्तमात्रम् भव सव्य साचिन् (गीता)

यानी मैंने (ईश्वर ने) पहले ही से इन्हें मार रखा है। तू सिर्फ़ एक बायें हाथ का बहाना बन जा—गीता

"और जो लोग तुम से लड़ें उनसे तुम भी अल्लाह की राह में लड़ो, लेकिन (इन्साफ़ की) हद से न बढ़ो, सचमुच अल्लाह उन्हें प्यार नहीं करता जो हद से बढ़ते हैं।

"जहां कहीं उनसे सामना हो लड़ो, और तुम्हारे जिन घरों से उन्होंने तुम्हें निकाल दिया है उनसे तुम उन्हें निकाल दो। फ़ितना फ़िसाद करना (जो वे करते हैं) लड़ने से ज़्यादह बुरा है, और काबे के अन्दर जब तक वे तुम से न लड़ें तुम उनसे न लड़ो। लेकिन वे लड़ें तो लड़ो। जो लोग अल्लाह की निश्रामतों की तरफ़ से नाशुकरे हैं उनका यही बदला है।

"लेकिन अगर वे अपनी तरफ़ से लड़ने से रुक जावें तो सचमुच अल्लाह माफ़ कर देने वाला और दयावान है।

"उनसे उस वक़्त तक लड़ो जब तक कि उनका उठाया हुआ फ़ितना बन्द न हो जावे, और धर्म का मामला अल्लाह ही के हाथ में न रह जावे (यानी धर्म के मामले में कोई किसी के साथ ज़बर्दस्ती न करे, अल्लाह जो चाहे करे) लेकिन अगर वे बीच में लड़ना रोक दें तो तुम्हें सिवाय उन लोगों के जो तुम पर ज़ुल्म करना जारी रखें फिर किसी से दुशमनी जारी रखना नहीं चाहिये।

"पाक महीना पाक महीने के लिए है, और सब पाक चीज़ों में बदले की इजाज़त है। इसलिए जो कोई पहले तुम पर हमला करे वह जितना नुक़सान तुम्हें पहुंचावे उतना ही तुम उसे पहुँचा सकते हो। और अल्लाह से डरो। समझ लो कि अल्लाह उन्हीं के साथ है जो बुराई से बचते हैं।

"और अल्लाह की राह में ख़र्च करो। और अपने ही हाथों से अपने को नाश मत करो। और दूसरों का भला करो। सचमुच अल्लाह उन्हें ही प्यार करता है जो सब का भला करते हैं और सब पर अहसान करते हैं।" (२-१९० से १९५)।

"और अगर मुसलमानों में से भी दो गिरोह आपस में लड़ने लगें, तो उनमें सुलह करा दो, लेकिन अगर उनमें से एक गिरोह दूसरे गिरोह के साथ ज़्यादती करता रहे तो जो गिरोह ज़्यादती करता है उससे लड़ो, जब तक कि वह अल्लाह के हुक्म को फिर से न मानने लगे। फिर अगर वह मान जाय तो दोनों में इनसाफ़ के साथ सुलह करा दो। और इनसाफ़ से काम लो। सचमुच अल्लाह उन्हें ही प्यार करता है जो इन्साफ़ से काम करते हैं।" (४९-९)।

ग़ैर मुसलमानों और मुसलमानों दोनों के साथ क़ुरान में ये ही जंग की इजाज़त की आयतें हैं।

इसलाम से पहले अरब और आस पास के मुल्कों में दुशमन के जो आदमी जंग में क़ैद कर लिए जाते थे उन्हें आमतौर पर या तो मार डाला जाता था और या ग़ुलाम बना लिया जाता था। क़ुरान ने इस रिवाज को बदल कर आगे के लिए हुकुम दिया—

"जंग में जो लोग पकड़े जावें उन्हें या तो उसी वक़्त जंग ख़तम होने से भी पहले दुशमन पर एक अहसान के तौर पर आज़ाद कर दिया जावे और या कम से कम हर आदमी के बदले में कुछ हरजाना लेकर उन्हें छोड़ दिया जावे।" (४७-४)।

जंग खतम होने के बाद किसी क़ैदी को अपने पास रोकने की इजाज़त नहीं थी।

"यह हुकुम इसलिए है कि अगर अल्लाह चाहता तो उनसे बदला ले सकता था लेकिन वह यही चाहता है कि कुछ आदमियों से दूसरे आदमियों पर अहसान करावे। और जो अल्लाह की राह में मारे जावेंगे अल्लाह उनके कामों को ज़ाया नहीं होने देगा। वह उन्हें सच्चे रास्ते पर ले आएगा और उनकी हालत को सुधार देगा।" (४७-४,५)।

इसी उसूल पर चलकर मुहम्मद साहब आमतौर पर लड़ाइयों में पकड़े हुए क़ैदियों को बिना कुछ भी मुआवज़ा या हरजाना लिए बतौर अहसान के आज़ाद कर देते थे, और कहीं कहीं कुछ हरजाना लेकर छोड़ देते थे। बद्र की मशहूर लड़ाई में उन्होंने सत्तर क़ैदियों को कुछ लेकर छोड़ दिया था। कुछ क़ैदियों से जो पढ़े लिखे और ग़रीब थे यह कहा कि इनमें से हर एक मदीने के दस दस आदमियों को लिखना पढ़ना सिखा कर अपने घर लौट जावे। एक और मर्तबा उन्होंने बनी मुस्तलिक़ क़बीले के सौ खानदानों को बिना कुछ लिए और एक दूसरी बार हवाज़िन क़बीले के छै हज़ार क़ैदियों को बिना कुछ लिये सिर्फ़ बतौर अहसान के छोड़ दिया था।

ग़ुलामी के पुराने रिवाज को यानी इनसानों के बेचे जाने के रिवाज को भी इससे बहुत बड़ा धक्का पहुँचा।

धरम फैलाने का तरीक़ा

"और ऐ मुहम्मद ! जब तुम लोगों को ठीक रास्ते पर चलने के लिए बुलाते हो और वे नहीं सुनते, तुम्हें दिखाई देता है कि वे तुम्हारी तरफ़ देख रहे हैं, लेकिन वे नहीं देखते, तो

"उन्हें माफ़ कर दो, और नेक काम करने को कहो, फिर जो नहीं समझते उनसे हट जाओ,

"और अगर शैतान तुम्हें ग़ुस्सा दिलाने लगे तो अल्लाह की पनाह लो, सचमुच अल्लाह सब सुनता और जानता है,

"जो लोग, जब जब शैतान उनके अन्दर ग़ुस्सा या बदला लेने की गुदगुदी पैदा करता है, तब तब बुराई से बचते हैं, और ख़याल रखते हैं, वही सचमुच देख सकते हैं।" (७-१९८ से २०१)।

"और अगर, जंग के दिनों में भी उन लोगों में से जो एक अल्लाह के साथ दूसरों को जोड़ते हैं, कोई तुम्हारी पनाह में आना चाहे, तो उसे अपने पास बुला लो, और उसे अल्लाह की बातें सुनाओ, फिर भी अगर वह न माने, तो उसे उसकी किसी हिफ़ाज़त की जगह तक पहुंचा दो, क्योंकि वे लोग नादान हैं।" (९-६)।

"और अगर वे तुम्हें (मुहम्मद को) झूठा कहें तो कह दो— 'तुम्हें तुम्हारे कामों का फल मिलेगा और मुझे मेरे कामों का, न तुम मेरे कामों के लिए ज़िम्मेदार हो और न मैं तुम्हारे कामों के लिए'।" १०-४१)।

"क्या तुम उन्हें सुना सकते हो जो बहरे हैं, या जो सुनना नहीं चाहते ?

"क्या तुम उन्हें रास्ता दिखा सकते हो जो अन्धे हैं, या जो देखना नहीं चाहते ?

"सचमुच अल्लाह इन्सानों पर किसी तरह का ज़ुल्म नहीं करता, आदमी अपने ऊपर ख़ुद ज़ुल्म करते हैं।" (१०-४२ से ४४)।

"लोगों को होशियारी के साथ और मीठे शब्दों में समझाकर अपने रब्ब के रास्ते पर चलने के लिए कहो। और उनसे बहस करो तो मिठास के साथ करो। सचमुच जो लोग अल्लाह की राह से भटके हुए है, उन्हें और जो ठीक रास्ते पर हैं उन्हें, तुम्हारा रब्ब सब को अच्छी तरह जानता है।

"और अगर तुम उनकी किसी कड़ी बात का जवाब दो तो ज़्यादह से ज़्यादह उसी तरह के शब्दों में दो जिस तरह के उन्होंने कहे हों, लेकिन अगर तुम (उनके कड़े शब्दों को भी) सब्र के साथ बरदाश्त कर जाओ तो सचमुच सब्र करने वालों के लिए सब से अच्छा फल है।

"इसलिए सब्र ही करो और तुम अल्लाह की मदद से ही सब्र कर सकते हो, और न उनके लिए रंज करो, और न वे जो तरकीबें (तुम्हारे ख़िलाफ़) सोचते हैं उन पर अपने को दुखी करो।

"सचमुच अल्लाह उनके साथ है जो बुराई से बचते हैं और जो दूसरों के साथ नेकी करते हैं।" (१६-१२५ से १२८)।

नेकी यानी सदाचार

"और तुम्हारे रब्ब का हुक्म है कि तुम सिवाय उसके किसी

दूसरे की पूजा न करो, और अपने माँ-बाप के साथ नेकी का बर्ताव करो। अगर उनमें से कोई एक या दोनों बूढ़े हो जावें तो उन्हें "उफ़" तक मत कहो, और न कोई कड़ी बात कहो, उनसे जब बात करो तो मुहब्बत और नरमी से करो, उनसे दब कर रहो, उन पर दया रक्खो और अल्लाह से यह दुआ मांगो—'ऐ अल्लाह! इन पर अपनी दया कर, इन्होंने मुझे छोटे से बड़ा किया है'।

"तुम्हारा रब्ब अच्छी तरह जानता है कि तुम्हारे मन में क्या है, अगर तुम नेकी करोगे तो सचमुच वह उन लोगों के (पिछले) क़ुसूर माफ़ कर देता है जो उसकी तरफ़ मुड़ते हैं।

"अपने नातेदारों का हक़ अदा करो, ग़रीबों, ज़रूरतमन्दों और परदेसियों को दान दो, और अपने माल को फ़ुज़ूल मत खोओ।"
(१७-२३ से २६)।

"और ग़रीबी के डर से अपनी औलाद को मत मारो। अल्लाह उन्हें और तुम्हें दोनों को खाना पहुंचाता है। सचमुच अपनी औलाद को मार डालना बहुत बड़ा पाप है।

"ज़िना यानी बदचलनी के नज़दीक मत जाओ, सचमुच यह बड़ी गन्दी बात है और बड़ा बुरा रास्ता है।

"किसी यतीम के माल के नज़दीक भी मत जाओ, सिवाय इसके कि वह नाबालिग़ हो और तुम उसकी भलाई के लिए उसके माल की हिफ़ाज़त करना या उसे बढ़ाना चाहते हो, अपने वादों को हमेशा पूरा करो, सचमुच हर वादे की बाबत तुम से सवाल किया जायगा कि तुमने उसे पूरा किया या नहीं।

"जब किसी को कोई चीज़ नाप कर दो तो ठीक ठीक और पूरी नाप कर दो, और जब कोई चीज़ तोलो तो सच्ची तराज़ू और ठीक ठीक बाँटों से तोलो, यही नेकी है और इसी में आख़ीर में तुम्हारा भला है।

"जिस बात को तुम नहीं जानते उसके पीछे मत पड़ो, किसी पर ऐसा इलज़ाम मत लगाओ जिसे तुम नहीं जानते, सचमुच तुम्हारे कामों, तुम्हारी आँखों और तुम्हारे दिल, इन सब से सवाल किये जावेंगे कि इनमें से किस किस ने क्या क्या नेकी की और क्या क्या बदी की।

"इस दुनिया में अकड़ कर मत चलो, क्योंकि न तुम ज़मीन को फाड़ सकते हो और न पहाड़ जितने ऊंचे हो सकते हो। यह सब बुरी बात है और अल्लाह की नज़रों में गुनाह है। यही वह नेक सलाह है जो अल्लाह ने तुम्हारे भले के लिए तुम पर उतारी है। (१७-३१,३२,३४ से ३९)।

"सिवाय आदमी के क़त्ल के गुनाह के या धरती पर फ़साद खड़ा करने के गुनाह के और किसी भी वजह से जो कोई भी किसी एक आदमी की जान लेगा वह सब इन्सानों के क़त्ल का गुनहगार होगा, और जो कोई किसी एक की जान बचावेगा उसने मानो सब की जान बचाई।" (५-३२)।

"लोगों से कहो कि आओ, मैं तुम्हें बताऊं कि अल्लाह ने तुम्हें किन किन चीज़ों से मना किया है—अल्लाह के साथ किसी दूसरे को शरीक मत करो, अपने माँ-बाप की सेवा करो, ग़रीबी के डर से

अपनी औलाद को मत मारो, ईश्वर तुम्हें और उन्हें दोनों को रोज़ी देता है, ज़िना यानी बदचलनी के नज़दीक मत जाओ चाहे खुली बदचलनी हो और चाहे ख़याल या मन की बदचलनी हो, ज़ाहिरा हो और चाहे छिपी हुई हो, और सिवाय इन्साफ़ की ज़रूरतों के किसी की जान मत लो, यह सब अल्लाह के हुकुम हैं ताकि तुम समझो।

"और किसी (अनाथ) के माल को हाथ मत लगाओ, सिवाय इसके कि तुम उसकी भलाई के लिये, जब तक कि वह बालिग़ न हो, उसके माल की देख भाल करना चाहते हो, जो चीज़ नापो पूरी पूरी नापो और जो तोलो ठीक ठीक तोलो। ईश्वर ने किसी आदमी के सुपुर्द कोई ऐसा काम नहीं किया जिसे वह पूरा न कर सके। और जब बोलो सच बोलो चाहे वह बात तुम्हारे किसी रिश्तेदार ही के ख़िलाफ़ क्यों न हो और अल्लाह का हुकुम मानो, यही उसका हुकुम है, इसका ख़याल रक्खो।

"यही अल्लाह का बताया हुआ रास्ता है, यही 'सिराते मुस्तक़ीम' यानी सीधा रास्ता है, इसी पर चलो, इसके ख़िलाफ़ दूसरे दूसरे रास्तों पर मत चलो, क्योंकि वे तुम्हें अल्लाह से दूर ले जायंगे, यही अल्लाह का हुकुम है, ताकि तुम बुराई से बच सको।" (६-१५२ से १५४)।

"सचाई को झूठ से मत ढको, और न जो बात तुम्हें सच सच मालूम हो उसे छिपाओ।

"अल्लाह से दुआ मांगते रहो, ग़रीबों को दान देते रहो, अल्लाह के सामने झुकने वालों के साथ झुको।

"क्या तुम दूसरों को नेकी की तालीम दोगे, क़ुरान पढ़ोगे और ख़ुद अपनी आत्माओं के साथ यानी अपने नफ़्स के साथ ज़ुल्म करोगे, क्या तुम्हें समझ नहीं है?

"सब्र और दुआ के ज़रिये अल्लाह से मदद मांगो। सचमुच सिवाय उन लोगों के जो दुनिया में दीनता और नरमी से चलें और यह समझें कि उन्हें अल्लाह के पास लौट कर जाना है, औरों के लिए बड़ी मुशकिल होगी।" (२-४२ से ४६)।

"बेइन्साफ़ी से एक दूसरे का माल मत लो, कचहरियों में अपनी दौलत के ज़रिये हाकिम के पास इस ग़रज़ से पहुँचने की कोशिश मत करो कि तुम जान बूझ कर बेइन्साफ़ी से दूसरे के माल का कोई हिस्सा ले लो।" (२-१८८)।

"अल्लाह के रास्ते में अपनी दौलत ख़र्च करो, अपने हाथ से अपने को बरबाद न करो, और दूसरों की भलाई करो, सचमुच अल्लाह उन्हीं को प्यार करता है जो दूसरों पर अहसान करते हैं।" (२-१९५)।

"लोग तुमसे नशे की चीज़ों की बाबत और तरह तरह के जुए की बाबत पूछेंगे। उनसे कह दो कि यह दोनों चीज़ें बड़े गुनाह की हैं, कुछ लोगों को इनसे फ़ायदा भी होता है, लेकिन गुनाह फ़ायदे से कहीं ज़्यादह है।" (२-२१९)।

"ऐ ईमान वालो! शराब और दूसरी नशे की चीज़ों से बचो ताकि तुम्हारा भला हो। शैतान नशे की चीज़ों और जुए के ज़रिये तुम में फूट डालना और एक दूसरे से नफ़रत पैदा करना चाहता है, और अल्लाह की याद से और अल्लाह से दुआ मांगने से दूर रखना चाहता है, इसलिये इनसे बचो।" (५-९०,९१)।

"दूसरों से मिठास से बोलना और उनकी ग़लतियों को माफ़ कर देना ज़्यादह अच्छा है। यह अच्छा नहीं है कि तुम किसी को दान दो और फिर उसे तकलीफ़ पहुँचाओ अल्लाह सब के लिए बस है और रहमदिल है। ऐ ईमान वालो, जिसको दान दो उसकी बुराई करके या उसे तकलीफ़ पहुँचा कर अपने दान को निकम्मा न कर दो, उस आदमी की तरह जो दूसरों को दिखाने के लिये ख़र्च करता यानी दान देता है और अल्लाह पर या अपने कर्मों के फल पर यक़ीन नहीं रखता।" (२-२६३,२६४)।

"नाजायज़ कमाई की तरफ़ इस ख़याल से निगाह मत डालो, कि फिर तुम उसमें से दान दे सकोगे।" (२०-२६७)।

"अगर तुम खुले तौर पर दान दो तो अच्छा है, लेकिन अगर तुम छिपा कर ग़रीबों को दान दो तो यह तुम्हारे लिये ज़्यादह अच्छा है, इससे तुम्हारे कुछ न कुछ बुरे काम कटेंगे, जो कुछ तुम करते हो अल्लाह जानता है।" (२-२७१)।

"अल्लाह सूद खाने वाले को बरकत नहीं देता।" (२-२७६)।

"ऐ ईमान वालो, सूद मत खाओ, दौलत पर दौलत मत बढ़ाते

जाओ। अल्लाह के हुक़ुम का ख़याल रक्खो, ताकि तुम्हारा भला हो।" (३-१२९)।

"किसी से डाह यानी हसद करना बुरी चीज़ है, अल्लाह तुम्हें उससे बचावे।" (११३-५)।

"तुम किसी तरह भी नेक नहीं हो सकते जब तक कि तुम उन चीज़ों में से खुले दिल से दान न दो, जो तुम्हें प्यारी हैं। जो कुछ तुम दान देते हो सचमुच अल्लाह सब जानता है।" (३-९१)।

"अमीरी में और ग़रीबी में, दोनों में, खुले दिल से दान दो, अपने ग़ुस्से को क़ाबू में रक्खो, और दूसरों के क़ुसूरों को माफ़ कर दो। अल्लाह उन्हीं को प्यार करता है जो दूसरों के साथ नेकी करते हैं।" (३-१३३)।

"जो लोग बेइन्साफ़ी से अनाथों का माल खा जाते हैं, वे सच-मुच अपने पेट में आग डालते हैं और जलती हुई आग में ही उन्हें पड़ना पड़ेगा।" (४-१०)।

"अल्लाह चाहता है कि तुम पर दया करे, लेकिन अगर तुम अपनी 'शहवतों' वासनाओं के पीछे चलोगे तो तुम्हारा मुँह अल्लाह से फिरा रहेगा।" (४-२७)।

"अल्लाह ने किसी को तुमसे ज़्यादह माल दिया है तो तुम उसके माल का लालच मत करो, हर आदमी और हर औरत को उसकी ईमानदारी की कमाई ज़रूर मिलेगी, अल्लाह से दुआ करो कि वह तुम पर दया करे, सचमुच अल्लाह सब चीज़ों को जानता है।" (४-३२)।

"अल्लाह की इबादत करो, उसके साथ किसी दूसरे को मत जोड़ो अपने माँ बाप के साथ, अपने रिश्तेदारों के साथ, यतीमों के साथ, ग़रीबों के साथ, अपने रिश्तेदार पड़ौसी के साथ, अपने ग़ैर रिश्तेदार पड़ोसी के साथ, सफ़र में जिसका भी साथ हो जाय उसके साथ, राह चलतों के साथ, और जो तुम्हारे मातहत हैं उनके साथ, सब के साथ, नेकी करो और नरमी से बरतो, सचमुच अल्लाह घमण्ड करने वालों और अपनी बड़ाई हाँकने वालों को पसन्द नहीं करता।" (४-३६)।

"ऐ ईमान वालो! हमेशा इन्साफ़ पर रहो, और सच्ची गवाही दो, चाहे तुम्हारे अपने ख़िलाफ़ हो, या तुम्हारे क़रीबी रिश्तेदारों के, और न इसमें अमीर या ग़रीब का कोई ख़याल करो।" (४-१३५)।

"ऐ ईमान वालो! हमेशा सच बोलो, इन्साफ़ से गवाही दो, तुम्हें अगर किसी से नफ़रत भी है तो उसकी वजह से किसी के साथ बेइन्साफ़ी न करो, हमेशा सब के साथ इन्साफ़ करो, यही मज़हबी ज़िन्दगी है, यही अल्लाह का हुकुम है, सचमुच अल्लाह सब जानता है कि तुम क्या करते हो।" (५-८)।

"ऐ ईमान वालो! जब तक तुम काबे की ज़ियारत में हो तब तक किसी जानवर का शिकार मत करो।" (५-९५)।

"और जब कभी इन लोगों (अरबों) में से किसी के लड़की पैदा हो जाती है तो उसका मुँह काला पड़ जाता है, उसे ग़ुस्सा आता है, वह इसे इतना बुरा समझता है कि लोगों से अपना मुँह छिपाने लगता है, वह सोचने लगता है कि इस लड़की को रखने

की बेइज़्ज़ती सहूँ या इसे ज़िन्दा मिट्टी में गाड़ दूँ। सचमुच इस तरह के ख़याल बहुत ही बुरे हैं।" (१६-५८,५९)।

"सचमुच (उसकी मेहर) अल्लाह की रहमत उन लोगों के बहुत पास है जो दूसरों के साथ नेकी करते हैं।" (७-५६)।

"ऐ ईमान वालो! इसमें कोई शक नहीं कि बहुत से मज़हबी गुरु और महन्त लोग झूठ मूठ लोगों का माल खा जाते हैं और लोगों को ईश्वर के सच्चे रास्ते से भटकाते हैं। जो लोग भी सोना चाँदी जमा करेंगे और उसे अल्लाह की राह में ख़र्च नहीं करेंगे उन्हें बहुत बड़ी सज़ा मिलेगी।" (९-३४)।

"जो लोग सब्र करेंगे और नेक काम करेंगे उन्हें अल्लाह से माफ़ी मिलेगी और बहुत बड़ा फल मिलेगा।" (११-११)।

"सचमुच अल्लाह का हुकुम है कि दूसरों के साथ इन्साफ़ करो, और उनके साथ भलाई करो, और अपने पड़ोसियों को दान दो, और ज़िना यानी व्यभिचार न करो, बुरे काम न करो, और एक दूसरे से फ़िसाद न करो। इन बातों का ख़याल रक्खो।···उस औरत की तरह काम मत करो जो मज़बूत सूत कातती है और फिर उसे उलझा देती है और उसके टुकड़े टुकड़े कर डालती है। लोग अपनी क़समों को एक दूसरे को धोखा देने का ज़रिया बना लेते हैं चूंकि एक गिरोह दूसरे गिरोह से तादाद में ज़्यादह है। अल्लाह तुम्हें इसी से आज़माता है।···अपनी क़समों को एक दूसरे को धोखा देने का ज़रिया मत बनाओ, इसकी सज़ा तुम्हें ज़बरदस्त मिलेगी।" (१६-९०,९४)।

"धन, दौलत और बाल बच्चे सिर्फ़ इस दुनिया की ज़िन्दगी की सजावट हैं, लेकिन नेक काम हमेशा रहने वाले हैं और रब्ब से नेक कामों ही का फल ज़्यादा अच्छा मिलेगा।" (१८-४६)।

"जो जानवर क़ुरबान किये जाते हैं उनका मांस या उनका ख़ून अल्लाह के नहीं पहुंचता, अल्लाह तुम से सिर्फ़ यह चाहता या क़ुबूल करता है कि तुम बुराई से बचे रहो।" (२२-३७)।

"ज़िना (व्यभिचार) करने वाले मर्द या औरत हर एक को सौ कोड़ों की सज़ा देनी चाहिए, इस बात में उन पर रहम खाकर अल्लाह के हुकुम के नहीं तोड़ना चाहिए।"* (२४-२)।

"उस रहमान (दयालु ईश्वर) के सच्चे बन्दे वे हैं जो आजज़ी के साथ झुक कर धरती पर चलते हैं, और जब जाहिल लोग उनसे कुछ उलटी सीधी बात कहते हैं तो वे जवाब देते हैं—'सलाम'।" (२५-६३)।

---

* ज़िना के माइने हैं सिवाय अपनी विवाहिता बीवी के किसी दूसरी औरत को बुरी निगाह से देखना। मुहम्मद साहब के बाद दूसरे ख़लीफ़ा हज़रत उमर के एक बेटे पर ज़िना का जुर्म साबित हुआ। हज़रत उमर ने ऊपर की आयत के मुताबिक़ उसे सौ कोड़े लगाने का हुक्म दिया। पूरे सौ कोड़े लगने के पहले लड़का मर गया। उसे दफ़न कर दिया गया और बाक़ी कोड़े उसके पिता हज़रत उमर के हुक्म से उसकी क़ब्र पर लगाये गये—*हदीसे क़ुदसी*।

"लुक़मान ने अपने बेटे से कहा ऐ बेटा! अल्लाह से दुआ करते रहो, नेक कामों की तरफ़ लोगों को लगाते रहो और बुरे कामों से मना करते रहो, जो कुछ तुम पर मुसीबत पड़े सब्र के साथ झेलते रहो, सचमुच यह अल्लाह का ज़बरदस्त हुक्म है।

"लोगों की तरफ़ से घमण्ड के साथ अपना मुँह मत फेर लो, और न ज़मीन पर अकड़ कर चलो, सचमुच अल्लाह किसी घमण्ड करने वाले या डींग हाँकने वाले से प्यार नहीं करता।

"दुनिया में चलो फिरो तो नेकी और सचाई से रहो और जब बोलो तो धीमी आवाज़ से बोलो, सचमुच गधे की तरह रेंकना अल्लाह को सब से ज़्यादह नापसन्द है।" (३१-१७ से १९)।

"क्या लोग समझते हैं कि वे यह कहने से छोड़ दिए जावेंगे कि 'हम ईमान लाए हैं' यानी हम अल्लाह को, फ़रिश्तों और पैग़म्बरों वग़ैरह को मानते हैं, और उनकी आज़मायश नहीं की जायगी।... क्या जो लोग बुरे काम करते हैं, वे समझते हैं कि वे ख़ुदा से बच जायंगे? वे ग़लत सोचते हैं।...और सचमुच जो लोग मानेंगे और नेक काम करेंगे, हम बेशक उन्हीं को नेक लोगों में गिनेंगे।" (२९-२,४,९)।

"आदमी को अल्लाह का हुक्म है कि वह अपने माँ बाप के साथ नेकी करे। कितनी तकलीफ़ के साथ उसकी माँ उसे पेट में रखती है, फिर कितनी तकलीफ़ उठाकर उसे पैदा करती है, उसे दूध पिलाती और पालती है। ढाई बरस इस तरह लग जाते हैं। होते होते जब आदमी बड़ा होता है और चालीस बरस का होता है

तो .खुदा से प्रार्थना करता है—'ऐ .खुदा ! मुझे इस क़ाबिल बना कि मैं तेरी बरकतों के लिये, जो तू ने मुझे और मेरे माँ बाप को दी हैं, तेरा शुक्र अदा कर सकूं, और मैं नेक काम कर सकूं जिनसे तू .खुश हो, और मेरी औलाद का भला कर, मैं तेरी पनाह चाहता हूं और मैं तेरे हुक्मों के सामने सर झुकाता हूँ।" (४६-१५)।

"ऐ ईमान वालो ! कोई आदमी किसी दूसरे पर न हँसे, मुमकिन है जिस पर वह हँसता है वह उससे अच्छा हो, और न कोई औरत दूसरी औरत पर हँसे, मुमकिन है जिस पर वह हँसती है वह उससे अच्छी हो। एक दूसरे के दोष यानी नुक़्स मत निकालो और न एक दूसरे को नाम धरो। ईमान वालों के लिये किसी को नाम भी रखना बुरा है जो नहीं मानेगा वह अपने ऊपर .जुल्म करेगा।

"ऐ ईमान वालो ! दूसरों पर बहुत शक मत करो, सचमुच कभी कभी शक करना गुनाह होता है। दूसरों के नुक़्स ढूंढ़ते मत फिरो, और न पीठ पीछे किसी की बुराई करो। पीठ पीछे बुराई करना ऐसा ही है जैसे अपने मुरदा भाई का माँस खाना। क्या तुममें से कोई इसे पसन्द करेगा ? नहीं, तुम इसे बुरा समझते हो। इसलिए अल्लाह से डरो, सचमुच अल्लाह बड़ा दयावान है।

"ऐ लोगो ! अल्लाह ने तुम्हें औरत और मर्द से पैदा किया है, और तुम्हें ख़ानदानों और क़बीलों में इसलिये बाँट दिया है ताकि तुम एक दूसरे को पहचान सको। सचमुच अल्लाह की नज़रों में सब से ज़्यादह ऊंचा और इज़्ज़त वाला वही है जो अपने फ़र्ज़ का

सब से ज़्यादा ख़याल रखता है, सचमुच अल्लाह सब जानता देखता है।" (४९-११ से १३)।

"जो तुम्हें नहीं मिला उस पर रंज मत करो, और जो कुछ तुम्हें मिला है उस पर फूलो मत,[१] अल्लाह घमण्ड करने वाले और डींग मारने वाले को प्यार नहीं करता।" (५७-२३)।

"जो बुरा काम करता है उसकी अपनी आत्मा (नफ़्सुल्लव्वामह) उसे बुरा कहती है।" (७५-२)।

"जन्नत उन लोगों के लिए है जो अपनी ख़्वाहिशों को रोकते हैं।"[२] (७९-४०,४१)।

एक मर्तबा अब्दुल्लाह नामी एक ग़रीब अन्धा मुहम्मद साहब के पास आया और कुछ पूँछने लगा। मुहम्मद साहब उस वक़्त कुछ क़ुरैश के सरदारों से बातचीत कर रहे थे। उन्हें बुरा लगा। उन्होंने उस अन्धे की तरफ़ से मुँह फेर लिया। इस पर कुरान की नीचे लिखी आयतें उतरीं—

"तुमने नाराज़ होकर पीठ मोड़ ली क्योंकि तुम्हारे पास एक अन्धा आया था। तुम्हें कैसे मालूम हुआ कि वह अन्धा अपनी आत्मा को पाक न करेगा, हिदायत न सुनेगा और उस हिदायत से फ़ायदा न उठायगा ? और जो लोग तुम्हारी परवाह नहीं करते उनसे तुम बात करते हो। अगर वे अपनी आत्मा को पाक न करें तो तुम्हारा क्या क़ुसूर है। लेकिन जो आदमी मेहनत करके तुम्हारे पास

---

[१] *न प्रहृष्येत प्रियं प्राप्य नोद्विजेत प्राप्य चाप्रियम—गीता*

[२] *इच्छा निरोधस्तपः—जैन तत्त्वार्थ सूत्र।*

आता है और अल्लाह से डरता है, क्या तुम उससे मुँह मोड़ लोगे! नहीं, ! असली बड़प्पन उसी को मिलना चाहिये।" (८०-१से ११)।

"ज़्यादह दौलत आदमी के दिल को अल्लाह की राह से अलग कर देती है,❀ यहाँ तक कि मौत उसे आ घेरती है, तब उसे अपने कामों का नतीजा नरक दिखाई देता है और अपने ग़लत रास्ते का पता चलता है।" (१०२-१ से ७)।

"वे लोग बरबाद हो जायँगे जो दूसरों के साथ बेईमानी करते हैं। जो जब दूसरों से चीज़ लेते हैं तो पूरा नाप कर लेते हैं, लेकिन जब दूसरों को देते हैं या उनके लिये तौलते हैं तो कम देते हैं।" (८३-१ से ३)।

"अल्लाह ने तराज़ू इसलिये बनाई है कि तुम दूसरों के साथ बेइन्साफ़ी न करो, सब के साथ इन्साफ़ करो और किसी का हक़ न मारो।" (५५-७ से ९)।

"आदमी के लिए दो साफ़ साफ़ रास्ते हैं। एक रास्ता दाहने हाथ का है, जो पहाड़ की चढ़ाई की तरह मुश्किल है और दूसरा रास्ता बाएं हाथ का है, जो पहाड़ के उतार की तरह है। लेकिन आदमी चढ़ाई के रास्ते से बचता है। तुम नहीं जानते कि यह पहाड़ की चढ़ाई का रास्ता क्या है! वह रास्ता यह है—ग़ुलामों को

❀ *हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखं—उपनिषद्*

आज़ाद करना* और भूखों को, अपने रिश्तेदारों को, यतीमों को और मिट्टी में लोटते हुये ग़रीब आदमी को खाना देना। जो आदमी ऐसा करता है वही सच्चा मोमिन यानी ईमान वाला है। ऐसे लोग ही दूसरे को सब्र करने और दूसरों पर दया करने की सलाह देते हैं। ये लोग ही दाहने हाथ के रास्ते पर चलने वाले हैं। इसके ख़िलाफ़ जो लोग यह बात नहीं मानते वे बाएं हाथ वाले रास्ते पर चलते हैं। उनकी छातियों पर आग पड़ी है।" (९०—१० से २०)।

---

* ग़ुलामी का रिवाज क़रीब क़रीब सब पुराने मुल्कों में था। रोम के राज्य में यह रिवाज सब से ज्यादा बढ़ा और इसने सब से भयानक शकल अख़्तियार की। जितना ज़ुल्म ग़ुलामों पर रोम में होता था, उतना दुनिया में कहीं नहीं हुआ। यूरोप और अमरीका में इस जंगलीपन का रिवाज १८ वीं सदी तक जारी था। क़ुरान ने इस पुराने रिवाज को बहुत कम कर दिया। जंग के क़ैदियों का जंग के बाद रखा जाना क़ुरान ने बिल्कुल बन्द कर दिया (४७-४)। "और ग़ुलामों को आज़ाद करना" बहुत सी आयतों में सब से बड़े सवाब यानी पुण्य का काम बताया गया है। (९०—१३ वग़ैरह)।

मुहम्मद साहब को अपनी ज़िन्दगी में जितने ग़ुलाम मिले, क़ुरान के इसी हुकुम के मुताबिक़, उन्होंने सब को उसी वक़्त आज़ाद कर दिया—The Holy Quran by Mohammad Ali, p. 192.

"किसी अनाथ पर ज़ुल्म न करो, किसी मांगने वाले पर नाराज़ मत हो, और सब को ख़ुशख़बरी दो कि अल्लाह बड़ा दयावान है।" (९३-९ से ११)।

"ज़माने का हाल देखो! सचमुच सिवाय उन लोगों के जो ईमान रखें, और नेक काम करें और एक दूसरे को सचाई पर डटे रहने और सब्र करने की सलाह दें, बाक़ी सब आदमी घाटे में रहेंगे।" (१०३-१ से ३)।

"लोगों को सिवाय इसके और कुछ हुकुम नहीं दिया गया कि वे सचाई के साथ अल्लाह की इबादत करें, सच्चे और ईमानदार रहें, दुआ मांगें, और ग़रीबों को दान दें, यही असली और पक्का दीन है।" (९८-५)।

"क्या तुमने सोचा है कि दीन को झूठा ठहराने वाला आदमी कौन है? दीन को झूठा ठहराने वाला आदमी वह है जो किसी यतीम को सताता है और जो ग़रीबों को खाना देने पर ज़ोर नहीं देता। ऐसा आदमी जब नमाज़ पढ़ता है तो उस पर अफ़सोस है, क्योंकि वह नमाज़ के असली मतलब की तरफ़ ध्यान नहीं देता। वह सिर्फ़ दिखावा करता है, और ख़ैरात से हाथ रोकता है।" (१०७-१ से ७)।

बुराई का बदला भलाई से दो

"लोगों को आदम के दोनों बेटों का क़िस्सा सच सच सुना दो।

इन दोनों लड़कों ने अल्लाह के लिए क़ुरबानी[1] (उपासना) की। अल्लाह ने एक की क़ुरबानी मंज़ूर की दूसरे की नहीं की। सबब यह था—उनमें से एक ने दूसरे से कहा था, 'मैं सचमुच तुम्हें मार डालूंगा।' दूसरे ने जवाब दिया, 'अल्लाह सिर्फ़ उनकी क़ुरबानी मंज़ूर करता है जो बुराई से बचते हैं। अगर तुम मुझे क़त्ल करने के लिये हाथ बढ़ाओगे तब भी मैं तुम्हें क़त्ल करने के लिये तुम्हारी तरफ़ हाथ नहीं बढ़ाऊंगा। सचमुच मैं उस अल्लाह से डरता हूं जो सब दुनियाओं का रब्ब यानी पालने वाला है।' अल्लाह ने आदम के इसी दूसरे बेटे की क़ुरबानी मंज़ूर की, पहिले की नहीं की।" (५-२७,२८)।

"यहूदियों की किताब तौरेत में हुकुम है कि तुम जान के बदले में जान ले सकते हो, आँख के बदले में आँख, नाक के बदले में नाक, कान के बदले में कान, और दाँत के बदले में दाँत; ऐसे ही अगर कोई तुम्हें घायल कर दे तो तुम उसका भी बदला ले सकते हो। लेकिन जो कोई माफ़ करदे और बदला न ले तो उसके लिये ज़्यादह अच्छा है, इससे माफ़ कर देने वाले के पापों का कुफ़्फ़ारा यानी प्रायश्चित्त हो जायगा[2]।" (५-४५)।

---

[1] क़ुरबानी शब्द 'क़ुर्ब' से बना है जिसके माइने 'क़रीब होना' या 'पास आना' है। संस्कृत 'यज्ञ' शब्द के भी लफ़्ज़ी माइने 'मिलना' है। क़ुरबानी या यज्ञ उन कामों को कहते थे, जिनसे यह समझा जाता था कि आदमी ईश्वर के ज़्यादा नज़-दीक पहुँचता है या उससे जा मिलता है। इस तरह क़ुरबानी, उपासना और यज्ञ इन तीनों के लफ़्ज़ी माइने एक हैं।

[2] *ठीक यही बात हज़रत ईसा ने इन्हीं शब्दों में इंजील में कही है।*

"अगर तुम कुछ लोगों से इसलिये दुशमनी रखते हो क्योंकि उन्होंने तुम्हें अल्लाह की पाक मसजिद में जाने से रोका,* तो भी उस दुशमनी की वजह से तुम हद से न बढ़ो। एक दूसरे को सब्र के साथ नेकी करने और परहेज़गारी (आत्मसंयम) की ज़िन्दगी बसर करने में ही मदद दो, बुराई करने में और दूसरे को दुःख देने में किसी को मदद न दो, और अल्लाह से डरो।" (५-२)।

"ऐ मुहम्मद! इन लोगों में से कुछ से तुम्हें हमेशा दग़ा मिलेगी (यानी एक मर्तबा तुम्हारी बात मानकर भी वे फिर जावेंगे) उन्हें माफ़ कर देना और जाने देना। सचमुच अल्लाह उन्हीं से प्यार करता है जो दूसरों के साथ नेकी और अहसान करते हैं।" (५-१३)।

"जो लोग सब्र करते हैं, अपने अल्लाह को ख़ुश रखते हैं, दुआएं मांगते हैं, और जो कुछ ईश्वर ने उन्हें दिया है उसमें से छिपा कर और खुले दान देते हैं, और जो कोई उनके साथ बुराई करता है उसके साथ भलाई करते हैं, उन्हें उस दुनिया में अच्छा फल मिलेगा।" (१३-२२)।

"अगर तुम्हें कोई दुख पहुंचावे तो तुम उससे उतना ही बदला ले सकते हो, यानी जो उसने तुम्हारे साथ किया उससे ज़्यादह तुम उसके साथ हरगिज़ न करो। लेकिन अगर तुम सब्र के साथ बरदाश्त कर जाओ तो सचमुच सब्र करने वालों को सब से अच्छा फल मिलेगा,

---

* *मक्के के उन लोगों की तरफ़ इशारा है, जिन्होंने मुसलमानों को ज़बरदस्ती उनके घरों से निकाल दिया था और जिनसे मुसलमानों की जंग जारी थी।*

इसलिये सब्र ही करो। अल्लाह की मदद से ही तुम सब्र कर सकोगे, दूसरों की फ़िक्र मत करो, तुम इस फ़िक्र में मत पड़ो कि दूसरे क्या सोच रहे हैं। सचमुच अल्लाह उन्हीं के साथ है जो बुराई से बचते हैं, और सब के साथ भलाई करते हैं।" (१६-१२६ से १२८)।

"बुराई और भलाई बराबर नहीं हो सकतीं। बुराई का बदला भलाई से दो, और तुम देखोगे कि जिसे तुमसे दुश्मनी थी वह भी तुम्हारा गहरा दोस्त हो जायगा।

"और अगर किसी बुरे आदमी की तरफ़ से तुम्हें कोई नुक़सान पहुंचे तो अल्लाह की पनाह लो, सचमुच वह सब कुछ सुनता और जानता है।" (४१-३४, ३६)।

"कोई तुम्हारे साथ बुराई करे तो उसे उतनी ही सज़ा दे सकते हो जितनी उसने बुराई की, लेकिन जो कोई माफ़ कर देता है और इस तरह माफ़ कर के उसका सुधार करता है उसे अल्लाह से इनाम मिलता है। सचमुच अल्लाह किसी पर सख़्ती करने वालों को प्यार नहीं करता। जिस किसी पर ज़ुल्म किया गया है वह अगर अपना बचाव करे तो उसका कोई क़ुसूर नहीं। क़ुसूर उनका है जो ज़ुल्म करते हैं और धरती पर हक़ यानी इनसाफ़ के ख़िलाफ़ झगड़े खड़े करते हैं। इस तरह के लोगों को अल्लाह से सज़ा भुगतनी पड़ेगी। लेकिन जिस पर ज़ुल्म किया गया वह अगर सब्र कर ले और माफ़ करदे तो सचमुच यह काम अच्छा है और करने के क़ाबिल है। यही कोशिश करनी चाहिए।" (४२-४० से ४३)।

"बुराई का बदला भलाई से दो।" (२३-९६)।

कुछ और आयतें

"तुम अल्लाह से कैसे इनकार कर सकते हो ? तुम मर चुके थे और उसने तुम्हें ज़िन्दा किया, वह फिर तुम्हें मुर्दा कर देगा और फिर ज़िन्दा कर देगा, और आख़ीर में तुम फिर उसी के पास जाओगे।" (२-२८)।

"अल्लाह दाने में से और गुठली में से अंकुर फोड़ निकालता है। वह मुर्दा से ज़िन्दा और ज़िन्दा से मुर्दा करता है। ये अल्लाह ही के काम हैं। फिर तुम उससे क्यों फिरे हुए हो ?" (६-९६)।

"अल्लाह ही ने तुम्हें ज़िन्दगी दी है। वह ही तुम्हें फिर ज़िन्दा करेगा। सचमुच आदमी नाशुकरा है।" (२२–६६)।

"ऐ ईमान वालो ! सब्र के साथ और दुआ करके अल्लाह से मदद मांगो। सचमुच अल्लाह उन्हीं के साथ है जो सब्र करते हैं।

"जो लोग अल्लाह की राह में मारे गए उन्हें मरा हुआ मत कहो। नहीं, वह ज़िन्दा हैं। सिर्फ़ तुम उन्हें देख नहीं पाते।

"और इसमें कोई शक नहीं, अल्लाह तुम्हें डर, भूख, प्यास और जान और माल के नुक़सान, सब के ज़रिये आज़मायेगा। लेकिन जो लोग सब्र से काम लें उन्हें .खुशख़बरी दो।

"उन्हें .खुशख़बरी दो जिन पर जब कोई मुसीबत पड़े तो कहते हैं—सचमुच हम अल्लाह के हैं और इसमें कोई शक नहीं हमें उसी के पास जाना है।

"ये ही लोग हैं जिनके लिए अल्लाह की बरकतें और उसका रहम है। ये ही ठीक रास्ते पर चलने वाले हैं।" (२-१५३ से १५७)।

"जो लोग ईमान रखते हैं, उनका रखने वाला अल्लाह है और वही उन्हें अंधकार से निकाल कर उजाले में लाता है।*" (२-२५७)।

"इस किताब (क़ुरान) के ज़रिये अल्लाह उन्हें शान्ति का रास्ता दिखाता है जो अल्लाह की मरज़ी पर चलते हैं, अल्लाह अपनी मरज़ी से उन्हें अंधकार से निकाल कर उजाले में लाता है, और उन्हें सीधे रास्ते पर ले चलता है।" (५-१६)।

"अल्लाह ही ने यह किताब (क़ुरान) तुम्हारे (मुहम्मद के) घट में उतारी है। इसकी कुछ आयतें *"मुहकमात"* यानी पक्के और साफ़ साफ़ हुकुम हैं, वे ही इस किताब की असल यानी जड़ हैं, बाक़ी आयतें *"मुतशाबेहात"* यानी मिसाल या उपमा के तौर पर हैं। जिन लोगों के दिलों में टेढ़ापन है वे क़ुरान के उसी हिस्से पर चलते हैं जो मिसाल यानी उपमा के तौर पर कहा गया है। वे उसके ज़रिये फ़ितना यानी झगड़ा खड़ा करना चाहते हैं, और उसका मन-गढ़न्त मतलब लगाते हैं, लेकिन उसका मतलब सिवाय अल्लाह के और उनके कोई नहीं जानता जो पक्के ज्ञानी हैं और कहते हैं कि हम इसे मानते हैं, यह सब हमारे रब्ब की देन है, दूर की सोचने वाले ही इस बात की परवाह करते हैं।" (३-६)।

"सचमुच अल्लाह किसी मच्छड़ तक की या किसी उससे भी छोटी चीज़ की मिसाल देने में नहीं शरमाता, फिर जो लोग मानते हैं वे समझते हैं कि यह उनके रब्ब की तरफ़ से सचाई है, और जो नहीं

---

* *तमसो मा ज्योतिर्गमय—उपनिषद*

मानते वे कहते हैं—'अल्लाह का इस मिसाल से क्या मतलब है ? इससे बहुत से ग़लत रास्ते पर पड़ जायंगे और बहुत से ठीक रास्ते पर।' लेकिन सिवाय बदी करने वालों के कोई इससे ग़लत रास्ते पर नहीं पड़ सकता।" (२-२६)।

"कुछ ऐसे लोग, जिनके पास इलहामी या ईश्वरी किताबें हैं, कहते हैं कि 'उन लोगों के साथ जिनके पास किताबें नहीं हैं हम अगर वादा करके पूरा न करें तो हम पर अल्लाह की तरफ़ से कोई इलज़ाम नहीं।' ऐसा कहने वाले जान बूझ कर अल्लाह के ख़िलाफ़ झूठ बोलते हैं।

"नहीं, जो कोई अपने वादे को पूरा करता है और बुराई से बचता है, अल्लाह सचमुच उसी को प्यार करता है।" (३-७४,७५)।

"जो लोग अल्लाह की राह में मारे जाते हैं, उन्हें मरा मत समझो। नहीं, वे ज़िन्दा हैं, और उनका रब्ब उन्हें रोज़ी देता है।" (३-१६८)।

"और इस दुनिया की ज़िन्दगी सिवाय झूठे धन (मताउल ग़रूर यानी माया) के और कुछ नहीं है।" (३-१८४)।

"अफ़सोस है हर ऐसे आदमी पर जो किसी दूसरे की बुराई करता है, किसी को बदनाम करता है,

"जो दौलत जमा करता है और समझता है कि वह उसके काम आयगी,

"वह समझता है कि उसकी दौलत उसे क़ायम रखेगी,

"नहीं, वह सचमुच बहुत बड़ी आफ़त में फंसेगा,

"और तुम क्या समझो कि वह आफ़त क्या है ?

"वह ईश्वर की सुलगाई हुई आग है,

"जो (पछतावे की शक्ल में) आदमियों के दिलों के अन्दर जलती है,

"सचमुच यह आग बड़े बड़े खम्भों की शक्ल में (यानी ऐसी ऐसी बेचैन कर देने वाली ख्वाहिशों की शक्ल में जो कभी पूरी नहीं हो सकतीं ।" (१०४–१ से ९) ।

"कह दो कि मेरे रब्ब ने सिर्फ़ गन्दी बातों (बदचलनी) को मना किया है । खुली हुई गन्दी बातों को भी और छिपी हुई गन्दी बातों को भी, और पाप करने को मना किया है और हक़ या इनसाफ़ के खिलाफ़ बग़ावत करने को मना किया है और इस बात को मना किया है कि तुम अल्लाह के साथ किसी दूसरे को जोड़ो जिसका तुम्हें कोई हक़ नहीं, और अल्लाह की बाबत ऐसी बात कहो जिसे तुम नहीं जानते ।" (७-३३) ।

"सचमुच अल्लाह की रहमत, उसकी दया उन लोगों के नज़दीक है जो दूसरों के साथ नेकी करते हैं ।" (७-५६) ।

"अल्लाह ने अपनी नियामतें यानी दुनिया की अच्छी चीज़ें कभी किसी क़ौम से नहीं छीनीं, जब तक कि उस क़ौम ने ख़ुद अपनी हालत को नहीं बदल दिया ।" (८-५३) ।

"अल्लाह किसी क़ौम की हालत को नहीं बदलता, जब तक कि वह क़ौम ख़ुद अपनी हालत को नहीं बदलती ।" (१३-११) ।

"और जब कभी ईश्वर ने किसी मुल्क के लोगों को पापों से

डराने के लिए उनमें कोई रसूल भेजा है तो वहां के मालदार लोग यही कहते थे कि 'हम तुम्हारी बात नहीं मानते'।

"वे कहते हैं, हमारे पास बहुत सी दौलत और बाल बच्चे हैं, हमें कोई सज़ा नहीं देगा।

"कह दो, मेरा रब्ब जिसे चाहता है बहुत देता है और जिसे चाहता है कम देता है, लेकिन बहुत से लोग नहीं समझते।

"न तुम्हारी दौलत तुम्हें अल्लाह के नज़दीक ला सकती है और न तुम्हारे बाल बच्चे, अल्लाह के नज़दीक वही जा सकता है जो बात माने और नेक काम करे।" (३४-३४ से ३७)।

"जो कोई दूसरी दुनिया (परलोक) की भलाई चाहता है, अल्लाह उसे वही ज़्यादा देता है, और जो कोई इस दुनिया का सुख चाहता है, उसे वही मिलता है, उसे फिर दूसरी दुनिया का सुख नसीब नहीं होता।" (४२-२०)।

"ऐ मुहम्मद! अगर लोग तुम्हारी बात से फिर जायं तो हमने (अल्लाह ने) तुम्हें उनके ऊपर कोई चौकीदार बना कर नहीं भेजा है। तुम्हारा काम सिर्फ़ अपना पैग़ाम यानी संदेशा सुना देना है।" (४२-४८)।

"समझो कि इस दुनिया की ज़िन्दगी क्या है। यह सिर्फ़ खेल, कूद, तमाशा, आपस में बड़ हांकना, और धन दौलत और बच्चों में एक दूसरे से बढ़ने की कोशिश करना, यही बस इस दुनिया की ज़िन्दगी है; यह उस बारिश की तरह थोड़ी देर है जिससे नाज उगा, किसान ख़ुश हुआ, फिर वह नाज मुरझाया, पीला पड़ा, सूखा

और कट गया। और दूसरी दुनिया (परलोक) में बुरे कामों की सज़ा भी है और अल्लाह से माफ़ी भी है, और उसकी रज़ामन्दी भी, और इस दुनिया की ज़िन्दगी सिवाय धोखे (माया) के और कुछ नहीं।" (६७-२०)।

"ऐ ईमान वालो! सचमुच तुम में से कुछ के लिए बीवी और बच्चे उनके दुश्मन हैं, इसलिए ख़बरदार रहो, और अगर तुम दूसरों को माफ़ कर दो, और बरदाश्त कर लो, और जाने दो तो सचमुच अल्लाह भी माफ़ कर देने वाला और दयावान है।

"तुम्हारा माल असबाब और बाल बच्चे सिर्फ़ तुम्हें जांचने की चीज़ें हैं, और अल्लाह के पास बहुत बड़ा इनाम है।" (६४-१४,१५)।

"सचमुच हर मुशकिल के साथ आसानी है।" (९४-५)।

"ऐ ईमान वालो! अल्लाह की तरफ़ अपने फ़र्ज़ का ख़याल रखो, और उसके रसूल का कहना मानो। अल्लाह तुम पर दो तरह की दया करेगा। एक तो तुम्हारे अन्दर वह जोति (नूर) देगा जिसके उजाले में तुम चल सको,* और दूसरे तुम्हें माफ़ कर देगा। अल्लाह माफ़ कर देने वाला और दयावान है।" (५७-२८)।

"सचमुच वही आदमी कामयाब होगा जो अपनी आत्मा को पाक करेगा।

"जो अपने रब्ब को याद करेगा और उससे दुआ मांगेगा,

"नहीं, तुम इस दुनिया की ज़िन्दगी को पसन्द करते हो!

---

* रंग महल में दीप बरत है—कबीर

"लेकिन उस दुनिया की ज़िन्दगी इससे अच्छी और ज़्यादह टिकाऊ है।

"सचमुच यही बात इससे पहले की किताबों में कही गई है।" (८७-१४ से १८)।

"ऐ नफ़्सेमुतमइन्ना ! यानी ऐ शान्त आत्मा वालो !

"अपने रब्ब से ख़ुश और अपने रब्ब को ख़ुश रखते हुए, अपने रब्ब ही के पास लौट जाओ।" (८९-२७, २८)।

"उस अल्लाह के नाम से जो रहमान और रहीम है,

"सूरज और उसकी रोशनी का ख़याल करो,

"और चाँद का जो सूरज की दी हुई रोशनी से चमकता है,

"और दिन का जब वह दुनिया को नज़र के सामने खोल देता है,

"और आसमान और उसकी बनावट का,

"और ज़मीन और उसके फैलाव का,

"और नफ़्स (आत्मा) और उसके कमाल (पूर्णता) का,

"उसी अल्लाह ने हर आत्मा को इलहाम के ज़रिये यह बताया कि सचाई से हटना क्या चीज़ है और बुराई से बचना क्या चीज़ है,

"सचमुच वही आदमी फ़ायदे में रहेगा जो अपनी आत्मा को पाक करेगा,

"और वह सचमुच घाटे में रहेगा जो अपनी आत्मा को गन्दा करेगा।" (९१-१ से १०)।

निचोड़

आखीर में थोड़े से शब्दों में हम क़ुरान के बुनियादी उसूलों और उसकी तालीम का निचोड़ दे देना चाहते हैं। क़ुरान के बुनियादी उसूल ये हैं—

(१) अल्लाह एक है। उसकी कोई शकल सूरत नहीं है। वह सब दुनियाओं का मालिक और सब को उनके कामों का फल देने वाला है। उस एक अल्लाह के सिवाय किसी दूसरे की पूजा नहीं करनी चाहिए।

(२) सब आदमी उसी एक ईश्वर के बन्दे और आपस में भाई भाई हैं। "आदमियों में सब से बढ़कर इज़्ज़त के क़ाबिल वह है जो बुराई से बचे और नेकी के कामों में लगा रहे।"

(३) दुनिया के सब बड़े बड़े धर्मों का निकास उसी एक अल्लाह से है। इन सब मज़हबों के क़ायम करने वालों को एक ही तरह उसी अल्लाह से रोशनी मिली है। इसलिए ये सब धर्म सच्चे हैं और दरअसल "सब धर्म एक हैं।"

(४) अलग अलग मज़हबों में सिर्फ़ मुल्क, वक़्त और हालतों के फ़रक़ से उनके रस्म रिवाजों और पूजा इबादत के तरीक़ों में फ़रक़ है, बुनियादी उसूलों में कोई फ़रक़ नहीं। झगड़े की वजह यह हो जाती है कि लोग अपने मज़हबों के बुनियादी उसूलों से हट जाते हैं और नेकी और भलाई के कामों की जगह रस्म रिवाजों और पूजा के तरीक़ों यानी

शरअ और मिनहाज को ज़्यादा अहम या ज़रूरी समझने लगते हैं।

(५) "असली चीज़ यह नहीं है कि आदमी पूजा यानी इबादत के वक्त पूरब को मुँह कर ले या पच्छिम को। असली चीज़ यह है कि आदमी एक अल्लाह को माने और नेक काम करे।"

क़ुरान में नमाज़ पढ़ने और रोज़े रखने दोनों का हुक्म दिया गया है। लेकिन न नमाज़ का कोई ख़ास ढंग मुक़र्रर किया गया है और न रोज़े का कोई ख़ास कड़ा क़ानून। नमाज़ और रोज़े, दोनो की ग़रज़ यही बताई गई है कि "आदमी बुराई से बचा रहे और नेक काम करे।"

"जो आदमी भी एक अल्लाह को माने और नेक काम करे, वह चाहे किसी भी ख़ास धर्म का मानने वाला हो, उसे न कोई डर है न कोई ग़म।"

(६) किसी भी क़ौम या मुल्क में जब लोग मज़हब के बुनियादी उसूलों से हट जाते हैं तो अल्लाह उनमें कोई न कोई रसूल या पैग़म्बर भेज कर उसके ज़रिये उनमें सच्चे दीन को फिर से क़ायम करता है और लोगों को ठीक राह पर लाता है। इस तरह के पैग़म्बर सब क़ौमों, ज़मानों और सब मुल्कों में होते रहे हैं।

(७) अलग अलग मज़हबों के क़ायम करने वालों या "अलग अलग मुल्कों और क़ौमों के पैग़म्बरों में फ़रक़ करना

यानी उनमें से किसी को मानना और किसी को न मानना गुनाह है।"

(८) "क़ुरान अपने से पहिले की सब इलहामी यानी ईश्वरी किताबों की तसदीक़ करता है" यानी उन्हें सच्चा ठहराता है, और मुहम्मद साहब अपने से पहिले के "सब पैग़म्बरों की मुहर" यानी उन सब की तसदीक़ करने वाले हैं।

(९) भगवत् गीता की तरह क़ुरान भी ख़ास ख़ास हालतों में धर्म की हिफ़ाज़त के लिए हथियार उठाने की इजाज़त देता है। लेकिन क़ुरान का उसूल है कि "मज़हब के मामले में किसी के साथ किसी तरह की भी ज़बरदस्ती नहीं होनी चाहिए।" और सब बातों में भी क़ुरान का साफ़ हुक्म है कि "अगर आदमी दूसरों के सब क़ुसूरों को माफ़ कर दे, सब्र के साथ बर्दाश्त करले और बुराई का बदला भलाई से दे, तो उसके लिए ज़्यादह अच्छा है," "क्योंकि अल्लाह भी सब को माफ़ कर देने वाला और सब पर दया करने वाल है," सचमुच अल्लाह उन्हें ही प्यार करता है जो दूसरों के साथ नेकी करते हैं।

दूसरे शब्दों में क़ुरान के अन्दर बारबार दो बातें बताई गई हैं, एक ईमान यानी विश्वास और दूसरे नेक अमल यानी नेक काम। ईमान का मतलब यह है कि हर आदमी एक अल्लाह पर और उसके भेजे हुए सब मुल्कों और क़ौमों के सब पैग़म्बरों या रसूलों पर, सब ईश्वरी किताबों पर, अपने अन्दर के नेक रुझानों

(अच्छी प्रवृत्तियों) और मरने के बाद की ज़िन्दगी—इन सब पर यक़ीन करे। नेक अमल का मतलब यह बताया गया है कि आदमी अपने नफ़्स को क़ाबू में रखे और अपने जिस्म से, माल से और दिल से सब के साथ नेकी करे। .कुरान में बार बार कहा गया है "इन्नल्लाह युहिब्बुलमुहसनीन" यानी—अल्लाह उन्हें ही प्यार करता है जो दूसरों के साथ नेकी करते हैं।

हक़ीक़त में जहाँ तक .कुरान के बुनियादी उसूलों की बात है, दुनिया की और सब बड़ी बड़ी मज़हबी किताबों की तरह .कुरान भी सब मुल्क, सब क़ौम, और सब आदमियों की एक बराबर बपौती है, और किसी भी सच्चे खोजी को धर्म और रूहानी तरक्क़ी का ठीक ठीक रास्ता दिखाने के लिए काफ़ी है। .कुरान उसी मज़हबे इन्सानियत यानी मानव धर्म की तालीम देता है जो सारी दुनिया के लिये एक बराबर है और जो सब मज़हबों का जौहर है। उसे ही हिन्दू सन्तों ने 'प्रेम का धर्म,' और मुसलमान सूफ़ियों ने 'मज़हबे इश्क़' कहा है।

कुछ और

औरतों के बारे में

औरतों और मरदों के एक दूसरे के साथ बर्ताव के बारे में क़ुरान में जगह जगह तरह तरह की हिदायतें हैं। इन हिदायतों से उस ज़माने के अरबों के रिवाजों और आदतों में बहुत बड़ा सुधार हुआ और वह अपने को रोक रखने और पाक ज़िन्दगी बसर करने की तरफ़ चलने लगे। जिस तरह हिन्दुओं की 'नारद स्मृति' में लिखा है—"स्त्रियाः क्षेत्रं बीजिनो नराः", यानी औरतें धरती हैं और मर्द उनमें बीज डालने वाले हैं। उसी तरह क़ुरान में औरतों की मिसाल खेती की ज़मीन के साथ दी गई है (२-२२३)। मतलब यह है कि औरत का असली काम किसी की ख़्वाहिश या वासना को पूरा करना नहीं है बल्कि बच्चे पैदा करना और उन्हें पालना है।

मुहम्मद साहब के पहले अरब में औरतों के किसी तरह के कोई हक़ नहीं थे, न उन्हें पुश्तैनी जायदाद का कोई हिस्सा मिलता था। उनका दरजा कम या ज्यादह जानवर का सा या माल असबाब का सा माना जाता था।* क़ुरान ने हुक्म दिया कि "जिस तरह मर्द के औरत पर हक़ हैं उसी तरह

---

* क़ुरान—मौलवी मुहम्मद अली, सफ़ा १०५।

औरत के मर्द पर हक़ हैं" (२-२२८)। "औरतें मर्दों के लिये और मर्द औरतों के लिये, दोनों एक दूसरे का लिबास यानी एक दूसरे की शोभा हैं"(२-१८७)।

क़ुरान में बार बार औरतों के साथ अच्छा बरताव करने का, इनसाफ़ करने का और उनके माल धन की हिफ़ाज़त करने का हुकुम है। "मर्द को कोई हक़ नहीं कि औरत का जो अलग धन हो उसे उससे ले या जो मर्द उसे दे चुका हो उसे फिर उससे वापस ले" (९-२२६)।

क़ुरान से पहले औरत को अपने बाप, भाई, ख़ाविन्द या किसी के भी मरने पर उसकी जायदाद से किसी तरह का हिस्सा न मिलता था। क़ुरान ने हुकुम दिया—

"माँ बाप या पास के रिश्तेदार जो कुछ छोड़ जावें उसमें से एक हिस्सा मरदों को मिलेगा, और एक हिस्सा औरतों को, चाहे जायदाद कम हो या बहुत हो। सब का हिस्सा तय है।" (४-७)।

छोटे बच्चों को भी माँ बाप या किसी रिश्तेदार के मरने पर पहले कुछ न मिलता था। अरबों का क़ानून था—"किसी ऐसे आदमी को भी जो दूसरे पर हमला करने में भाले को अच्छी तरह काम में लाना न जानता हो किसी की जायदाद से कोई हिस्सा न मिलेगा।"* जिन लोगों को रात दिन एक दूसरे से लड़ना पड़ता था उनमें इस तरह का क़ानून क़ुदरती था

* क़ुरान—मुहम्मद अली सफ़ा–२०१।

क़ुरान ने आगे के लिए मर्दों, औरतों और बच्चों, सब के अलग अलग हिस्से तय कर दिये। (४-११;४-१७७)।

शादी के लिए अरबों में इससे पहले कोई ख़ास रिश्ता मना न था। यहाँ तक कि बाप के मरने पर उसकी बीवियाँ उसके बेटे की मिल्कीयत समझी जाती थीं। क़ुरान ने इस पुराने गन्दे रिवाज को हमेशा के लिए बन्द करके यह तय कर दिया कि किन किन रिश्तेदारियों में शादी करना मना है। (४-१६,२२)।

सिवाय अपनी ब्याहता औरत के किसी दूसरी औरत के साथ चाहे वह ग़ुलाम हो या कोई भी हो, औरत मर्द का बर्ताव क़ुरान ने हमेशा के लिए नाजायज़ और पाप ठहरा दिया। (४-२५ वग़ैरह)।

"ईश्वर चाहता है कि तुम पर दया करे, पर जो लोग अपनी ख़्वाहिशों और वासनाओं के पीछे चलते हैं उनका मतलब यह है कि तुम ईश्वर से ज़्यादा ज़्यादा दूर होते जाओ।" (४-२७)!

"हर औरत को जायज़ तरीक़ों से धन कमाने का और अपने धन की ख़ुद मालिक होने का पूरा अख़्तियार दिया गया।

"अल्लाह ने अगर तुम में से किसी को दूसरे से ज़्यादह दिया है तो उसका लालच मत करो। जो कोई आदमी जो कुछ कमायगा वह उसी का माल होगा और जो कोई औरत जो कुछ कमायगी वह उसी का होगा! अल्लाह से दुआ मांगो कि वह तुम्हें अपनी नियामतें दे। सचमुच अल्लाह सब जानता है।" (४-३२)।

फिर भी औरतों और बच्चों को पालना मर्द का फ़र्ज़ बताया गया है। और माँ का फ़र्ज़ बताया गया है कि पूरे दो साल तक बच्चे को दूध पिलावे। (२-२३३;४-३४)।

अगर मर्द औरत में कोई झगड़ा हो तो क़ुरान का हुक्म है कि "एक पंच ख़ाविन्द की तरफ़ से और एक पंच बीवी की तरफ़ से बैठ कर दोनों में सुलह करा दें, क्योंकि अल्लाह मेल में मदद देता है।" (४-३५)। और "फिर से मेल कर लेना बड़ी अच्छी चीज़ है।" (४-१२८)। इस पर भी अगर किसी तरह दोनों में न बने तो क़ुरान ख़ास हालतों में और कड़ी शर्तों के साथ तलाक़ की यानी दोनों को अलग हो जाने की भी इजाज़त देता है। लेकिन किसी ऐसी औरत को तलाक़ नहीं दिया जा सकता जिसके पेट में बच्चा हो (६५-४)। तलाक़ दी हुई औरत के लिए उसके गुज़र बसर का ठीक ठीक कर देना तलाक़ देने वाले आदमी का फ़र्ज़ है (२-२४१)। "मर्द का फ़र्ज़ है कि औरत को इनसाफ़ और नेकी के साथ रखे और जब किसी तरह न बन सके तो प्रेम के साथ और खुले दिल से अलग करे।" (२–२३१ वग़ैरह)। साथ ही औरत को तलाक़ माँगने का उतना ही हक़ है जितना मर्द को। लेकिन तलाक़ की इजाज़त होते हुए भी मुहम्मद साहब की एक बड़ी मशहूर हदीस है—

"जितनी बातों की आदमी को इजाज़त दी गई है, उन सब में अल्लाह को सब से ज़्यादह नफ़रत तलाक़ से है।" (अबु दाऊद)।

दोनों में से किसी एक के मर जाने पर मर्द या औरत दोनों को दूसरी शादी करने की एक बराबर इजाज़त क़ुरान में है। (२-२३४)।

क़ुरान में मर्द को एक से ज्यादह, और बहुत से बहुत चार तक शादी करने की भी इजाज़त है। लेकिन जिस आयत में यह इजाज़त दी गई है वह ओहद की मशहूर लड़ाई के ठीक बाद की है। उस वक़्त बहुत से मुसलमान मर्द लड़ाई में मर चुके थे। बेवाओं और यतीमों की तादाद बढ़ी हुई थी। बेवाओं के लिए अपने यतीम बच्चों को पाल सकना बहुत मुशकिल हो रहा था। उन सब के गुज़र बसर का कोई न कोई ठीक बन्दोबस्त करना ज़रूरी था। देश में औरतें ज्यादह थीं और मर्द कम। आगे भी इसी तरह की लड़ाइयाँ होने वाली थीं। इन हालतों में जो आयत उतरी वह यह है—

"और अगर तुम्हें यह डर है कि तुम इसके बिना यतीमों के साथ इनसाफ़ (यानी उनकी परवरिश) नहीं कर सकते, तो जो औरतें तुम्हें ठीक जँचें उनमें से दो के साथ या तीन के साथ या बहुत से बहुत चार के साथ शादी कर सकते हो। लेकिन अगर तुम्हें यह डर है कि तुम अपनी उन सब बीबियों के साथ एकसा इनसाफ़ का बरताव नहीं कर सकोगे, तो सिर्फ़ एक के साथ शादी करो, या जिनसे अब तक कर चुके सो कर चुके। सिर्फ़ एक से शादी करना तुम्हारे लिये ज़्यादह ठीक है, ताकि तुम दीन यानी धर्म के सीधे रास्ते से न डिगो।" (४-२)।

एक और जगह आता है—

"और अगर तुम चाहो भी तो यह तुम्हारी ताक़त से बाहर है कि कई बीवियों के साथ एक बराबर इनसाफ़ का बरताव कर सको।" (४-१२९)।

इस तरह अरब की एक ख़ास हालत में बहुत से बहुत चार शादियों की इजाज़त देते हुए भी .कुरान एक मर्द के लिए एक औरत के रिवाज को ही पसन्द करता है।

.कुरान में बदचलनी को, मर्दों और औरतों दोनों के लिये, सख़्त गुनाह बताया गया है। बदचलनी की सज़ा यह है कि .कुसूरवार को सब के सामने १०० कोड़े लगाये जावें। पाक मुसलमानों के लिए बदचलनी करने वाले मर्द या औरत से शादी करना मना किया गया है। साथ ही किसी औरत पर बदचलनी का झूठा इल्ज़ाम लगाने की सज़ा ८० कोड़े लिखी है।(२४-२ से ४)। ईश्वर से यह दुआ मांगने का हुकुम दिया गया है कि वह आदमी को शैतान के फन्दों, गन्दी बातों और बदचलनी से बचावे और उसकी ज़िन्दगी को पाक रखे। (२४-२१)। पाक जीवन यानी नेक चलनी कुंआरे और ग़ैर शादी शुदा लोगों, मालिकों और .गुलामों, सबके लिए ज़रूरी बताया गया है। (२४-३२,३३)।

.कुरान की जिन आयतों से परदे की बाबत हां या नहीं का कोई हुकुम निकल सकता है, वे ये हैं—

"ऐ नबी ! अपनी बीवियों और अपनी लड़कियों और मुसलमान

औरतों से कह दो कि चादरें ओढ़ लिया करें। यह ज़्यादह मुनासिब होगा। ताकि वे पहचानी जा सकें और कोई उन्हें तकलीफ़ न दे, और अल्लाह माफ़ कर देने वाला और दयावान है।" (३३-५९)।

"जो मर्द तुम्हारी (मुहम्मद की) बात पर ईमान ले आए हैं उनसे (यानी मुसलमान मर्दों से) कह दो कि (आते जाते) अपनी आँखों को हमेशा नीची रखें और शर्म से काम लें, इससे उनका जीवन ज़्यादह पाक रह सकेगा। सचमुच जो कुछ वे करते हैं ईश्वर सब जानता है।

"और जो औरतें तुम्हारी बात पर ईमान ले आई हैं उनसे कह दो कि (आते जाते) अपनी आँखों को हमेशा नीची रखें, और शर्म से काम लें, और अपनी 'ज़ीनतों' गहनों वग़ैरह का दिखावा न करें, सिवाय उन 'ज़ीनतों' के जो ऊपर दिखाई देते हैं, और अपनी छातियों पर ओढ़नियां डाल लिया करें, और सिवाय अपने ख़ाविन्द, बाप, ख़ाविन्द के बाप, बेटों, ख़ाविन्द के बेटों, भाइयों, भाई के बेटों, बहन के बेटों, या औरतों, या नौकरों या ख़ोजा मर्द नौकरों, या छोटे मासूम बच्चों के और किसी के सामने अपनी 'ज़ीनतों' का दिखावा न करें। और पांव को इस तरह धरती पर पटक कर न चलें कि जो गहने वग़ैरह उन्होंने छिपाए हैं वह ज़ाहिर हो जावें, और ऐ ईमान वालो! तुम सब अल्लाह की पनाह लो, ताकि तुम्हारा भला हो।"
(२४-३०,३१)।

इस तरह क़ुरान में निगाह नीची रखने और शर्म से काम लेने का मर्दों और औरतों दोनों को एक सा हुक्म है। औरतों

को यह भी हुकुम है कि अपनी सजावट की चीज़ों का दिखावा न करें। लेकिन क़ुरान के मुताबिक़ न औरतों का घरों की चार दीवारी में बन्द रहना ज़रूरी है और न मुँह और हाथ यानी उन हिस्सों को ढकना ज़रूरी है जो मामूली काम काज, चलने फिरने में "ऊपर दिखाई देते हैं।"

अच्छे कामों के बदले में जन्नत और निजात यानी (मोक्ष) का वादा क़ुरान में औरतों और मर्दों दोनों के लिए बारबार किया गया है। (३-१९४;४-१२४;६-७२;१६-६७)।

"सचमुच जिन मर्दों ने अपने को अल्लाह की मरज़ी पर छोड़ दिया है और जिन औरतों ने अपने को अल्लाह की मरज़ी पर छोड़ दिया है, जो मर्द ईमान लाये हैं और जो औरतें ईमान लाई हैं, जो मर्द अल्लाह का हुकुम मानते हैं और जो औरतें अल्लाह का हुकुम मानती हैं, जो मर्द सच्चे हैं और जो औरतें सच्ची हैं, जो मर्द सब्र से काम लेते हैं और जो औरतें सब्र से काम लेती हैं, जो मर्द आजज़ी यानी दीनता से काम करते हैं और जो औरतें दीनता से काम करती हैं, जो मर्द दान देते हैं और जो औरतें दान देती हैं, जो मर्द रोज़े रखते हैं और जो औरतें रोज़े रखती हैं जो मर्द अपनी ख़्वाहिशों यानी वासना को क़ाबू में रखते हैं और जो औरतें अपनी ख़्वाहिशों को क़ाबू में रखती हैं, जो मर्द अल्लाह को बहुत बहुत याद करते हैं और जो औरतें अल्लाह को बहुत बहुत याद करती हैं,—अल्लाह ने उन सब के लिए माफ़ी और बहुत बड़ा इनाम तय्यार कर रखा है।" (३३-३५)।

जेहाद

'जेहाद' शब्द क़ुरान में अलग अलग शक्लों में जगह जगह आया है। 'जेहाद' के आमतौर पर माइने यह हैं— "किसी ऐसी चीज़ के साथ जो ठीक न हो अपनी हद दर्जे की ताक़त लगाकर उसे ठीक करने की कोशिश करना,"[1] यानी किसी भी काम में "जहो जेहद करना यानी सख्त कोशिश करना।"[2]

क़ुरान में जगह जगह 'जेहाद फ़ी सबी लल्लाह' आया है, जिसके माइने हैं 'अल्लाह की राह में कोशिश करना।' इसलाम के शुरू के दिनों में, क़ुरैश के ज़ुल्मों से अपनी जान और अपने धर्म को बचाने के लिए जो मुसलमान अपने वतन मक्के से भाग कर इथियोपिया चले गये थे, उनके इस काम को क़ुरान में 'अल्लाह की राह में अपनी जान और अपने माल से जेहाद करना' कहा गया है (८-७२,७४,७५)।

इस जेहाद का किसी क़िस्म के भी हथियारों या लड़ाई से कोई वास्ता नहीं। उस वक़्त तक मुसलमानों को जंग की इजाज़त भी नहीं दी गई थी। बल्कि मुसलमानों को हुकुम था कि अपने दुशमनों के ज़ुल्मों को बिना किसी क़िस्म का बदला लिये शान्ति और सब्र के साथ बर्दाश्त करें और जहां तक बन पड़े 'बुराई का बदला भलाई से दें।"

१—मुफ़रदात—इमाम राग़िब, ताज-उल-अरूस

२—ग़रीबुल क़ुरान—मिर्ज़ा अबुल फ़ज़ल

ख़ुद मुहम्मद साहब को क़ुरान में कई मर्तबा हुक्म दिया गया है कि जिन लोगों ने अभी तक उनकी बात नहीं मानी या जो मुसलमान हो चुके थे और फिर भी सच्चे और साफ़ दिल से पैग़म्बर का साथ नहीं दे रहे थे, उन सबके साथ 'जेहाद' जारी रखें यानी प्रेम से समझाने बुझाने की कोशिश में ढील न आने दें (६-७३; ६६-६)। यहाँ भी जेहाद शब्द से किसी क़िस्म का कोई ताल्लुक़ हथियार बन्द लड़ाई से नहीं है। ख़ास कर उन मुसलमानों के ख़िलाफ़ जिनका इन आयतों में ज़िक्र है, न कभी किसी को हथियार उठाने की इजाज़त दी गई और न कभी किसी ने हथियार उठाए।

इन आयतों के बारे में मौलवी मुहम्मद अली ने अपनी मशहूर किताब The Holy Quran में लिखा है—

"यहां 'जेहाद' के माइने 'तलवार की लड़ाई' करना अरबी ज़बान से बिलकुल नावाक़फ़ियत ज़ाहिर करना है।"

ऐसे ही २५ वें सूरे की ५२ वीं आयत में मुहम्मद साहब को हुक्म दिया गया है कि—"लोगों के साथ क़ुरान के ज़रिये 'जेहाद कबीरा' ज़बर्दस्त जेहाद करो," जिसका मतलब यह है कि 'अपनी पूरी ताक़त के साथ उनमें क़ुरान की तालीम फैलाओ और उन्हें समझाओ' इस पर मौलवी मुहम्मद अली ने लिखा है—

"इस आयत से साफ़ साबित हो जाता है कि जेहाद शब्द क़ुरान पाक में किन माइनों में इस्तेमाल किया गया है। यह मानी हुई बात है

कि यह सूरत मक्के के ज़माने की है और इसका जंग से कोई ताल्लुक़ नहीं है। इस आयत के मुताबिक़ सचाई का प्रचार करने की जो भी कोशिश की जाय वह सिर्फ़ जेहाद ही नहीं बल्कि 'जेहाद कबीरा' यानी बड़ा जेहाद है।••• .कुरान के सब टीकाकार जैसे बैज़ावी, इमाम असीरुद्दीन, अबु हय्यान वग़ैरह इस आयत में जेहाद शब्द के यही माइने करते हैं।"[1]

जो लोग अपने दुश्मनों के .ज़ुल्म से बचने के लिए भाग कर किसी दूसरी जगह चले जावें लेकिन सचाई को न छोड़ें और सब्र के साथ अपने धर्म पर डटे रहें, उनके इस काम को भी .कुरान में बार बार जेहाद कहा गया है (१६-११०)। इसी तरह दान देना, ग़रीबों और यतीमों को पालना, दूसरों की मदद करना, मुसीबतें बर्दाश्त करना, इन सब को 'अल्लाह की राह में जेहाद' बताया गया है। मुहम्मद साहब की एक मशहूर हदीस है कि "सब से बड़ा जेहाद अपने नफ़्स पर क़ाबू हासिल करना यानी अपने .ग़ुस्से और अपनी ख्वाहिशों (वासनाओं) को जीतना है।" इसी को, यानी अपने नफ़्स पर क़ाबू रखने को ही, अरबी ज़बान में और आमतौर पर मुसलिम किताबों में 'जेहाद अकबर' यानी सब से बड़ा जेहाद माना गया है।[2]

---

[1] *.कुरान—मौलवी मुहम्मद अली, सफ़ा—७२१*

[2] *लुग़त फ़ीरोज़ी वग़ैरह*

मुसलमानों में अभी तक धर्म के इस तरह के कामों, जैसे नमाज़ पढ़ना, रोज़े रखना, दान देना वग़ैरह, में बहुत ज्यादह वक्त और मेहनत खर्च करने को 'मुजाहेदा' कहा जाता है।

जहां तक जेहाद शब्द का क़ुरान के साथ ताल्लुक़ है नीचे लिखी तीन बातें पूरे यक़ीन के साथ कही जा सकती हैं—

(१) क़ुरान में जेहाद शब्द जगह जगह ऐसे मौक़ों पर इस्तेमाल किया गया है जहां हथियार उठाने या लड़ने से किसी तरह का कोई ताल्लुक़ नहीं है, और धर्म के मामले में हर जायज़ कोशिश को जेहाद कहा गया है।

(२) क़ुरान भर में किसी एक ऐसी जगह भी जहां साफ़ साफ़ मतलब सिर्फ़ लड़ने या हथियार उठाने से हो जेहाद शब्द का इस्तेमाल नहीं किया गया।

(३) खास हालतों में क़ुरान के अन्दर अपने धर्म की हिफ़ाज़त के लिये हथियार उठाने या लड़ने की इजाज़त भी दी गई है। लेकिन जहाँ कहीं इसका ज़िक्र आया है वहां 'जेहाद' शब्द इस्तेमाल नहीं किया गया, सिर्फ़ 'क़ेताल' शब्द इस्तेमाल किया गया है (२-१९० से १९५,२१६;४-७४,७५,८४,९०,९४; ६१-४)*।

---

* इस मज़मून पर मौलवी चिराग़ अली की किताब "जेहाद" और मौलाना अबुल कलाम आज़ाद की किताब "अल जेहाद फ़िल इसलाम" ख़ासतौर पर देखने के क़ाबिल हैं।

आक़्बत, आख़रत, जन्नत और दोज़ख़

आक़्बत और आख़रत—ये दोनों शब्द .कुरान में जगह जगह मरने के बाद की ज़िन्दगी यानी परलोक के माइनों में भी आए हैं और आदमी के अच्छे बड़े कामों के नतीजों के माइने में भी आए हैं। कई जगह आक़्बत शब्द इसी ज़िन्दगी के अन्दर आदमी के अच्छे और बुरे कामों के अच्छे और बुरे नतीजों के माइने में भी आया है (१०–७३)।

जन्नत (स्वर्ग) और जहन्नुम (दोज़ख़ या नरक) इन दोनों का भी .कुरान में बहुत जगह ज़िकर आता है। मुसलमान आलिमों की राय इस बारे में अलग अलग है कि जन्नत में या दोज़ख़ में आत्मा हमेशा के लिए रहती है या सिर्फ़ कुछ ख़ास वक़्त के लिए। लेकिन ज़्यादहतर आलिम यही कहते हैं कि

"किसी रूह के हमेशा तक दोज़ख़ में रहने का ख़्याल .कुरान के ख़िलाफ़ है[1]।"

मुहम्मद साहब की इस तरह की हदीसें भी मशहूर हैं जैसे—

"सचमुच एक दिन आवेगा जब कोई आदमी दोज़ख़ के अन्दर न रह जावेगा।"[२]

.कुरान की कुछ आयतों से यह भी मालूम होता है कि .कुरान के अन्दर जन्नत और दोज़ख़ के ख़्याल आदमियों के

1—The Holy Quran by Mohammad Ali, p. 472.

२—*कंजुल-अम्माल, जिल्द ७, सफ़ा २४५*

अच्छे और बुरे कर्मों के नतीजों को साफ़ साफ़ दिखाने के लिए सिर्फ़ एक 'तशबीह', मिसाल या अलंकार के तौर पर हैं। (१४-२४,२५,२६)।

ऊपर की इन आयतों का ज़िक्र करते हुये मौलवी मुहम्मद अली ने लिखा है—

"इससे हमें इस्लाम की जन्नत की असलियत का पता चलता है। हर नेक बात या हर नेक काम एक अच्छे दरख़्त की तरह है जो हर मौसम में फल देता रहता है। यानी जन्नत में आदमी को जो फल मिलेंगे और जो हर वक्त उसकी पहुँच में रहेंगे, वे सिवाय आदमी के अपने नेक कामों के नतीजों के और कोई चीज़ नहीं हैं। जन्नत के दरख़्त हक़ीक़त में आदमी के अपने नेक काम हैं जो दरख़्तों की तरह इस ज़िन्दगी के नेक कामों के रूहानी नतीजों की शकल में फल देते रहते हैं। यह भी ख़याल रखना चाहिये कि क़ुरान पाक में जब कि नेक कामों की मिसाल फलदार दरख़्तों से दी गई है, ईमान यानी धार्मिक विश्वास की मिसाल बार बार पानी या नहरों से दी गई है। हमारी जिस्मानी ज़िन्दगी पानी ही से निकली है और उसी से क़ायम है। इसीलिए क़ुरान में जब कि नेक आदमियों के लिए हमेशा यह कहा गया है कि ये ईमान लाते हैं और नेकी करते हैं, जन्नत को हमेशा इस तरह बयान किया गया है कि वह 'एक बाग़ है जिसमें नहरें बहती हैं।' यहाँ नहरों से मतलब ईमान यानी विश्वास से है और बाग़ के दरख़्तों से मतलब आदमी के नेक कामों से।"*

*The Holy Quran, p. 517, Note.

क़ुरान के ४७वें सूरे यानी सूरे 'मुहम्मद' में जहां जन्नत के अन्दर तरह तरह की नहरों और हर तरह के फलों का और दोज़ख के अन्दर खौलते हुए पानी का ज़िक्र किया गया है, वहाँ भी इस सब को सिर्फ़ "तसलीम" यानी मिसाल बताया गया है। (४७-१५)।

कहीं कहीं उन दुःखों को जिन्हें लोग इस दुनिया के अन्दर बुरे कामों के फल की शकलों में भोग चुके हैं जहन्नुम की आग बताया गया है (४०-६, ८२)।

कई जगह नेक कामों के बदले में इसी दुनिया के बाग़ों वग़ैरह को जन्नत नाम दिया गया है (५५-४६)। मुहम्मद साहब की एक मशहूर हदीस है जिसमें उन्होंने मिस्र, इराक़ और ईरान के दरियाओं को 'जन्नत की नहरें' कहा है।*

जन्नत के साथ साथ 'हूर' शब्द भी क़ुरान में कम से कम चार जगह आया है। हूर शब्द, पुल्लिङ्ग अहवर और स्त्रीलिङ्ग 'हौरा' दोनों का बहुवचन है, और मर्द और औरतों दोनों के लिए आता है। जन्नत का वादा भी क़ुरान में नेक मर्दों और नेक औरतों दोनों के लिए एक बराबर किया गया है। जिन शब्दों में कई जगह हूरों का बयान किया गया है उनसे मालूम होता है कि दुनियावी ख्वाहिशों या वासनाओं के साथ हूर शब्द का कोई ताल्लुक़ नहीं है। (४४-५४; ३७-४८; ५६-३६)।

---

* मुसलिम, जिल्द २, सफ़ा ३५१

"ज़ाहिरा देखने में जो एक औरत का वर्णन मालूम होता है, वह असल में इस ज़िन्दगी के कामों के नतीजों का वर्णन है। जो शब्द इस्तेमाल किये गये हैं वे दोनों तरफ़ लग सकते हैं। ये रूहानी बरकतें हैं जिन्हें मोटे जिस्मानी ढंग से दिखाया गया है। क़ुरान में कहीं भी यह नहीं लिखा कि मौत के बाद की ज़िन्दगी यानी परलोक में मर्द औरत का इसी तरह ताल्लुक़ रहता है। जिन बरकतों का वादा किया गया है, वे और चाहे कुछ भी न हों मर्दों और औरतों दोनों के लिए एक बराबर हैं। उनकी बाबत पक्की बात सिर्फ़ यही कही जा सकती है कि इस ज़िन्दगी के जिस्मानी सुखों से उनका कोई ताल्लुक़ नहीं, दोनों चीजें दो बिलकुल अलग अलग तरह की चीज़ें हैं।"*

मुहम्मद साहब की एक हदीस है—

"अल्लाह कहता है कि अपने नेक बन्दों के लिए अल्लाह ने जो नेक फल तय्यार कर रखे हैं उनका न इन आँखों के देखने से कोई ताल्लुक़ है, न इन कानों के सुनने से, और न इनसानी दिल या दिमाग़ के किसी अहसास, अनुभव या कल्पना से।" (बुख़ारी)।

क़ुरान को ग़ौर से पढ़ने से कम से कम एक राय यह ज़रूर हो सकती है और इसके लिए काफ़ी गुंजाइश है कि क़ुरान के अन्दर जन्नत और दोज़ख़ के ख़याल सिर्फ़ मिसाल के तौर पर हैं और जिस्मानी सुख दुःखों के साथ उनका कोई ताल्लुक़ नहीं है।

---

*Holy Quran by Mohammad Ali, p. 870, note

जन्नत के माइने अरबी में 'बाग़' यानी 'आराम की जगह' हैं और 'जहन्नुम' यरुसलम के पास का वह मोहल्ला था जहां किसी ज़माने में आग की पूजा करने वाले रहा करते थे। 'जहन्नुम' का मतलब 'आग' या तकलीफ़ की जगह है। 'दोज़ख़' फ़ारसी शब्द है जिसका वही निकास है जो संस्कृत 'दु:ख' का। फ़ारसी शब्द 'फ़िरदौस' अंगरेज़ी 'पैरेडाइज़' और संस्कृत 'प्रादेश्य' एक ही शब्द हैं। पुराने ईरानी अपने शहर से बाहर के बाग़ों को 'प्रादेश्य' या 'परदौस' कहा करते थे। उसी से 'फ़िरदौस' और 'पैरेडाइज़' शब्द बने।